इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

BHDE - 142
राष्ट्रीय काव्यधारा

खंड-2

राष्ट्रीय काव्यधारा

इकाई 8
मैथिलीशरण गुप्त और उनकी कविता **197**

इकाई 9
माखनलाल चतुर्वेदी और उनकी कविता **226**

इकाई 10
सुभद्रा कुमारी चौहान और उनकी कविता **251**

इकाई 11
बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' और उनकी कविता **279**

इकाई 12
रामधारी सिंह दिनकर और उनकी कविता **296**

इकाई 13
श्यामनारायण पाण्डेय और उनकी कविता **310**

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खंड 2 का परिचय

'राष्ट्रीय काव्यधारा' के द्वितीय खंड में आपका स्वागत है। यह खंड अपने काव्य के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना का प्रसार करने वाले महत्वपूर्ण कवियों के व्यक्तित्व और कृतित्व के अध्ययन पर केन्द्रित है।

'इकाई – 8 मैथिलीशरण गुप्त और उनकी कविता' के अंतर्गत आप मैथिलीशरण गुप्त के जीवन, युगीन परिवेश और काव्यगत विकास का अध्ययन करेंगे। साथ ही उनकी कविता के भाव पक्ष और संरचना शिल्प का भी परिचय प्राप्त करेंगे।

'इकाई – 9 माखनलाल चतुर्वेदी और उनकी कविता' में आप राष्ट्रीय काव्यधारा के प्रमुख हस्ताक्षर माखनलाल चतुर्वेदी के जीवन परिचय, पत्रिकारिता कर्म, भाव पक्ष और रचना शिल्प से परिचित होंगे। इकाई–10 इनके व्यक्तित्व और कृतित्व के अध्ययन पर केन्द्रित है। इकाई –11 बालकृष्ण शर्मा नवीन, इकाई – 12 रामधारी सिंह दिनकर और इकाई –13 श्यामनारायण पाण्डेय के जीवन परिचय और कवि कर्म के विश्लेषणात्मक अध्ययन पर आधारित है। सुभद्रा कुमारी चौहान राष्ट्रीय काव्यधारा की महत्वपूर्ण कवयित्री है।

इन इकाइयों के अध्ययन के फलस्वरूप आप राष्ट्रीय काव्यधारा की वैचारिक और रचनात्मकता से भलीभांति परिचित हो सकेंगे, साथ ही इन महत्वपूर्ण कवियों की कविता के भाव पक्ष और संरचना पक्ष को समझने में सक्षम होंगे।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 8 मैथिलीशरण गुप्त और उनकी कविता

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 जीवन और साहित्य

8.2.1 युगीन परिवेश और भारतीय नवजागरण

8.2.2 आधुनिक हिन्दी काव्य चेतना

8.3 भाव पक्ष

8.3.1 अतीत का आधार (इतिहास बोध)

8.3.2 नारी सम्मान की भावना

8.3.3 मानवतावादी दृष्टिकोण

8.3.4 राष्ट्रीय भावना और समाज सुधार का स्वर

8.4 संरचना शिल्प

8.4.1 काव्य भाषा

8.4.2 काव्य–शिल्प

8.5 मूल्यांकन

8.6 शब्दावली

8.7 उपयोगी पुस्तकें

8.8 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

8.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप मैथिलीशरण गुप्त के काव्य का अध्ययन करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- गुप्त जी के जीवन और उनकी रचनाओं के बारे में बता सकेंगी/सकेंगे;
- हिंदी नवजागरण के उद्भव और विकास के कारणों को बता सकेंगी/सकेंगे;
- आधुनिक हिंदी काव्य चेतना के विकास को समझ सकेंगी/सकेंगे;
- राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक चेतना और सांस्कृतिक द्विवेदी युग के प्रमुख कवियों के विषय में बता सकेंगी/सकेंगे;
- गुप्त जी के काव्य में हिंदी नवजागरण की चेतना के विकास को समझा सकेंगी/सकेंगे;
- गुप्त जी की राष्ट्रीय भावना और सामाजिक चेतना की व्याख्या कर सकेंगी/सकेंगे;
- गुप्त जी की मानवतावादी दृष्टि का वर्णन कर सकेंगी/सकेंगे;
- गुप्त जी की नारी सम्मान भावना का वर्णन कर सकेंगे /सकेंगी;

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

- गुप्त जी के खड़ी बोली के विकास में योगदान के बारे में बता सकेंगी/सकेंगे;
- गुप्त जी की काव्य विशेषताओं को बता सकेंगी/सकेंगे; और
- ''साकेत'' और ''यशोधरा'' के पठित पद्याशों की व्याख्या कर सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

इस इकाई में आप द्विवेदी मंडल के प्रमुख कवि मैथिलीशरण गुप्त के काव्य का अध्ययन करेंगे। भारतीय नवजागरण के विकास में गुप्त जी का योगदान और उसे निश्चित दिशा में देने में उनकी जो महत्वपूर्ण भूमिका रही है, इसकी चर्चा करेंगे तथा नवजागरण से जिन विभिन्न प्रवृत्तियों का उद्‌भव हुआ, उनकी अभिव्यक्ति गुप्त जी के काव्य में किस रूप में हुई है। गुप्त जी के काव्य में युग–चेतना तीन स्तरों पर अभिव्यक्त हुई है। प्रथम उनकी अतीत गौरव–गान में दूसरे गांधीवादी विचारों की प्रस्तुति में और तीसरे मानवतावादी धरातल पर विश्व राज्य की कल्पना में।

अतीत गौरव गान के द्वारा गुप्त जी ने राष्ट्रीय चेतना को जगाने का कार्य किया जिसके लिए पौराणिक, ऐतिहासिक कथानकों का आधार लेकर अतीत के गौरवशाली चित्र को जनमानस के समक्ष साकार किया। जिससे हीनता की भावना से मुक्त होकर स्वाधीन भारत का सुनहरा सपना देखा जाए। राष्ट्रीय आंदोलन को जब महात्मा गांधी का नेतृत्व प्राप्त हुआ तो गांधीवादी विचारों का प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा। गांधीवादी प्रभाव को ग्रहण करते हुए गुप्त जी ने राष्ट्रवादी चिन्तन को विश्व–व्यापी मानवतावादी आयाम दिया। गांधी जी के सत्य और अहिंसा के सिद्धांत को गुप्त जी ने बीज मंत्र के रूप में ग्रहण किया है। तत्कालीन युग चेतना को स्वर देते हुए समाज में नारी की दयनीय स्थिति के प्रति चिंता व्यक्त करते हुए साहित्य में उपेक्षित नारियों की वेदना को अभिव्यक्त किया। गुप्त जी ने दबी हुई नारियों में आत्मविश्वास का भाव जगाया है, उन्हें अबला के स्थान पर सबला बनाया है। दलित, किसान, शोषितों की सोचनीय स्थिति पर प्रकाश डालकर उनके उद्धार की आवश्यकता और उनके आर्थिक, सामाजिक अधिकारों की मांग की। उत्पीड़न और शोषण के विरूद्ध उनका काव्य आक्रोश कर उठता है। सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना के रूप में सर्व–धर्म समभाव और धार्मिक एकता की आवश्यकता पर ज़ोर दिया। गुप्त जी की साहित्यिक यात्रा राष्ट्रीयता और विश्व मानवता की एक लम्बी यात्रा है। आईए, हम गुप्त जी के काव्य का विस्तार से अध्ययन करें।

8.2 जीवन और साहित्य

मैथिलीशरण गुप्त का जन्म 3 अगस्त, सन् 1886 को चिरगांव (झांसी– उत्तर प्रदेश) के एक वैश्य परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम सेठ रामचरण और माता का श्रीमती काशीबाई था। सेठ रामचरण धार्मिक प्रवृत्ति के पुरूष थे। धार्मिक कथा–वार्ता, भजन–पूजन उनका दैनिक नियम था। स्वभावतः गुप्त जी पर भी इस वातावरण का प्रभाव पड़ा। गुप्त जी की आरंभिक शिक्षा झांसी के राजकीय विद्यालय में हुई। परन्तु उनका मन विद्यालय से अधिक घर में रमता था। अतः झांसी से लौटने पर स्वतंत्र रूप से संस्कृत, हिंदी तथा बंगला साहित्य का अध्ययन किया। धीरे–धीरे कथा साहित्य तथा उपन्यास आदि में रूचि बढ़ने लगी। इतिहास, पुराण आदि के साथ संस्कृत के काव्य और नाटकों का भी इन्होंने अध्ययन किया। कालिदास गुप्त जी के अत्यन्त प्रिय कवि थे। अंग्रेज़ी सीखने का प्रयत्न भी किया परन्तु उसमें विशेष गति नहीं रही।

गुप्त जी के पिता की कविता करने में रूचि थी। उन्होंने ''कवितावली'' के अनुकरण पर कुछ सवैये लिखे थे। लिखने के बाद वे मैथिलीशरण गुप्त को पढ़ने के लिए देते, तब गुप्त जी उसे पढ़कर उसमें कुछ संशोधन सुझाते थे, उनके पिता इस पर बहुत हर्षित होते और पुत्र की बात को मानते। तभी से गुप्त जी ने कविता लेखन की प्रेरणा अपने पिता से ग्रहण की। इनके पिता भक्त, कवि, कलाविद् और छन्द–शास्त्र के ज्ञाता थे। इन सबका प्रभाव कवि के मन पर पड़ना स्वाभाविक था। उन्होंने पन्द्रह–सोलह वर्ष की अवस्था में ही अपने पिता की काव्य शैली का अनुकरण करना प्रारंभ किया।

गुप्त जी का पारिवारिक जीवन अधिक सुखी नहीं रहा। इनकी दो पत्नियों की असमय मृत्यु हुई। उनकी तीसरी पत्नी सरयू देवी और उनके एकमात्र पुत्र श्री उर्मिलाशरण गुप्त हैं, जिन्होंने प्रकाशन आदि का कार्यभार संभाला है। गुप्त जी ने अधिकतर जीवन एकान्त काव्य साधना में रहकर बिताया। उनका स्वभाव संकोचशील होने के कारण सार्वजनिक समारोह आदि से वे दूर ही रहते थे। उन्हें अपने परिवार में सभी प्रकार का मान–सम्मान प्राप्त हुआ। कवि की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर महात्मा गांधी ने उन्हें 'मैथिली काव्य मान' ग्रंथ भेंट करते हुए 'राष्ट्रकवि' की उपाधि से सम्मानित किया। 1936 में साकेत के लिए हिन्दुस्तानी एकेडमी पुरस्कार और 1938 में मंगलाचरण पारितोषिक प्राप्त हुआ। 1946 में 'हिंदी साहित्य सम्मेलन' ने उन्हें 'साहित्य वाचस्पति' से अलंकृत किया। 1948 में आगरा विश्वविद्यालय और 1960 में काशी विश्वविद्यालय ने डी.लिट् की मानद उपाधि देकर उन्हें सम्मानित किया। 1952 में गुप्त जी राज्यसभा के सदस्य मनोनीत हुए। 1954 में 'पद्मभूषण' से उन्हें सम्मानित किया गया। इसी वर्ष 12 दिसंबर 1964 को गुप्त जी का देहान्त हुआ। सुप्रसिद्ध कवि सियारामशरण गुप्त, गुप्त जी के छोटे भाई थे।

रचनाएँ :

मैथिलीशरण गुप्त की काव्य रचनाओं की संख्या 34 के आसपास है। गुप्त जी सततः रूप से 50 वर्षों तक काव्य लेखन करते रहे। मूल काव्य रचनाओं के अलावा, गुप्त जी ने उर्दू, संस्कृत और बंगला के ग्रंथों का हिंदी में अनुवाद किया है। उनकी संख्या लगभग 9 है।

गुप्त जी के काव्य रचनाओं की सूची।

काव्य संग्रह

1. जयद्रथ बध	14. झंकार	27 पृथ्वीपुत्र
2. रंग में भंग	15. साकेत	28.जयभारत
3. भारत–भारती	16. यशोधरा	29. दिवोदास
4. किसान	17. मंगलधर	30. राजा और प्रेम
5. वैतालिक	18. द्वापर	31. विष्णुप्रिया
6. शकुन्तला	19. सिद्धराज	32. जयिनी
7. पंचवटी	20. नहुष	33. रत्नावली
8. अवध	21. कुणालगीत	34. लीला
9. स्वदेश संगीत	22. विश्ववेदना	35. उच्छ्वास
10. हिन्दू	23. काबा और कर्बला	36. पद्यप्रबंध
11. त्रिपथगा	24. अजित	37. पत्रावली
12. गुरूकुल	25. प्रदक्षिण	
13 विकटभट	26. अंजलि और अर्ध्य	

अनुवाद ग्रन्थ

विरहिणी वज्रांगना, मेघनाथ वध, प्लासी का युद्ध, रूबाइयात उमर खय्याम, स्वप्नवासवदत्रा, दूत घटोत्कच, गीतामृत, वृत्र संहार, वीरांगना।

8.2.1 युगीन परिवेश और भारतीय नवजागरण

मैथिलीशरण गुप्त आधुनिक हिंदी काव्य जगत् में राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना के प्रतिनिधी कवि हैं। उनका सम्पूर्ण काव्य उस युग के राष्ट्रीय और सांस्कृतिक चेतना विकास के प्रत्येक चरण में प्रभाव ग्रहण करता गया और हिंदी नवजागरण को अपना योगदान देता रहा।

गुप्त जी के काव्य में व्यक्त युगीन संदर्भों को समझने के लिए उस समय की राष्ट्रीय, सांस्कृतिक और सामाजिक परिस्थितियों को समझना आवश्यक है। 19वीं शताब्दी में मध्यकालीन सामन्तवादी विचारधारा और जीवन पद्धति के विरोध में नयीं विचारधारा का उदय हुआ। अंग्रेज़ी शासन द्वारा संचालित स्कूलों, कॉलेजों और इसाई मिशनरियों द्वारा पाश्चात्य ज्ञान–विज्ञान और धर्म–दर्शन का प्रचार हो रहा था। इस पाश्चात्य ज्ञान–विज्ञान के आक्रमण से शताब्दियों से कमज़ोर और सोई हुई भारतीय सांस्कृतिक चेतना को जगाया। अपने अतीत को फिर से पहचानने के लिए विवश किया। जागृत भारतीय जनमानस ने यह अनुभव किया कि पश्चिम के विचार और उसकी जीवन–पद्धति में उसके ज्ञान–विज्ञान को छोड़कर ऐसी कोई विशेषता नहीं है जिसको आत्मसात किया जाए। भारतीय आदर्श, रीति–नीति, परंपरा और गौरव के प्रति जनमानस में श्रद्धा उत्पन्न होने लगी और इस अतीत गौरव से भविष्य के लिए शक्ति प्राप्त करना आरम्भ किया। पराधीनता के कारण जो आत्महीनता का भाव जनता में आया था वह दूर होकर उनमें आत्मविश्वास पैदा हुआ। इसमें सांस्कृतिक पुनरूत्थान की प्रक्रिया को बल मिला। सांस्कृतिक तथा सामाजिक नवजागरण में सामाजिक सुधारकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। राजा राममोहन राय ने ब्रह्म समाज की स्थापना द्वारा हिंदु धर्म को रूढ़ियों और आडम्बरों से मुक्त करके उसे शुद्ध रूप से अपनाने का आग्रह किया। प्राचीन परंपराओं से मुक्ति दिलाकर आधुनिकता की ओर ले जाने का उनका प्रयास था। समाज सुधार की दृष्टि से समाज में स्थित असामाजिक प्रथा–परंपराएँ जैसे जातिप्रथा, पर्दा प्रथा, बाल–विवाह, सतीप्रथा का विरोध किया और स्त्री–शिक्षा, विधवा–पुनर्विवाह का समर्थन किया। स्वामी दयानन्द सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द आदि ने अपने अतीत, साहित्य और संस्कृति के प्रति श्रद्धा और गौरव की भावना जागृत करने का प्रयास किया। विश्व मानव कल्याण के लिए भारतीय सांस्कृतिक उत्थान पर उन्होंने बल दिया। वे यह जान चुके थे कि भारत विश्व कल्याण की भूमिका तब तक नहीं निभा सकता, जब तक उसे राजनीतिक और आर्थिक शोषण से मुक्ति नहीं मिल जाती। स्वामी विवेकानन्द ने धर्म के पुनरूज्जीवन द्वारा कल्याण की भावना का प्रसार किया। नारी जागरण और नारी उद्धार पर बल देने वाले विभिन्न समाज सुधारकों ने नारी जाति के प्रति सम्मान और आदर भाव की आवश्यकता पर विशेष बल दिया। इस सामाजिक, सांस्कृतिक जागरण ने समाज को अन्धकार युग से निकालकर नवीन प्रकाश दिखाने का कार्य किया।

नवजागरण की चेतना का विकास बीसवीं शताब्दी में राष्ट्रीय चेतना के रूप में सामने आया। सन् 1885 में कांग्रेस महासभा की स्थापना, सन् 1905 में बंगाल के विभाजन और देश में चल रहे स्वतंत्रता आंदोलनों के कारण जो जागृति हुई, उसके फलस्वरूप भारतीय साहित्य में राष्ट्रीय भावना का स्वर ऊँचा हुआ, जिसकी अभिव्यक्ति प्रथम भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के साहित्य में हुई। भारतेन्दु और उनके मंडल के कवियों ने भारत की पराधीनता और दुर्दशा के प्रति दुःख प्रकट करके भारतीय जनमानस में अंग्रेज़ी राज के विरूद्ध क्षोभ निर्माण किया। आगे

चलकर गांधी जी के नेतृत्व में देशव्यापी राष्ट्रीय आंदोलन ने राष्ट्रीय चेतना का रूप लिया। नई चेतना अथवा नवजागरण के फलस्वरूप भारतीय साहित्य के स्वरूप में परिवर्तन हुआ। साहित्य में मानवतावादी दृष्टि का विकास हुआ। कवियों ने अलौकिक और परलौकिक तत्वों से हटकर अपने चारों ओर के वातावरण और परिवेश से अपने काव्य विषय चुनना प्रारंभ किया। देश की मुक्ति के लिए साहित्य के द्वारा जन चेतना जगाने का प्रयास किया। हिंदी साहित्य में इन प्रवृत्तियों का सूत्रपात भारतेन्दु और द्विवेदी युग में हो चुका था। द्विवेदी युग के मुख्य कवि मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में नवजागरण से निर्मित सभी प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति का क्या स्वरूप है, इसका अध्ययन हम आगे कर रहे हैं।

8.2.2 आधुनिक हिन्दी काव्य चेतना

नवजागरण की चेतना ने जिस नवीन साहित्य को जन्म दिया उसका उत्तरोत्तर विकास सर्वप्रथम बंगला साहित्य में दिखाई देता है। रवींद्रनाथ ठाकुर ने इस पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हुए प्राचीनता के अनुकरण और पूर्वजों की विरासत का संदेश दिया। सांस्कृतिक चेतना का सर्वप्रथम उद्घोष हिंदी के भारतेन्दु युग के साहित्य में हुआ। हिन्दी साहित्य रीतिकालीन श्रृंगारिकता से स्वयं को मुक्त करके देशप्रेम को स्वर देने में सफल रहा। समकालीन परिवेश के प्रति कवि जागरूक हुए और काव्य विषयों का विस्तार हुआ। मातृभूमि–प्रेम, स्वदेश–प्रेम, शिक्षा–प्रचार, नारी–सम्मान की भावना, मानवतावाद काव्य के विषय बनने लगे। देश की आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक दुर्दशा पर क्षोभ और रोष प्रकट होने लगा। भारतेन्दु साहित्य का मूल स्वर देश प्रेम था। इस भावना का पूर्ण विकास बीसवीं शती के प्रथम दो दशकों में द्विवेदी युग के साहित्य में दिखाई देता है। भारतेन्दु युग के कवियों ने जहाँ देश की दुर्दशा पर केवल दु:ख प्रकट किया था, वहां द्विवेदी युग के कवियों ने स्वतंत्रता प्राप्ति का संकल्प व्यक्त किया और उसके लिए आत्म–बलिदान की भावनाओं को स्वर दिया। अतीत और वर्तमान के बीच की असंगति को दिखाकर नए आदर्शों और भारतीय जीवन के आधाररूपी मूल्यों की स्थापना की। पौराणिक सामग्री और विभिन्न प्रसंगों को लेकर वर्तमान युग के संदर्भ में रखकर उनकी नई व्याख्या करने का प्रयास किया। हिंदी साहित्य में आधुनिक हिंदी काव्य चेतना का पूर्ण विकास द्विवेदी युग में ही दिखाई देता है। आधुनिक काव्य चेतना के स्वर जैसे– उपेक्षितों में सर्वप्रथम गूंज उठे थे। इसी युग में मैथिलीशरण गुप्त जी का अविर्भाव हुआ। उनके काव्य में इस काव्य चेतना को सबसे समर्थ और सशक्त वाणी मिली। श्री रामधारी सिंह दिनकर जी ने उनके बारे में कहा है 'पुनरूत्थान' ने हमारी सारी संस्कृति, सम्पूर्ण इतिहास और समग्र विश्वास पर जो नया आलोक फेंका, उसकी अधिक से अधिक अभिव्यक्ति सबसे प्रथम मैथिलीशरण गुप्त की कविताओं में ही हुई। इसीलिए, हिंदी में पुनरूत्थान के कवि वे ही माने जाएंगे, ठीक उसी प्रकार जैसे बंगला में पुनरूत्थान के कवि रवींद्रनाथ ठाकुर हुए हैं। देश और युग की समस्याओं तथा चुनौतियों को गुप्त जी भली–भाँति जान चुके थे। आप देखेंगे कि गुप्त जी की काव्य रचनाएँ युगीन समस्याओं को अभिव्यक्त करती है। साथ ही, इन समस्याओं के समाधान का मार्ग भी प्रशस्त करती हैं। जन–मानस द्वारा आधुनिक विचारधारा को स्वीकार करने के लिए एक मनोभूमि तैयार करती है।

8.3 भाव पक्ष

8.3.1 अतीत का आधार (इतिहास बोध)

जन–मानस में राष्ट्रीय चेतना जगाने के लिए और वर्तमान दुर्दशा के कारणों को जानने के लिए मैथिलीशरण गुप्त ने अतीत के वैभवशाली भारत का चित्र अपनी कविताओं द्वारा प्रस्तुत

किया। हम कौन थे? हम क्या हैं? और क्या होंगे? यह जानने की जिज्ञासा लोगों में उत्पन्न हो और जिससे भारतीय सांस्कृतिक गरिमा और सभ्यता को वे जान सकें और गुलामी की श्रृंखलाओं को तोड़कर एक स्वतंत्र भारत के निर्माण में अपना योगदान दे सकें। गुप्त जी ने अतीत के भव्य और उदात्त चरित्रों को कथाओं के माध्यम से युग की आवश्यकता के अनुसार एक कुशल चित्रकार की भांति नया रूप देकर प्रस्तुत किया। गुप्त जी ने आज के मान्य इतिहास से नहीं बल्कि मुख्यतः रामायण, महाभारत और पौराणिक कथाओं के प्रसंगों का चुनाव किया है। स्वयं गुप्त जी ने इस बात पर बल देकर कहा है – 'इस देश में असंख्य आदर्शजन हो गए हैं। उनकी धार्मिकता, वीरता, उदारता, परोपकारिता और न्यायप्रियता एवं शील और सौजन्य आदि गुणों से इतिहास आलोकित हो रहा है। उनके ऊपर अनेक काव्य नाटक आदि लिखे जा सकते हैं। ऐसे काव्य चरित्र गठन में सहायक ही नहीं होते बल्कि उसके कारण होते हैं' (कविता किस ढंग की हो– मैथिलीशरण गुप्त)

गुप्त जी अतीत की वैभवशाली परंपरा में विश्वास रखते थे। उनका मानना था कि भारत की प्राचीन सभ्यता ही जनता को वह सन्देश, वह प्रेरणा दे सकती है, जिससे राष्ट्रीय भावना का निर्माण हो सके। हमारा वर्तमान उज्ज्वल बनेगा।

ज्यों ज्यों प्रचुर प्राचीनता की खोज बढ़ती जाएगी।
त्यों त्यों हमारी उच्चता पर ओप चढ़ती जाएगी।

(भारत–भारती, पृ. 72)

उन्होंने अपने काव्य 'रंग में भंग' में पूर्वजों की बड़ाई गाने को कहा, 'जयद्रथ वध' में अपने पूर्वजों के शील और सौजन्य आदि गुणों से शिक्षा लेने को कहा।

निज पूर्वजों के सद्गुणों को यत्न से मन में धरो।
सब आत्म परिभव तज निज रूप का चिन्तन करो।
निज पूर्वजों के सद्गुणों का गर्व जो रखती नहीं।
वह जाति जीवित जातियों में रह नहीं सकती कहीं।

(भारत–भारती, पृ. 160)

गुप्त जी मानते थे कि पराधीनता के सुप्त वातावरण में अतीत की जय ही जागरण उत्पन्न कर सकेगी। स्वयं गुप्त जी ने ''मौर्य विजय'' की भूमिका में कहा है– ''यदि सौभाग्य से किसी जाति का अतीत गौरवपूर्ण हो तो उस पर अभिमान करें तो उसका भविष्य भी गौरवपूर्ण हो सकता है।'' (मौर्य–विजय की भूमिका)

इसीलिए उन्होंने अपनी कृतियों में अतीत चित्रण को अधिकाधिक सशक्त बनाने का प्रयत्न किया। लेकिन अतीत चित्रण को महत्व देते हुए भी गुप्त जी इस बात से पूर्ण रूप से सचेत थे कि केवल अतीत चित्रण से उद्देश्य की पूर्ति नहीं होगी, बल्कि युगानुसार आने वाले परिवर्तन को भी वे सहज रूप से स्वीकार कर रहे थे। वे कहते हैं–

''प्राचीन बातें ही भली हैं यह विचार अलोक है,
जैसी अवस्था हो, जहां वैसी व्यवस्था ठीक है।''

(भारत भारती, पृं. 166)

गुप्त जी का मानना है कि युगीन परिस्थितियों के अनुरूप अपने विचारों को बदलने से बहुत सी समस्याएँ दूर हो सकती हैं। इसीलिए युगीन मूल्यों के साथ उन्होंने प्राचीन गौरवपूर्ण तत्वों का संतुलन किया है। अतीतचित्रण से संबंधित गुप्त जी की मान्यताओं को जन्म देने

में युगीन परिस्थितियाँ महत्वपूर्ण रही हैं। इसके अतिरिक्त गुप्त जी की आस्तिकता और निष्ठा ने उनके अतीत प्रेम और नैतिक चेतना को दृढ़ बना दिया और अतीत चित्रण की पृष्ठभूमि में उन्होंने नवजागरण की विभिन्न प्रवृत्तियों का चित्रण किया।

गुप्त जी की अतीत के आधार पर लिखी गई रचनाएं इस प्रकार हैं–

> ''साकेत'', ''पंचवटी'', ''प्रदक्षिणा'', ''जयद्रथ वध'', ''सैरन्ध्री'', ''बकसंहार'', ''नहुष'', ''हिडिम्बा'', ''युद्ध'', ''यशोधरा'', शकुन्तला'' आदि। रामायण को आधार बनाकर लिखी गई रचना ''साकेत'' महत्वपूर्ण रचना है। यह मुख्य रूप से मानव जीवन और मानव मूल्यों का काव्य है। गुप्त जी ने प्रचलित रामकथा को युगीन परिस्थितियों के अनुसार नया रूप प्रदान करने का प्रयत्न किया है। इसके लिए उन्होंने प्राचीन कथा को कई नूतन उद्भावनाओं से सजाया है। परंपरा की लीक पर चलते हुए भी कथा के स्वाभाविक क्रम में उन्होंने परिवर्तन अवश्य दिखाया है।

गुप्त जी ने वर्तमान युग की दैन्य दशा को सुधार और स्वाधीनता की आकांक्षा व्यक्त की है। तत्कालीन युग की परिस्थिति के प्रति किसी भी प्रकार से हीन भावना में नहीं रहे बल्कि देश के गौरव को बढ़ाने के लिए कर्तव्य–भावना से प्रेरित होकर जनता कार्य करें इस भावना की अभिव्यक्ति गुप्त जी की 'द्वापर' रचना में इस प्रकार हुई है–

अपने युग को हीन समझना आत्महीनता होगी,
सजग रहो, इससे दुर्बलता और हीनता होगी।
जिस युग में हम हुए वही तो अपने लिए बड़ा है,
अहा! हमारे आगे कितना कर्मक्षेत्र पड़ा है।

(मैथिलीशरण गुप्त– ''द्वापर'', पृं. 52)

गुप्त जी की अतीत भावना के पीछे यह धारणा है कि हमारा अतीत अत्यन्त गौरवशाली और उदात्त रहा है। हमारे पूर्वजों ने भौतिक और आध्यात्मिक उन्नति की ऊँचाइयों को छुआ था, और विश्व के लिए एक महान् आदर्श उपस्थित किया था। वर्तमान स्थिति में और भविष्य के लिए भी हम उनसे मूल्यवान प्रेरणा ग्रहण कर सकते हैं जिसके आधार पर मानव–संस्कृति को उज्ज्वल बना सकते हैं। इसीलिए वे कहते हैं–

जिनका कुछ भी न था अतीत,
गावें क्या वे उसके गीत
भूलें हम क्यों उसकी याद
जिसमें है अपना आह्लाद।
वही करेगा हमें सचेत
और वही देगा संकेत,

दे सकता है वही प्रबोध
और हमें जीवन का शोध

(हिन्दू, पृ. 51–52)

पुनर्जागरण युग के और उसके बाद के अनेक कवियों में अतीत के बारे में इस प्रकार की भावना निहित है। इन कवियों ने अतीत के पौराणिक और ऐतिहासिक सन्दर्भों के आधार पर नवयुग के अनुरूप मूल्य–आदर्शों की बात कही है। इस संदर्भ में कवि दिनकर ने कहा है–

''पौराणिक कथाओं पर इस आंदोलन ने नयी आभा बिखेरी है, एवं इसके आलोक में हमारे इतिहास की अनेक घटनाएँ और अनेक नायक नयी ज्योति से जगमगाने लगे हैं।''

(दिनकर–मैथिलीशरण गुप्त –अभिनन्दन ग्रंथ)

नये युग की आवश्यकताओं के प्रति गुप्त जी पूरी तरह सजग हैं। नये युग की व्यवस्था एक अपरिचित आधार पर खड़ी न होकर, गत युग की अच्छाइयों की आधारशिला पर खड़ी हो। इसीलिए आज के युग में 'रामराज्य' की स्थापना भी उन्हें नये युग की आवश्यकताओं के अनुकूल लगती है–

आज के योग्य एक अविभाज्य,
विश्व को मिले राम का राज्य

(विश्ववेदना, पृं. 5)

8.3.2 नारी सम्मान की भावना

भारतीय नवजागरण और सुधारवादी आंदोलनों के कारण समाज में नारी की अपमानस्पद और उपेक्षित स्थिति के बारे में पहली बार विचार किया जाने लगा। शताब्दियों से उपेक्षित और प्रताड़ित नारी को घर और समाज में उचित सम्मान मिले, देश के स्वतंत्रता संग्राम और विकास में उसका समान सहयोग रहे। इस भावना से नारी जाति के लिए सदियों से चली आ रही कुप्रथाओं और रूढ़ि–रीतियों का जोरदार विरोध होने लगा। राजा राममोहन राय ने नारी जाति के लिए अपमानास्पद और अभिशाप जैसी सती प्रथा समाप्त करने के लिए आंदोलन किया। बाल–विवाह, अनमेल–विवाह, पर्दा–प्रथा का विरोध और विधवा–विवाह का समर्थन ब्रह्म समाज, आर्यसमाज द्वारा चलाए गए आंदोलनों ने किया। मध्यकालीन सामंतवादी समाज में नारी को केवल भोग की वस्तु माना जाता था। उसका कार्यक्षेत्र केवल उसका घर था और उसे शिक्षा–दीक्षा प्राप्त करने का अधिकार भी नहीं था। इस संकीर्ण मानसिकता के कारण नारी का कार्यक्षेत्र अत्यंत सीमित था। आधुनिक युग की इस विचार–दृष्टि में नारी की इस स्थिति को समाज और देश के लिए, अत्यन्त हानिकारक माना। नारी की स्वतंत्र अस्मिता, कार्य करने की कुशलता और बुद्धिमता को पहचानने का प्रयास किया गया। देश के विकास में सहयोग देने वाली महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में उसे पहचाना गया।

गुप्त जी की आधुनिक काव्य चेतना पर नवजागरण की नारी संबंधी विचारधारा का बहुत ही गहरा और व्यापक प्रभाव दिखाई देता है। देश की समकालीन स्थिति में नारी की शोचनीय स्थिति पर दुःख व्यक्त करते हुए वे नारी–शक्ति की महत्ता को इस तरह व्यक्त करते हैं–

अनुकूल आद्या शक्ति की सुखदायिनी जो स्फूर्ति है,
सद्धर्म की जो मूर्ति और पवित्रता की पूर्ति है,
नर–जाति की जननी तथा शुभ शान्ति की स्त्रोतस्वति
हा दैव! नारी जाति की कैसी यहाँ है दुर्गति।''

(भारत भारती, पृं. 149)

गुप्त जी ने नारी को उदात्त दैवी जैसा रूप देकर शक्ति और पवित्रता, सात्विकता के रूप में प्रतिष्ठित किया है। परन्तु केवल पूज्य भाव जगाने की वह घड़ी नहीं थी बल्कि नारी को सहयोगिनी के रूप में स्वीकार करना समय की आवश्यकता थी। गुप्त जी ने 'साकेत',

'यशोधरा', 'विष्णुप्रिया', रत्नावली जयिनी काव्य रचनाओं में नारी को उच्च और मधुर प्रेरणामयी सहयोगिनी के रूप में दिखाने का प्रयास किया है। हिंदी साहित्य के काव्य क्षेत्र में जो कुछ ऐसे नारी पात्रों की उपेक्षा हो रही थी, जिनके त्याग, उदारता और वेदना की अब तक कहीं भी चर्चा नहीं हुई थी। गुप्त जी ने 'साकेत' में 'उर्मिला' और 'यशोधरा' में राहुल जननी की वेदना को स्वर देकर नारी के अस्तित्व बोध को अभिव्यक्त किया है।

गुप्त जी ने पौराणिक कथा संदर्भ लेकर नारी की गरिमामयी, तेजस्वी प्रतिभा प्रस्तुत की, जो समय की माँग थी। उपेक्षिता उर्मिला की अनकही विरह–वेदना, त्याग, सामंजस्य और दृढ़ता को साकेत में प्रथम वाणी मिली है। राम–सीता के साथ वन जाने के लिए लक्ष्मण को योगी बनाने में उर्मिला की दृढ़ता ही कारण रही है। जाग रहा है यह कौन धर्नुधर, जबकि भुवन भर सोता है भोगी कुसुमायुध योगी–सा, बना दृष्टिगत होता है। गुप्त जी ने नारी के व्यक्तित्व के दो पक्षों को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया। पहला पक्ष है, नारी का और दूसरा पक्ष है नारी की स्वतंत्र सत्ता और महत्ता का।

ये दोनों ही पक्ष नारी जीवन को सफल और उज्जवल बना सकता है यदि उसे पुरूष का सहयोग प्राप्त होता है। यदि यह सहयोग नहीं मिलता है तो नारी के पत्नीत्व और स्वतंत्र सत्ता के बीच तनाव निर्माण होता है। गुप्त जी के 'साकेत' की नायिका उर्मिला में इस तनाव का अभाव है, क्योंकि लक्ष्मण का उसे अनुकूल सहयोग प्राप्त है। उर्मिला की अनुमति से ही लक्ष्मण वन को गए थे, परन्तु यशोधरा, विष्णुप्रिया और रत्नावली में वह नहीं है। यशोधरा के गौतम और विष्णुप्रिया के चैतन्य महाप्रभु पत्नी को बताये बिना, आज्ञा लिए बिना सत्य की खोज में निकल पड़े थे

साकेत के एक विनोद प्रसंग में उर्मिला जब लक्ष्मण से कहती है कि मैं अबला हूँ तो लक्ष्मण सम्पूर्ण नारी जाति को संबोधित करके कह उठते हैं–

'अवस–अबला' तुम? सकल बल वीरता,
विश्व की गम्भीरता, ध्रुव–धीरता,

(साकेत, पृष्ठ 23)

'उर्मिला' विरह व्यथिता होकर भी स्वाभिमान और वीर भावना से ओत–प्रोत है। सीता हरण और लक्ष्मण–शक्ति के प्रसंग को हनुमान से सुनकर जब सभी साकेतवासी रावण से युद्ध करने के लिए निकल पड़ते हैं और सीता को कारागार से मुक्त करके उसके अपमान का बदला लेने के लिए शत्रुघ्न सोने की लंका लूटने के लिए प्रजाजनों को आदेश देते हैं, तब उर्मिला माथे पर सिंदूर लगाकर और हाथ में भाला लेकर साक्षात दुर्गा का वेश धारण करके गरजती हुई उनके सामने आकर तेजस्वी वाणी में घोषणा करती है–

नहीं, नहीं पापी का सोना
यहां न लाना, भले सिंधु में वहीं डुबोना,
जाते हो तो मान हेतु ही तुम सब जाओ,
विंध्य–हिमाचल–भाल भला। झुक जाय, धीरो,
चन्द्र–सूर्य–कुल–कीर्ति–कला रूक जाय न वीरो।

इस तरह 'उर्मिला' सैनिकों में अपनी मातृभूमि के प्रति अटूट श्रद्धा, अपूर्व भक्ति और असीम प्रेम जाग्रत करती है। यही है उर्मिला का स्वाभिमानी, शक्तिरूपा और वीरांगना का रूप। आधुनिक युग में नवजागरण की चेतना के कारण नारी स्वातंत्र्य और नारी की महत्ता को मानने जैसी विचारधारा का प्रसार हुआ। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरूष के कंधे से कंधा

मिलाकर कार्य करने के लिए नारी को प्रोत्साहन दिया और उसे स्वावलम्बी बनाने की प्रेरणा नारी जागृति के लिए कार्य कर रही संस्थाओं ने दी। 'साकेत' में सीता के इन उद्‌गारों में नारी के स्वतंत्र और स्वावलम्बी जीवन की झलक मिलती है–

'औरों के हाथों यहाँ' नहीं पलती हूँ
अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूँ।
श्रमवारि बिन्दु फल स्वास्थय शुक्ति फलती हूँ।
अपने अंचल से व्यंजन आप झलती हूँ।
तनु–लता–सफलता–स्वाद आज ही आया,
मेरी कुटिया मे ंराज भवन मन–भाया।'

'यशोधरा' गुप्त जी की दूसरी महान कृति है। जिसमें गौतम बुद्ध, यशोधरा तथा पुत्र राहुल की कथा को विस्तार दिया गया है।

यशोधरा की गौतम के महान् लक्ष्य के प्रति पूर्ण सहानुभूति थी, परन्तु पति द्वारा निद्रावस्था में उसकी अनुमति लिए बिना गृह त्याग करने से यशोधरा अपने नारीत्व को तिरस्कृत और अपमानित अनुभव करती है, गौतम ने उसे सहधर्मिणी के सहयोग का अवसर ही नहीं दिया– नारी को उन्होंने भी सिद्धि मार्ग की बाधा माना, यशोधरा की वेदना उसके शब्दों में फूट पड़ी है–

सिद्धि–हेतु स्वामी गये, यह गौरव की बात,
पर चोरी–चोरी गये, यही बड़ा व्याघात,
सखि, वे मुझसे कह कर जाते,
कह, तो क्या वे मुझको अपनी पथ–बाधा ही पाते?

(यशोधरा पृ. 24)

यशोधरा के मन में वेदना के साथ ही नारी–जाति के अस्तित्व के प्रति जागरूकता का भाव दिखाई देता है। वह कह उठती है–

सिद्धि –मार्ग की बाधा नारी फिर उसकी क्या गति है,
पर उनसे पूछूँ क्या जिनको मुझसे आज विरति है,
अर्ध–विश्व में व्याप्त शुभाशुभ मेरी भी कुछ मति है,
मैं भी नहीं अनाथ, जगत् में मेरा भी प्रभु पति है।

(यशोधरा, पृ. 38)

सिद्धार्थ के निर्वाण हेतु चले जाने के बाद यशोधरा शोक में डूब जाती है, फिर भी जन–कल्याण हेतु गए अपने पति के उच्च संकल्प के लिए वह त्यागमयी भावना से कह उठती है–

जाये, सिद्धि पायें वे सुख से,
दुःखी न हों इस जन के दुःख से।

यशोधरा के साथ उसका पुत्र राहुल भी है, पति की अनुपस्थिति में माता तथा पिता दोनों रूपों का यशोधरा को निर्वाह करना पड़ता है। इसीलिए यशोधरा के विरह में वेदना के साथ–साथ गम्भीरता आ गई है। वह अपनी व्याकुलता में उत्तरदायित्व को कभी नहीं भूली। नारी जीवन

के उस गम्भीर पक्ष, जिसमें तप, अटल विश्वास, पारिवारिक उत्तरदायित्व और त्याग है, यशोधरा ने उसे सहज रूप से स्वीकार किया। इसीलिए वह अपने ससुर को सांत्वना देने की क्षमता रखती है–

'तात सोचो, क्या गये वे इसी अर्थ हैं।
खोज हम लायें उन्हें, क्या वे असमर्थ हैं?'

यशोधरा की तापसी वृत्ति को अंगीकार करने के पीछे इस असार संसार के मोह से मुक्त होकर संसार को मुक्ति का मार्ग दिखाने वाले गौतम की पत्नी होने की योग्यता को सिद्ध करने की आकांक्षा दिखाई देती है। उनका यह तप अंत में सफल हुआ। गौतम भगवान बुद्ध बनकर उसके 'इसी आंगन में' लौटकर आएँ, जहाँ से वे उसे छोड़कर गए थे और यशोधरा ने अपने जीवन के तप का फल प्राप्त कर लिया। यहाँ यशोधरा का मानिनी रूप अडिग दिखाई देता है वह जानती है कि–

'यदि वे चल आये हैं इतना
तो दो पद उनको है कितना
क्या भारी वह, मुझको बिताना
पीठ उन्होंने फेरी
ऐ मन! आज परीक्षा तेरी।'

यशोधरा इस परीक्षा में सफल हो जाती है। गौतम बुद्ध स्वयं आते हैं और कहते हैं–

'मानिनी, मान तजो लो, रहो तुम्हारी बान।
दानिनि, आया स्वयं द्वार पर यह तत्र भवान।'

और यशोधरा ने अपने जीवन के तप का फल प्राप्त कर लिया। यशोधरा ने उस भिक्षु–शिरोमणि को अपनी गोद का अमूल्य रत्न, पुत्र राहुल को देकर नारी के त्याग का अभूतपूर्व आदर्श उपस्थित कर दिया। भगवान बुद्ध ने गोपा अर्थात् यशोधरा के नीरव–तप को और उनके महत्व को स्वीकार किया और केवल गोपा का ही नहीं, उसके त्याग से समस्त नारी–जाति की महत्ता को स्वीकार करके गोपा का मस्तक ऊँचा कर दिया–

'दीन न हो गोपे, सुनो, हीन नहीं नारी कभी
भूत–दया–मूर्ति वह मन से शरीर से।
क्षीण हुआ वन में क्षुधा से मैं विशेष जब
मुझको बचाया मातृजाति ने ही खीर से।
आया जब मार मुझे मारने को बार–बार
अप्सरा–अनीकिनी सजाये हेम–हीर से।
तुम तो यहाँ थीं, धीर ध्यान ही तुम्हारा वहाँ
जुझा, मुझे पीछे कर, पंचशर वीर से।'

गुप्त जी ने यशोधरा में भारतीय नवजागरण से विकसित हुए नवीन विचारों को अभिव्यक्ति दी है। देवत्व के स्थान पर मानव के महत्व को प्रतिपादित करना इस कृति का मुख्य हेतु था। अन्य ग्रंथों के समान सिद्धार्थ को प्रमुखता न देकर गुप्त जी ने काव्य को यशोधरा पर केन्द्रित रखा है, क्योंकि नारी की प्रतिष्ठा समय की माँग थी।

गुप्त जी द्वारा नारी की प्रतिष्ठा को स्थापित करने की इसी काव्य–धारा की अगली कृति ''विष्णुप्रिया'' और ''जयिनी'' है। यह रचना भी गुप्त जी के उसी सिद्धांत की बात करती है, जिसमें आदर्श नारियों के लिए त्याग, तपस्या और पतिव्रता होना आवश्यक माना गया है। हालांकि यह बात आधुनिक विचारों की अपेक्षा कुछ पारंपरिक अधिक लगती है। ''विष्णुप्रिया'' सामान्य गृहिणी है। मध्यकालीन भक्त श्री चैतन्य महाप्रभु के गृह त्याग के कारण उनकी पत्नी विष्णुप्रिया को जो व्यथा–वेदना सहनी पड़ी उसी का रेखांकन इस कृति में किया गया है।

चैतन्य महाप्रभु जब विष्णुप्रिया से प्रेम–धर्म के प्रसार हेतु गृह त्याग के लिए आज्ञा माँगते हैं तो उस समय विष्णुप्रिया समस्त नारी समाज की विवशता का प्रतिनिधित्व करती हुई कहती है–

'तो क्या करूँ कर ही क्या सकती हूँ और मैं
रो रोकर मरना ही नारी लिखा लाई है।'

परन्तु वह अपने पति की भर्त्सना भी करती है। यह कह कर–

'कौन योग पूर्ण होगा त्याग कर मुझको?
धर्म के विरूद्ध ही तुम्हारा यह कर्म है।'

(विष्णुप्रिया, पृ. 42)

केवल इतना कह कर विष्णुप्रिया चुप नहीं रहती है तो सांसारिकता के मोह से दूर भाग रहे अपने पति के लिए आक्रोश भरा व्यंग्यपूर्ण उलाहना भी देती है। परन्तु वह स्थिति का सामना करने के लिए समर्थ भी है। स्वजनों के सहारे बैठकर वह अपना निर्वाह नहीं करती बल्कि स्वयं श्रम करके अपना और पति का पालन–पोषण करती है। स्वाभिमानी विष्णुप्रिया स्वयं श्रम करके जीवन जीना चाहती है।

'कर लेंगे हम किसी प्रकार
इतना श्रम जिससे हम दोनों, न हों किसी पर भार'।

चैतन्य महाप्रभु के लौट आने के बाद विष्णुप्रिया अपना सारा दुःख भुलकर उनका प्रेमपूर्वक स्वागत भी करती हैं और महाप्रभु के कहने पर भगवान का ध्यान भी करती है। परन्तु यहीं विष्णुप्रिया चैतन्य महाप्रभु के राजा द्वारा दी गई भेंट को स्वीकार करने पर, विद्रोहिणी के रूप में कह उठती है–

'राज–समादर के लिए ही क्या गए हैं वे?'

(विष्णुप्रिया, पृ. 83)

और इस बात को स्वीकार करते हुए महाप्रभु ने विष्णुप्रिया का आभार व्यक्त किया–

'हाय! 'प्यारी विष्णुप्रिये!' बोले हँसकर ही,
तुम अवरोधिनी नहीं, अब हो प्रबोधिनी।'

(विष्णुप्रिया, पृ. 84)

8.3.3 मानवतावादी दृष्टिकोण

आधुनिक युग में मनुष्य का विश्वास अलौकिक शक्तियों पर से हटता गया क्योंकि विज्ञान ने मुनष्य के सामने यह स्पष्ट कर दिया कि अलौकिक शक्ति एक कल्पना मात्र है। आस्था

का केन्द्र मनुष्य ही है। मनुष्य स्वयं अपना भाग्य–विधाता है, सृष्टि के क्रम–विकास में उसका स्थान सर्वश्रेष्ठ है। यही विश्वास आधुनिक मानवतावादी विचारधारा की मूल चेतना है।

गुप्त जी के काव्य पर इस मानवतावादी विचारधारा का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। उनके काव्य के विषय अधिकार पौराणिक कथानकों पर आधारित हैं विशेष रूप से 'नहुष' और 'दिवोदास' काव्य इसी दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हैं जिसमें मानव के स्वावलम्बी बनने और विकास की ओर बढ़ने के संकल्प को व्यक्त किया है। 'लीला' नामक काव्य में विश्वामित्र का यह कथन–

अमर जो न कर सके उसे नर कर सकते हैं
व्रत साधन पर अमर भला कब मर सकते हैं?

(लीला, पृ. 24)

विकास के पथ पर आगे बढ़ने का संकल्प लिए मानव आज उस संकल्प की पूर्णता की ओर अग्रसर है। मानवीय मूल्यों की स्थापना और उनके अनुसार चलने की कटिबद्धता मानव निभा रहा है। 'द्वापर' में उग्रसेन कर रहा है–

सच पूछो तो ऐसा अद्भुत अपना यह मानव ही,
कभी देव बन जाता है तो और कभी दानव भी।
मैं कहता हूँ यदि मनुष्य ही बने मनुष्य हमारा,
तो कट जाए देव–दैत्यों का कलह–कलुष यह सारा।

(द्वापर, पृ. 103)

समाजिक धरातल पर मनुष्य और मनुष्य के बीच भेद उत्पन्न करने वाली सभी पुरातन रूढ़ियों और संकीर्ण मानसिकताओं को नष्ट करके मनुष्य को स्वाभिमानपूर्वक खड़े होने का साहस मानवता ही दे सकती है। 'जयभारत' काव्य के परीक्षा प्रसंग में कौरवों और पाण्डवों के शस्त्र कौशल की परीक्षा के उत्सव का वर्णन है। इस उत्सव में सबको चुनौती देकर परीक्षा देने के लिए जब कर्ण उपस्थित होता है तो उसका अपमान करने के उद्देश्य से भीम उससे कुल और वर्ण का परिचय माँगता है तब कर्ण के मुख से मनुष्यत्व के गौरव को व्यक्त करने वाला सत्य इस तरह फूट पड़ता है–

मैं मनुष्य हूँ, और वर्ण सब देख रहे हैं,
पूछो उनसे लोग मुझे क्या लेख रहे हैं।

(जयभारत, पृ. 63)

मनुष्य की श्रेष्ठता उसके किस जाति या वर्ण में जन्म लेने के आधार पर नहीं उसके शौर्य, पराक्रम और योग्यता के बल पर निर्धारित होनी चाहिए। गुप्त जी ने मनुष्य के श्रेष्ठत्व को पहचानने की एक नई दृष्टि देने का प्रयास किया है। जातिभेद का विरोध करते हुए मनुष्यत्व की श्रेष्ठता को 'गुरूकुल' काव्य में वे इस रूप में व्यक्त करते हैं–

''हिन्दु हो या मुसलमान हो नीच रहेगा फिर भी नीच
मनुष्यत्व सबसे ऊपर है मान्य महीमण्डल के बीच''।

(गुरूकुल, पृ. 37)

गुप्त जी ने अपने काव्य में जातिभेद, वर्णभेद जैसी सामाजिक बुराइयों का विरोध किया और इन बुराइयों के कारण मनुष्य–मनुष्य के बीच जो दरार पड़ी थी, उस दरार को मिटाने के

प्रयास स्वयं मनुष्य ही करे इस उद्देश्य को पूर्ण करने हेतु गुप्त जी ने 'द्वापर', 'गुरूकुल' काव्य संग्रहों की रचना की थी। मानवतावादी दृष्टिकोण से ही गुप्त जी ने नारी की सामाजिक प्रतिष्ठा को बढ़ाने हेतु 'यशोधरा', 'साकेत', 'विष्णुप्रिया' काव्यों की रचना की। इन काव्यों के प्रमुख नारी पात्र त्याग, दया, करूणा, अहिंसा, आदि बौद्ध धर्म के तत्वों को अपनाते हुए मानवता की स्थापना के लिए कार्यशील दिखाई देते हैं। बौद्ध धर्म के तत्व मानवतावाद की स्थापना के मूल तत्व माने गए हैं। गुप्त जी का विश्वास था कि अनेक विसंगतियों और त्रुटियों के बावजूद विश्व का विकास होगा, क्योंकि मनुष्य ही इस विकास के केन्द्र में है। कुन्ती द्वारा यह विश्वास वे प्रकट करते हैं–

'होगा इस विश्व का विकास जो अब भी।
नर से होगा वह, जैसा हुआ अब भी।।
आते हैं चढ़ाव उतार तथा आवेंगे।
तो भी हम लोग सदा बढ़ते ही जायेंगे।।'

उस समय विश्व को महायुद्ध एक शाप की तरह ग्रस्त किए हुए था। दोनों महायुद्धों से संपूर्ण विश्व, दानवीय प्रवृत्तियों का तथा भीषणता का शिकार हो चुका था। गुप्त जी ने महायुद्ध की उस भयावहता को देखते हुए युद्ध के विरोध में शांति का, विषमता के मध्य समता का काव्य लिखकर दानवता के विरूद्ध मानवता का संदेश देने का भरसक प्रयास 'विश्व वेदना' जैसा काव्य लिखकर किया। अंतर्राष्ट्रीय स्पर्धाओं से त्रस्त आधुनिक युग की पीड़ा की अनुभूति से कवि हृदय कराह उठता है–

'बढ़ाकर दो देशों में द्वेष
बेच दोनों को वस्तु विशेष
लूटता एक तीसरा देश
वाणिज्य में क्यों लज्जा–लेश
राज्य पूँजीपति का ही आज
नहीं कुछ उसके लिए अकाज
लुब्ध लंपट वंचक वाचाल
चले जो जितना गहरी चाल
बिछावे कूट कपट के जाल
वही उतने नीतिज्ञ विशाल
धनी हो जिसके कंस नृशंस
न हो धरा धाम क्यों ध्वंस।'

द्वितीय महायुद्ध के बाद विजयोत्सव मना रहे ब्रिटेन के नवयुवकों को संबोधित करके जो बात एच जी. वेल्स ने कही थी, वही ''बंगाल का अकाल'' नामक कविता में गुप्त जी ने व्यक्त की है–

'शिशु जहाँ शुष्क स्तनी माँ को–
अधीर पुकारते हैं।
एक मुट्ठी अन्न पर उनको बुभुक्षित करते हैं।
आँसुओं के रूप में जीवन जहाँ राज गारते हैं।
एक के पर दूसरों के अन्तरंग उधारते हैं।।

रक्त रंजित हो यहाँ तो साँझ हो चाहे सबेरा।
क्या यही संसार मेरा''।

भूख से बिलखती जनता की आवाज़, कराह, क्रन्दन, कोलाहल, द्वेष, वैषम्य इन सभी भावनाओं की संमिश्र अभिव्यक्ति इस कविता में हुई है। द्वितीय महायुद्ध से निर्माण हुई स्थिति के कारण गुप्त जी की मानवतावादी दृष्टि के पीछे वस्तुतः सामाजिक चेतना मुख्य रूप से दिखाई देती है। इसी प्रकार, 'जयिनी' काव्य रचना में समाजवादी विचाराधारा के मानवतावादी तथ्य स्पष्ट हैं।

'खाता दूसरा है, कमाता श्रमजीवी है' अथवा ''महाजन पूँजीपति बनके अपने सुख भोग के लिए सौ–सौ का सुख भोग लूटता है। कुत्ते एक ओर मलाई सूँघते हैं तो बच्चे दूसरी ओर भूख से ऊँघते हैं''।

इस तरह, गुप्त जी का काव्य मानवतावादी दृष्टि का दस्तावेज है। कर्म और कर्त्तव्य के नए धरातल को प्रस्तुत करके मनुष्यत्व को नया आयाम, नया आदर्श और नयी अर्थवत्ता प्रदान करता है।

8.3.4 राष्ट्रीय भावना और समाज सुधार का स्वर

देश में स्वतंत्रता आंदोलन एवं राष्ट्रीय भावना का उदय पुनरूत्थान के वैचारिक आंदोलन के प्रचार रूप में हुआ। गांधी जी ने इस आंदोलन को नये आयाम प्रदान किए, इसे व्यापक, जन–जागरण, समाज–सुधार, आर्थिक स्वावलम्बन एवं नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों से जोड़ा। अतः अहिंसा, सत्याग्रह, अछूतोद्धार, मानवीय समानता और चर्खा–आंदोलन' उनके विचार–दर्शन के प्रमुख आयाम बने। मैथिलीशरण गुप्त को हमने नवजागरण की विचारधारा का प्रतिनिधि कवि कहा है। नवजागरण स्वतंत्रता–आंदोलन और गांधीवाद के वे प्रतिनिधि कवि हैं। उन्होंने गांधीवादी विचारों को स्वर दिया।

स्वदेश की महिमा गुप्त जी ने अपनी रचनाओं के अनेक प्रसंगों में गाई। 'गुरूकुल' में गुरू गोबिन्द सिंह के मुख से देश के गौरव का गान इस तरह से किया है–

जिसके तीन ओर अर्णव है,
चौथी ओर हिमालय पीन
ऐसा देश दुर्ग पाकर भी
रह न सके हा! हम स्वाधीन।

(गुरूकुल, पृ. 220)

'स्वदेश संगीत' में गुप्त जी की कविता नीलाम्बर परिधान हरित पट पर शोभित है। स्वतंत्रता आंदोलन के युग में भारतीय जनता के कोटि–कोटि कण्ठों से गायी जाती थी। मातृभूमि को देवी अथवा मानवी रूप में अनेक कवियों ने चित्रित किया, जैसे बंकिमचन्द्र चटर्जी ने 'वन्देमातरम्' गीत में, निराला ने 'भारति जय विजय करे' गीत में और जय शंकर प्रसाद ने 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से...... ' कविता में। प्राचीन काल के कथानकों में भी गुप्त जी ने स्वदेश प्रेम और राष्ट्रीय भावना को इस कौशल से अभिव्यक्त किया है कि वह उन प्रसंगों में अपनी सार्थकता रखते हुए आज के युग की भावनाओं को भी वाणी देने में समर्थ है। विदेशी शक्ति से देश की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए 'साकेत' के राम कृत संकल्प है–

पुण्य भूमि पर पाप कभी हम सह न सकेंगे
पीड़क पापी यहाँ और अब रह न सकेंगे

(लीला, पृ, 24)

इसी प्रकार, ऐतिहासिक प्रसंगों पर आधारित रचनाओं में गुप्त जी ने अनेक पात्रों के द्वारा स्वदेश के लिए बलिदान की भावना व्यक्त की है। गुप्त जी की ऐतिहासिक कथानकों पर आधारित अनेक रचनाओं के स्वदेश के लिए प्राणार्पण की भावना व्यक्त होती है। उन मध्यकालीन कथानकों में यह भाव सीमित राष्ट्रीयता की भावना को व्यक्त करते हैं, लेकिन वर्तमान युग में भी उन भावनाओं की प्रासंगिकता थी–

जन्मदायी धायि! तुझसे उऋण अब होना मुझे,
कौन मेरे प्राण रहते देख सकता है तुझे,
मैं रहूँ चाहे जहाँ, हूँ किन्तु तेरा ही सदा,
फिर भला कैसे न रक्खूँ ध्यान तेरा सर्वदा

(रंग में भंग, पृ. 29)

विदेशी शासन के विरोध में स्वतंत्रता आंदोलन ने संघर्ष का रूप धारण कर लिया था। ऐसी स्थिति में गुप्त जी की राष्ट्र–प्रेम की भावना से लिखा गया काव्य 'भारत भारती' प्रकाशित हुआ। ब्रिटिश शासन द्वारा किये जा रहे देश के आर्थिक शोषण और सांस्कृतिक ह्रास के प्रति गुप्त जी अत्यधिक चिंतित थे, यह चिंता उनके इस काव्य में अनेक प्रसंगों में व्यक्त होती है। वे कहते हैं–

हम कौन थे, क्या हो गये हैं, और क्या होंगे अभी
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएँ सभी।

देशवासियों अपने प्राचीन गौरव का स्मरण करके पुनः वैसी ही या उससे बेहतर स्थिति प्राप्ति की लालसा रखें इसलिए गुप्त जी भारत भारती द्वारा जन–चेतना जगाने के कार्य में जुटे रहे–

इस देश को है दीनबन्धों! आप फिर अपनाइए,
भगवान! भारतवर्ष को फिर पुण्यभूमि बनाइए।
....
वरमंत्र जिसका मुक्ति था, परतंत्र पीड़ित है वही,
फिर वह परम पुरूषार्थ इसमें शीध्र ही प्रकटाइए।

(भारत भारती, पृ. 187–188)

फिर अपने को याद करो
उठो अलौकिक, भाव करो।

(वैतालिक)

गुप्त जी राष्ट्रीय आंदोलन में विभिन्न धर्मों और सम्प्रदायों की एकता के महत्व को अनुभव करते थे। इसी उद्‌देश्य से उन्होंने 'काबा और कर्बला' तथा 'गुरूकुल' दो काव्य संग्रहों की रचना द्वार इस्लाम धर्म और सिक्ख धर्म के प्रति श्रद्धा व्यक्त की है। 'मातृ–मंदिर' नामक कविता में सभी धर्म, जाति, संप्रदाय की एकता का प्रतिपादन करते हुए वे कहते हैं – जाति, धर्म या संप्रदाय का, नहीं भेद व्यवधान यहाँ । एक ने सब के लिए भेजे यहाँ निज ग्रंथ हैं। राष्ट्रीयता और विश्व प्रेम में धर्म बाधक नहीं है बल्कि धर्म या संप्रदाय का, नहीं भेद व्यवधान यहाँ' । एक ने सब के लिए भेजे यहाँ निज ग्रंथ हैं। राष्ट्रीयता और विश्व प्रेम में धर्म बाधक नहीं है बल्कि धर्म का उद्‌देश्य विश्व–बन्धुत्व भावना बढ़ाने का होना चाहिए।

किन्तु हमारा लक्ष्य, एक अम्बर, भू–सागर,
एक नगर–सा बने विश्व, हम उसके नगर!

(राजा–प्रजा)

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का एक और प्रमुख लक्ष्य था, सामाजिक समानता अर्थात् समाज के सभी वर्ग के लोगों के साथ समानता का व्यवहार, अछूत, हरिजन एवं पिछड़ी जातियों के लोगों का उत्थान। स्वतंत्रता आंदोलन के कर्णधार गांधी जी ने यह जान लिया था कि जब तक सभी वर्ण के लोगों को सामाजिक समता प्राप्त न हो, तब तक देश की राजनीतिक स्वतंत्रता कठिन ही नहीं व्यर्थ भी है। इसीलिए स्वतंत्रता संग्राम के रचनात्मक कार्यक्रमों में हरिजनोद्धार को महत्वपूर्ण स्थान दिया और इसके लिए व्यापक कार्यक्रम तैयार किए। गुप्तजी ने अपनी रचनाओं में बार–बार 'जन्मना जाति सिद्धांत' का अर्थात् जन्म के आधार पर जाति निश्चित होने का विरोध किया है। वे कर्म और आचरण को व्यक्ति की सामाजिक मर्यादा का आधार मानते हैं। 'अनघ' काव्य में मघ के अछूतोद्धार के प्रयासों की ग्रामवासी आलोचना करते हैं, तब उन्हें मघ द्वारा यह उत्तर दिया जाता है–

इसका भी निर्णय हो जाए, नहीं अछूत मनुज क्या हाय!
करें अशुचिता सबकी दूर, उनसे घृणा करें सो क्रूर।
जिनके बल पर खड़ा समाज, रहती है शुचिता की लाज
उनका ऋण न करना, खेद! है अपना ही मूलाच्छेद।

(अनध पृ. 45–46)

अछूतों के मंदिर–प्रवेश के प्रश्न को ध्यान में रखते हुए गुप्त जी ने इसे कुछ बदले हुए रूप में 'सिद्धराज' में उठाया है। सिद्धराज की माता को यह जानकर अत्यंत खेद होता है कि मंदिर प्रवेश सबके लिए उपलब्ध नहीं है। वह बिना दर्शन किए ही लौट आती है और मंत्री के पूछने पर स्पष्ट कह देती है–

मंदिर का द्वार जो खुलेगा सबके लिए
होगी तभी मेरी वहाँ विश्वंभर भावना।

आप देखेंगे कि राष्ट्रीय भावना और समाज सुधार की आकांक्षा गुप्त जी के काव्य के दो प्रमुख स्वर थे। जिसकी अभिव्यक्ति उनके प्रत्येक काव्य रचना में हुई है। राष्ट्रीय भावना एवं राष्ट्रीय चेतना का प्रसार उनके जीवन का उद्देश्य मात्र बन गया था। जीवन के पचास वर्ष लेखन कार्य में निरंतर कार्यरत रहने के पीछे देश की स्वतंत्रता, देश की प्रगति और विकास को देखेते हुए स्वप्न थे, जो कि गुप्त जी के सामने ही पूर्ण हुए और इस महान राष्ट्रकवि के इस देश कार्य को पूर्णत्व प्राप्त हुआ है।

बोध प्रश्न–1

निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर संक्षेप में लिखिए।

1. भारतीय नवजागरण की चेतना का विकास राष्ट्रीय चेतना के रूप में सामने आया। स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

....

....

....

2. निम्नलिखि में से जो सही है उन पर (√) निशान लगाइए।

   i) राष्ट्रीय आंदोलन

   ii) सामाजिक, सांस्कृतिक चेतना का विकास

   iii) आधुनिक हिन्दी काव्य चेतना का विकास

   iv) विज्ञान के प्रति आस्था

   v) अंधविश्वास आदि से मुक्ति का प्रयास।

3. रिक्त स्थान में उपयुक्त शब्द भरिए।

   1. सामाजिक प्रथाओं का विरोध किया गया।

      (बालविवाह, अनमेल विवाह, पर्दा–प्रथा, छुआछुत, सती प्रथा)

बोध प्रश्न– 2

1. गुप्त जी ने अपने लेखन में किन–किन बातों पर बल दिया (किन्हीं उपयुक्त पाँच पर (√) निशान लगाइए।

   - अतीत चित्रण
   - वर्तमान दुर्दशा का चित्रण
   - गौरवपूर्ण इतिहास
   - पौराणिक/ऐतिहासिक कथानक
   - उज्जवल भविष्य की आकांक्षा
   - हिन्दू धर्म, वेदों, उपनिषदों का आख्यान

2. गुप्त जी ने अपनी किन–किन रचनाओं में इतिहास के उपेक्षित नारी पात्रों को प्रतिष्ठित किया है। (सही रचनाओं पर (अ) निशान लगाइए।

   - साकेत
   - यशोधरा
   - द्वापर
   - रंग में भंग
   - विष्णुप्रिया
   - जयिनी

3. गुप्त जी ने विभिन्न धर्म और संप्रदायों की परस्पर एकता को बढ़ाने के लिए किन महत्वपूर्ण बातों का उल्लेख किया है (संक्षेप में लिखिए)। (दस पंक्तियों में लिखें)

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

4. जाति प्रथा को नष्ट करने के लिए किन प्रयासों की ओर गुप्त जी ने संकेत किया (सही पर निशान (अ) लगाइए)

- समानता
- अस्पृश्यता का विरोध
- मंदिर प्रवेश की अनुमति
- मानवीय अधिकार
- बंधुत्व का भाव

8.4 संरचना का शिल्प

8.4.1 काव्य भाषा

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के बाद खड़ी बोली का स्वरूप निश्चित करने और उसे दिशा देने के कार्य में पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनके शिष्य मैथिलीशरण गुप्त का बहुत बड़ा योगदान है। गुप्त जी ने अपने काव्य के लिए खड़ी बोली को ही स्वीकार किया था। राष्ट्रीय आंदोलन की चेतना को जनमानस तक पहुँचाने का एक प्रभावी माध्यम खड़ी बोली में रची हुई कविता को माना गया। गुप्त जी इस कार्य को पूर्ण रूप से समर्पित थे। अतः द्विवेदी युग में खड़ी बोली हिंदी राष्ट्रीय–आंदोलन की चेतना को जगाने का माध्यम बन सकी। गुप्त जी का कहना था कि राष्ट्र–भाषा के बिना देश प्रेम की चर्चा कृत्रिमता पैदा करती है। वास्तव में खड़ी बोली का यह आंदोलन तथा उत्कर्ष देश को मानसिक पराधीनता से छुटकारा दिलाने का उसी प्रकार सर्वोत्तम साधन था जिस प्रकार राजनीतिक पराधीनता की मुक्ति का साधन

सत्याग्रह था। हम देखेंगे कि मैथिलीशरण गुप्त की साहित्य साधना के विकास के साथ–साथ खड़ी बोली का भी विकास होता चला गया।

अब हम गुप्त जी की भाषा के क्रमिक विकास के संबंध में विचार करते हुए देखेंगे कि 'खड़ी बोली' उनके काव्यों में निखार पाकर किस प्रकार समृद्ध और साहित्यिक बनी है। गुप्त जी ने स्वीकार किया था कि काव्य की भाषा का आधार लोकजीवन की भाषा होनी ही चाहिए तभी वह लोक मानव के विचारों और प्रभावों को अभिव्यक्त कर सकती है। स्वयं गुप्त जी ने खड़ी बोली के संबंध में विचार व्यक्त किए थे। वे कहते हैं 'मेरी–अल्पबुद्धि तो यह कहती है कि अब खड़ी बोली में ही कविता होना सर्वथा इष्ट है। जिस हिंदी को हम राष्ट्रभाषा बनाने की कोशिश करें उसी का साहित्य कविता से खाली पड़ा रहे यह कैसी दुःख की बात है। कविता साहित्य का प्राण है। जिस भाषा में कविता नहीं, वह भाषा कभी साहित्यवती होने का गर्व नहीं कर सकती और जिस भाषा को साहित्य का गर्व नहीं, वह राष्ट्र भाषा क्या खाक हो सकती है? अतएव बोलचाल की भाषा में ही कविता होना इष्ट है'।

(मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रंथ, पृ. 270–71)

मातृभाषा के संबंध में उनके मन में जो वेदना थी वह इन शब्दों में प्रकट हुई है–

अहो मातृभाषे! दशा देखी तेरी,
न हो निराशा कभी दूर मेरी।
बड़ा कष्ट है तू अभी दीन ही है,
सभी भांति से हो रही हीन ही है।।

राष्ट्रभाषा के अनादर से गुप्त जी व्यथित थे। अतः खड़ी बोली की काव्य प्रतिष्ठा के लिए अत्यन्त परिश्रम और तपश्चर्या की आवश्यकता थी जो गुप्त जी की कविता में दिखाई देती है। गुप्त जी के प्रथम काव्य संग्रह "रंग में भंग" की कुछ काव्य पंक्तियों को देखते ही खड़ी बोली का एक स्वाभाविक रूप हमारे सामने उपस्थित हो जाता है। रचना के प्रथम पद्य की पंक्तियाँ इस प्रकार हैं–

राम नाम ललाभ जिसका सर्व मंगल धाम है,
प्रथम उस सर्वेश को श्रद्धा समेत प्रणाम है।

भाषा का जो यह स्वाभाविक और भौतिक रूप गुप्त जी के काव्य में मिलता है वह आचार्य द्विवेदी, पं. श्रीधर पाठक जी और पं. अयोध्या सिंह उपाध्याय के काव्य में नहीं दिखाई देता है। इसी रचना का एक और उदाहरण देखें –

हो चुका शृंगार जब पूरा यथोचित रीति से।
ले चली वर के निकट सखियाँ उसे तब प्रीति से।।

गुप्त जी की यह रचना व्याकरण की शुद्धता और शब्दों के उचित चयन का एक उदाहरण है। "रंग में भंग" के बाद जयद्रथ –वध में खड़ी बोली का उससे भी अधिक सजीव और सुलझा हुआ रूप दिखाई देता है। इस काव्य में भाषा–लालित्य के साथ सर्वप्रथम खड़ी बोली का साहित्यिक रूप उभर कर सामने आया है। शब्द चयन, सूक्तियाँ, मनः स्थिति का चित्रण, तत्सम् शब्दावली और काव्यात्मक गुण इस काव्य में विद्यमान हैं। एक उदाहरण देंखें –

रहते हुए तुमसा सहायक प्रण हुआ पूरा नहीं।
इससे मुझे है जान पड़ता भाग्य–बल ही सब कहीं।।
श्रीकृष्ण के सुन वचन अर्जुन क्रोध से जलने लगे।
सब शोक अपना भूलकर करतल युगल मलने लगे।।

भाषा को सशक्त बनाने के लिए मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग भी गुप्त जी ने किया। 'भारत भारती' अत्यंत सरल भाषा का प्रयोग किया जिसमें बोल–चाल की सामान्य शब्दावली स्वतः ही आ गई है। यही कारण है कि उस युग में भारत भारती इतनी अधिक लोकप्रिय हुई। 'हम कौन थे, क्या हो गये हैं और क्यों होंगे अभी' इस रचना की यह पंक्ति व्यक्ति गा उठता था। गुप्त जी ने खड़ी बोली को काव्योपयोगी बनाकर सुधड़ रूप प्रदान किया। खड़ी बोली के स्वरूप–निर्धारण में उनका योगदान महत्वपूर्ण माना जाता है। गुप्त जी ने बोलचाल की सरल भाषा का प्रयोग भारत भारती में किया है। कुछ उदाहरण देखिए–

नर–जाति की जननी तथा शुभ शान्ति की स्त्रोतस्विनी
हा देव। नारी जाति की कैसी यहां है दुर्गती।

(भारत भारती)

कोई जगत को सत्य कोई स्वप्न मात्र बता रहा
कोई शकुनि उनमें वहां मध्यस्थ भाव जता रहा

गुप्त जी ने भारतीय गौरव, वीरता और आदर्श को खड़ी बोली के माध्यम से प्रस्तुत कर जनमानस मे ंराष्ट्रीय भावना जगाने का प्रयत्न किया। उनकी यह दूरदर्शिता ही थी कि उन्होंने परम्परागत रूढ़ियों को त्यागकर बदलती हुई परिस्थिति को देखते हुए खड़ी बोली को अपनाया और जीवन पर खड़ी बोली के उत्कर्ष के लिए कार्यरत रहे।

गुप्त जी की भाषा का निखार 'साकेत' और 'यशोधरा' में हम देख सकते हैं। इन दो रचनाओं में गुप्त जी के विचारों की गहनता और अभिव्यक्ति की उत्कृष्टता प्रकट हुई है। मानव मन की विभिन्न मनोदशाओं को दर्शाने के लिए उचित शब्दों का प्रयोग किया है। 'साकेत' की रचना में गुप्त जी खड़ी बोली के माध्यम से व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक भावों को चित्रित करने में एक सिद्धहस्त कवि के रूप में हमारे सामने आते हैं। मन्थरा की सीख मानकर कैकेयी का यह रूप कितना भयानक और स्वाभाविक है–

उठी तत्क्षण कैकेयी कांप, अधर दंशन करके कर चांप।
अन्त में सारे अंग समेट, गई वह वहीं भूमि पर लेट।।

कैकेयी के क्रोध और असन्तोष का चित्रण गुप्त जी ने 'अधर–दंशन' तथा ''अंग समेटना'' आदि शब्दों के प्रयोग द्वारा प्रस्तुत किया है।

उर्मिला को लक्ष्मण को यह कहना कि–

'मेरे उपवन के हरिण आज वनचारी।
मैं बांध न लूंगी तुम्हें तजो भय भारी।।

इन पंक्तियों में उर्मिला की भावनाओं की अत्यंत सरल अभिव्यक्ति है। प्रत्येक प्रकार के भाव को भाषा की परिधि में बांधने की क्षमता गुप्त जी की लेखनी में दिखाई देती है। इसी तरह, 'यशोधरा' की रचना द्वारा 'यशोधरा' के जीवन को भी भारतीय आदर्शों और मानवीय प्रवृत्तियों के आधार पर प्रस्तुत किया है।

'दीन न हो गोपे, सुनो हीन नहीं नारी कभी।'

कहकर नारी की हीनता को अमान्य सिद्ध कर दिया, क्योंकि वह तो पूज्य है।

'अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी,
आंचल में है दूध और आंखों में पानी'।

इन पंक्तियों द्वारा गुप्त जी ने भारतीय नारी के आसुंओं और उसकी पीड़ा का वास्तविक रूप प्रस्तुत किया है। हम देखेंगे कि खड़ी बोली के विकास का स्वाभाविक रूप यशोधरा में दिखाई देता है। गुप्त जी ने नारी का महत्व व्यक्त करने के लिए 'गोपा बिना गौतम भी ग्राहय नहीं मुझको' इस उक्ति का सार्थक प्रयोग किया है। 'क्या भाग रहा हूं भार देख! तू मेरी ओर निहार देख। मैं त्याग चला निस्सार देख'।

इन पंक्तियों में सार्थक शब्दों का यथास्थान और यथा–अवसर प्रयोग किया है। गुप्त जी ने संस्कृत शब्दों का प्रचुर प्रयोग भी बार–बार किया है परन्तु उनकी भाषा संस्कृत–बहुला नहीं है। तद्भव और तत्सम शब्दों का प्रयोग उनकी रचनाओं में मिलता है– उदाहरण शब्द का एक उदाहरण देखिए–

भर गया भिनय पुराधिष्ठामि,
रतिमुखाब्ज तिमिराम्बोधिस मुद्धृता

कुछ अप्रचलित संस्कृत शब्दों का प्रयोग भी गुप्त जी ने किया है। जैसे अरून्तुद, त्वेष, आस्य आदि। गुप्त जी ने साकेत में कुछ देशज शब्दों का प्रयोग किया है जो बोलचाल के शब्द है और ब्रजभाषा, बुन्देलखण्डी, अवधी आदि में प्रचलित भी थे– जैसे मचिया, डिढौना, धुंवाधार, निगोड़ी, जल लौं, सहेजा, जूझना इत्यादि। गुप्त जी ने छोटे–छोटे समास वाले पदो के साथ–साथ दीर्ध सामासिक पदों का भी प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण देखें–

1. कवि की मानस– कोष विभूति– विहारिणी
2. जन–सिन्धु तरंग चेष्टितः।
3. निविराम्बोधि समृद्धृता मही।

गुप्त जी ने सूर, तुलसी और भारतेन्दु की परम्परा को अपनाकर अपनी रचनाओं में मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग व्यापक रूप में किया है। इसका कारण था अपनी भाषा को लोक–मानस तक पहुंचाना। लोकोक्ति और मुहावरों का प्रयोग भाषा को सशक्त तथा उसमें सौंदर्य लाने हेतु भी किया है। कुछ उदाहरण देखें–

आश्चर्य है घर में उन्होंने सिन्धु को है भर दिया

(भारत–भारती)

सामने से हट अधिक न बोल, द्विजिह्वे
रस में विष मत घोल

(साकेत)

मेरी मलिन गूंदड़ी में भी है राहुल –सा लाल।

(यशोधरा)

इसके अतिरिक्त धूल भरे हीरे, मन मारना, प्राणों पर खेलना, लहू बहाना, कागजी घुड़दौड़ आदि अनेक मुहावरों का आकर्षक प्रयोग किया है। गुप्त जी ने भाषा का सौन्दर्य बढ़ाने के लिए साथ–साथ भाषा में प्रवाह निर्माण करने हेतु लोकोक्तियों का प्रयोग किया है। कुछ मुहावरों और लोकोक्तियों के वास्तविक रूप में थोड़ा परिवर्तन भी किया है लेकिन उससे उनकी भाषा के सौन्दर्य और शुद्धता में कमी नहीं आई है। गुप्त जी ने कुछ लोकोक्तियों

का प्रयोग काव्य को अधिक बोधगम्य और सामान्य जन के समझने के लिए किया है। जैसे–

सिंह और मृग एक घाट पर पानी पीते हैं।

एक–एक दो हुए उन्हें एकादश जाने।

पापी जन का पाप उसी का भक्षक होगा।

इस तरह, हम देखते हैं कि गुप्त जी के काव्य का मुख्य उद्‌देश्य जनमानस तक पहुंचकर उनमें चेतना जगाना था।

काव्य रूप

गुप्त जी की प्रवृत्ति प्रबंध काव्य की ओर रही है। उनकी दो रचनाएँ 'साकेत' और 'यशोधरा' प्रबंधात्मक है। परन्तु उनके प्रबंध काव्य परम्परागत प्रबंध काव्यों से अलग हैं। उनके काव्य के नायक, संघर्षशील और वीर होते हुए भी जन–सामान्य के एक प्रतिनिधि के रूप में उभरते हैं। वे अधिक मानवीय हैं। उनके प्रबंध काव्यों में गीतात्मक प्रवृत्ति अधिक है। गुप्त जी ने संवाद शैली के द्वारा प्रबंध काव्य को गति प्रदान की है। संवादों की सहायता से विषयवर्णन सजीव और आकर्षक हो गया है। 'साकेत' में उर्मिला–लक्ष्मण संवाद और कैकेयी–मंथरा संवाद 'यशोधरा' में यशोधरा–संवाद, महत्वपूर्ण संवादों के उदाहरण हैं। संवाद का एक उदाहरण इस प्रकार है–

'शुभे तुम्हारे कौन उभय ये श्रेष्ठ है?

गोरे देवर, श्याम उन्हीं के ज्येष्ठ हैं।'

काव्य शैली के बाद हम अलंकार और छंद के बारे में विचार करें।

अलंकार योजना : गुप्त जी का काव्य अलंकारों की दृष्टि से पर्याप्त समृद्ध है। उन्होंने काव्य सौंदर्य की वृद्धि के लिए शब्दालंकार और अर्थालंकार दोनों का ही प्रयोग किया है। उनकी रचनाओं का कला पक्ष अलंकारों की समुचित योजना से समृद्ध है। कुछ उदाहरण देखिए–

पड़ी थी बिजली विकराल,

लपेटे थे घन जैसे बाल।

काले–काले बादलों को काले केशों की उपमा देकर रचना का सौन्दर्य द्विगुणित हो गया है।

रत्णाभरण भरे अंगों में ऐसे सुन्दर लगते थे।

ज्यों प्रफुल्ल वल्ली पर सौ सौ जुगनू जगमग जगते थे।

(पंचवटी)

इस रचना का भाव है, शूर्पणखा का शरीर पूर्ण रूप से खिली हुई लता के समान है और उस पर सोने के आभूषण जुगनुओं के समान जगमगा रहे हैं। जुगनुओं की चमक से शूर्पणखा के शारीरिक सौंदर्य की ओर भी कवि ने संकेत किया है। गुप्त जी द्वारा रूपक, श्लेष, व्यतिरेक, विरोधाभास, अनुप्रास इत्यादि अलंकारों का प्रयोग काव्य सौंदर्य को बढ़ाता है और भावाभिव्यक्ति में सहायक होकर कवि–कौशल का परिचय देता है।

गुप्त जी की भाषा विशेषताओं को देखने के बाद हम उनकी भाषा शैली को भी देखें।

8.4.2 काव्य शिल्प

छन्द योजना

गुप्त जी का समस्त साहित्य छन्दबद्ध है। उन्होंने विशेष रूप से लयात्मक, शास्त्रीय छन्दों का प्रयोग किया है। 'यशोधरा' में उन्होंने 'चम्पू' पद्धति भी अपनाई है और सिद्धराज, विष्णुप्रिया में मुक्त छन्द की रचनाएं भी की हैं। स्वयं गुप्त जी ने छन्द के बंध को काव्य के लिए संयम ही समझा और उस मर्यादा का पालन गुप्त जी ने अपने काव्य के अंतर्गत किया है। छंद कविता की गति को व्यवस्थित ही करते हैं। 'यशोधरा' का एक उदाहरण देखिए, जिसमें रोला छंद का प्रयोग किया गया है।

1. रोना गाना बस यही जीवन के दो अंग।
   एक संग मैं ले रही दोनों का रस रंग।।

2. सिद्धि हेतु स्वामी गये, यह गौरव की बात।
   पर चोरी चोरी गये यही बड़ा व्याघात।।

(यशोधरा)

एक गीतिका छंद का उदाहरण भी देखिए–

1. लोक शिक्षा के लिए अवतार जिसने था लिया।
   निर्विकार निरीह होकर नर सदृश कौतुक किया।।

2. राम नाम ललाम जिसका सर्व मंगल धाम है।
   प्रथम उस सर्वेश का श्रद्धा समेत प्रणाम है।।

(रंग में भंग)

गुप्त जी ने विविध छंदों का सफल प्रयोग किया है। इस सम्बन्ध में डॉ. नगेन्द्र ने कहा है–

> 'इतने प्रकार के छंदो का प्रयोग करना तो कठिन नहीं है परन्तु सर्वत्र प्रसंग का ध्यान रखना और प्रत्येक छंद को पूर्ण सफलता से प्रयुक्त करना कौशल का परिचायक है।'

खड़ी बोली में काव्य सृजन करते समय गुप्त जी ने जो छंदों का आधार अपनाया, वह उनकी समस्त काव्य रचना में निरंतर चलता ही रहा। इस प्रकार उनकी भाषा–शैली को 'छंदोबद्ध शैली' में भी कहा जा सकता है। छंदोबद्धता के कारण उनकी भाषा में तोड़–मरोड़ की त्रुटियों और आवृत्ति का दोष भी मिलता है परन्तु उन्होंने भाषा की शुद्धता और प्रसाद –गुण का पूरा–पूरा ध्यान रखा है।

गुप्त जी की काव्य शैली का विस्तृत अध्ययन करने के बाद यह भी देखना आवश्यक है कि गुप्त जी के काव्य पर संस्कृत के अलावा और कौन–कौन सी भाषाओं का प्रभाव पड़ा है। आचार्य द्विवेदी के शिष्य के रूप में गुप्त जी ने काव्य रचना का आरम्भ किया था तब खड़ी बोली पर कर्कशता का दोष लगाया जा रहा था। 'रंग में भंग' और 'जयद्रथ वध' के निर्माण के बाद गुप्त जी ने खड़ी बोली के शब्दों की कोमलता और सरसता की ओर ध्यान दिया। इसी समय बंगाल में रवींद्रनाथ ठाकुर के काव्य की चर्चा थी और उन्हें अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हो चुकी थी। स्वभावतः गुप्त जी का ध्यान बंगला काव्यों की ओर आकर्षित हुआ। बंगला के चार काव्य ग्रंथों का अनुवाद उन्होंने खड़ी बोली में प्रस्तुत किया।

इन अनुवादों की कोमल, कर्णप्रिय शब्दावली का प्रभाव गुप्त जी की विकटभट, सिद्धराज और विष्णुप्रिया आदि रचनाओं की भाषा पर स्पष्ट दिखाई देता है। बंगला के अलावा गुप्त जी की भाषा पर संस्कृत का भी गहरा प्रभाव रहा है। संस्कृत तत्सम शब्दों का प्रयोग उनके काव्य में विशेष रूप से दिखाई देता है। कालिदास की रचना वसन्त वर्णन का गुप्त जी ने खड़ी बोली में अनुवाद किया।

कुछ अंग्रेज़ी कविताओं का भी उन्होंने हिंदी में अनुवाद किया है। उनके काव्य पर अंग्रेज़ी का सीधा प्रभाव नहीं दिखाई देता, लेकिन कुछ अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग उन्होंने कविता में किया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गुप्त जी ने अन्य भाषाओं के केवल उन्हीं प्रभावों को ग्रहण किया जिससे खड़ी बोली को प्रतिष्ठित किया। खड़ी बोली के माध्यम से उन्होंने भारतीय अतीत को प्रस्तुत करके जन–जन तक राष्ट्रीयता का संदेश पहुंचाया।

बोध प्रश्न – 3

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

खड़ी बोली को हिंदी साहित्य की भाषा के रूप में स्थापित करने के लिए गुप्त जी अपने लेखन में देशज शब्दों, प्रादेशिक बोलचाल के शब्दों, मुहावरे और कहावतों का प्रयोग किया है। इनमें से प्रत्येक के दो–दो उदाहरण दीजिए।

1. देशज शब्द

   1).. 2) ....

   3) .... 4) ....

2. बोलचाल के शब्द

   1).. 2) ....

3. मुहावरे और कहावतें

   1.. 2) ....

अभ्यास

1. खड़ी बोली आंदोलन द्वारा गुप्त जी ने देश को मानसिक पराधीनता से मुक्ति दिलाने का प्रयास किया। इस बारे में अपने विचार दस पंक्तियों में लिखिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

8.5 मूल्यांकन

भारतीय नवजागरण के कारण हिन्दी (साहित्य) काव्य में जिन विभिन्न प्रवृत्तियों का विकास

हुआ था उन सभी प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति हम गुप्त जी के काव्य में देख चुके हैं। इन्हीं प्रवृत्तियों के आधार पर हम गुप्त जी के काव्य का मूल्यांकन करेंगे।

भारतीय नवजागरण के परिणामस्वरूप जिन सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, और साहित्यिक मूल्यों का विकास हुआ, उन सभी की अभिव्यक्ति गुप्त जी के काव्य में हुई है। सर्वप्रथम भारत के स्वतत्रंता आंदोलन को आगे बढ़ाने और राष्ट्रीय चेतना जागृत करने के उद्देश्य से गुप्त जी ने भारत–भारती काव्य की रचना की। इस काव्य रचना के माध्यम से भारतीय जनता के समक्ष अपने भव्य और उज्वल अतीत का चित्र प्रस्तुत करके देशवासियों के मन में देश की स्वाधीनता की भावना को जगाने का महत्वपूर्ण प्रयास किया। उत्तर भारत में गुप्त जी का भारत भारती काव्य इतना अधिक लोकप्रिय हुआ कि पाठशालाओं में छात्र और सत्याग्रही आंदोलनों में इनके पद्य गाते थे। गुप्त जी की अन्य काव्य रचनाओं में जैसे द्वापर, साकेत, जयद्रथ वध, सिद्धराज भी ऐतिहासिक और पौराणिक कथानकों के आधार पर भारतीय अतीत की भव्यता का चित्रण करते हैं। भारतीय जन–मानस में देश–प्रेम की भावना को जगाने हेतु गुप्त जी ने ऐतिहासिक और पौराणिक कथानकों का आधार लिया।

गुप्त जी का हिन्दू धर्म और वैष्णव धर्म परम्परा में विश्वास था। परन्तु उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन में विभिन्न धर्म और सम्प्रदायों का महत्व प्रतिपादन करने के उद्देश्य से 'काबा' और 'कर्बला' नाम से दो खण्ड काव्यों की रचना की और सिक्ख धर्म के गुरूओं के प्रति श्रद्धा व्यक्त करने के लिए 'गुरूकुल' काव्य की रचना की। सर्वधर्म समभाव के तत्व को गुप्त जी ने पूर्ण रूप से आत्मसात कर लिया था। उनकी दृष्टि में राष्ट्रीयता और विश्व प्रेम में धर्म कोई बाधा नहीं है। समाज के सभी वर्गों के लोगों की समानता और स्वतंत्रता का प्रतिपादन गुप्त जी ने अपने 'स्वदेश संगीत' और साकेत तथा सिद्धराज काव्य रचनाओं में किया है। गुप्त जी ने जन्म के आधार पर जाति के निश्चित होने का विरोध किया है और कर्म तथा शील को सामाजिक मर्यादा का आधार माना है। समाज के पिछड़े वर्ग के लोगों के उत्थान के लिए कार्य करने की आवश्यकता का प्रतिपादन किया है।

उन्नसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सुधारवादी आंदोलन के फलस्वरूप समाज में नारी की अपमानजनक स्थिति और उसके मर्यादित अधिकारों के प्रति लोगों ने सोचना शुरू किया। पर्दा–प्रथा, बाल–विवाह, सती प्रथा आदि का विरोध होने लगा और स्त्री शिक्षा, विधवा विवाह को प्रोत्साहन दिया जाने लगा। स्त्री–पुरूष समानता की भावना दृढ़ होने लगी। स्वतंत्रता आंदोलन में नारी की सक्रियता पर जोर दिया जाने लगा। गुप्त जी ने अपनी महत्वपूर्ण रचनाएँ 'यशोधरा' और 'साकेत' में नारी के महत्व और उसके आदर्शों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। 'विष्णुप्रिया' में मध्यवर्गीय परिवार की सहनशीलता, प्रतिपरायण और गृहस्थ नारी का चित्रण किया है।

गुप्त जी ने राष्ट्रीय चेतना, धार्मिक एकता, देश प्रेम और विश्व–बंधुत्व की भावना को बढ़ाने का प्रयास किया है। साथ ही साथ शोषण के विरूद्ध भी आवाज़ उठाई है। किसानों की दुर्दशा के प्रति उन्होंने केवल सहानुभूति ही व्यक्त नहीं की है बल्कि राज्य व्यवस्था और सरकारी नीति के विरूद्ध विरोध की आवाज भी उठाई है। मार्क्सवादी विचारधारा को आधार मानकर प्रगतिशील चेतना का गुप्त जी ने 'जयिनी' नामक काव्य रचना द्वारा उद्घोष किया है। श्रमजीवियों की समस्याओं की ओर भी उन्होंने संकेत किया है। उस समय की प्रत्येक सामाजिक समस्या के प्रति एक सजग रचनाकार की भांति गुप्तजी ने अपनी आवाज़ उठाई है।

गुप्त जी ने 'यशोधरा' नामक रचना में बौद्ध मत के सभी सांस्कृतिक सन्दर्भों को स्पष्ट किया है, जिसके आधार पर बौद्ध मत की वैदिक मत से भिन्नता स्पष्ट हो जाती है। वेदों के आधार

पर यज्ञ आदि कर्मकांडों में पशु बलि के रूप में उस समय जो हिंसा हो रही थी उसके विरोध में बौद्ध मत ने अहिंसा का मार्ग अपनाया। गुप्त जी ने बौद्ध मत के इस महत्वपूर्ण मार्ग को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्ति दी है। और वैदिक हिंसा का कटाक्ष भी किया है। उन्होंने मानवता की महत्ता और समानता में अटूट विश्वास प्रकट किया है।

गुप्त जी के आविर्भाव के समय राष्ट्रीय चेतना का विकास प्रारंभ हुआ था। सामाजिक दृष्टि से सुधारवादी आंदोलन की लहर बल पकड़ रही थी। साहित्यिक दृष्टि से स्वच्छन्दतावादी भावनाओं का विकास और नैतिक मूल्यों की स्थापना होने लगी थी। मैथिलीशरण गुप्त का काव्य उसी परम्परा की कड़ी है। इसी बात को ध्यान मे ंरखते हुए काव्य भाषा के विकास में गुप्त जी के योगदान का मूल्यांकन अपेक्षित है।

नवजागरण युग की राष्ट्रीय चेतना को उभारने में खड़ी बोली का स्वर सबसे अधिक मुखर रहा है। गुप्त जी ने खड़ी बोली को काव्य भाषा के रूप में अपनाकर भारतीय संस्कृति का गुणगान, राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति और राष्ट्रीय गौरव तथा स्वाभिमान की भावना को दृढ़ बनाने में बहुत बड़ा योगदान दिया। जो साहित्य, 'ब्रजभाषा' और 'अवधी' के कारण केवल आदर्शवादी बनकर रह गया था, उस साहित्य को गुप्त जी ने जन–सामान्य की भाषा के माध्यम से यथार्थ के धरातल पर प्रतिष्ठित किया। खड़ी बोली के स्वरूप निर्धारण में गुप्त जी का योगदान महत्वपूर्ण है। बोलचाल की भाषा का स्वाभाविक रूप और चित्रमय भाषा का प्रयोग करके गुप्त जी ने काव्यात्मक चित्र प्रस्तुत किए हैं। संस्कृत, ब्रजभाषा, अवधी के शब्दों का प्रयोग उन्होंने भाषा को समृद्ध बनाने के उद्देश्य से किया है। प्रचलित मुहावरे और कहावतों का प्रयोग करके भाषा को समृद्ध और सुंदर बनाया। खड़ी बोली को नवीन शब्द, उनके नवीन प्रयोग और नवीन अर्थ दिया जिनका विकास हम छायावादी कवियों की कविता में स्पष्ट रूप से देखेंगे। गुप्त जी ने काव्य शैली की सभी पद्धतियों का प्रयोग किया है। प्रबंधात्मक काव्य रचना पद्धति को अपनाकर हिन्दी काव्य को अनेक प्रकार की विशेषताओं और नवीनताओं से अलंकृत किया। वस्तु–विन्यास, भाव–व्यंजना, चरित्र–चित्रण, अभिव्यक्ति, अप्रस्तुत विधान छन्द रचना और भाषा के गठन संबंधी अनेक प्रकार के सफल प्रयोग गुप्त जी के काव्य में मिलते हैं। प्रबंध काव्य में गीति पद्धति का सफलतापूर्वक निर्वाह किया। गुप्त जी ने छन्दबद्ध रचना पर अधिक ध्यान दिया है। उनकी समस्त रचनाएं छन्दोबद्ध ही हैं। लयात्मक शास्त्रीय छन्दों का उपयोग उन्होंने किया है। यशोधरा में 'चम्पू' छन्द की पद्धति अपनाई है और सिद्धराज, 'विष्णुप्रिया' में मुक्त छन्द की रचनाएं भी की हैं। भाषा को विशिष्ट रूप प्रदान करने के साथ–साथ काव्य शैली के अनेक रूपों का प्रयोग अपनी काव्य रचनाओं में करने का प्रयास गुप्त जी के महत्वपूर्ण योगदान माने जा सकते हैं। गुप्त जी के द्वारा भाषा और शैली के क्षेत्र में किए इन प्रयोगों के कारण छायावादी काव्य को अपना मार्ग बनाने में सुविधा हुई।

8.6 शब्दावली

आत्मसात : भली भांति जाना और समझा हुआ

सांस्कृतिक पुनरूत्थान : प्राचीन संस्कृति को फिर से जानने समझने, अपनाने की चेष्टा

पुनरूज्जीवन : फिर से जीवित करना

साम्प्रदायिक समन्वय : विभिन्न धर्मों और संप्रदायों का मेल

मानिनी : स्वाभिमानी नायिका

कर्ण प्रिय भाब्दावली : सुनने में अच्छी लगने वाली शब्दावली

सर्व धर्म समभाव : सभी धर्मों को समान समझने की स्थिति।

8.7 उपयोगी पुस्तकें

रामविलास शर्मा, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

मैथिलीशरण गुप्त – व्यक्ति और अभिव्यक्ति, संपादकः डॉ. सी.एल. प्रभात।

8.8 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न–1

1. 20वीं शताब्दी में नवजागरण की चेतना के कारण राष्ट्रीय चेतना का विकास हुआ। सन् 1885 में कांग्रेस महासभा की स्थापना, बंगाल का विभाजन और स्वतंत्रता आन्दोलन के कारण भारतीय साहित्य में राष्ट्रीय भावना का स्तर ऊंचा हुआ। जिसकी प्रथम अभिव्यक्ति भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और महावीर प्रसार द्विवेदी के साहित्य में हुई। जिसने पराधीनता के बोध से स्वाधीनता के लिए प्रयत्नशील होने की चेतना जगाई।

2. i) राष्ट्रीय आन्दोल

   ii) सामाजिक सांस्कृति चेतना का विकास

   iii) आधुनिक हिंदी काव्य चेतना का विकास

   iv) विज्ञान के प्रति आस्था

   v) अंधविश्वास आदि से मुक्ति का प्रयास

3. 1. बाल–विवाह, अनमेल विवाह, सती प्रथा।

बोध प्रश्न–2

1. 1) अतीत चित्रण

   2) वर्तमान दुर्दशा का चित्रण

   3) गौरवपूर्ण इतिहास

   4) पौराणिक/ऐतिहासिक कथानक

   5) उज्जवल भविष्य की आकांक्षा

2. i) साकेत

   ii) यशोधरा

   iii) गौरवपूर्ण इतिहास

3. 8.3.4 का भाग देखें।

4. i) समानता का भाव

   ii) अस्पृश्यता का विरोध

   iii) मंदिर प्रवेश की अनुमति

   iv) बंधुत्व भाव

बोध प्रश्न– 3

1. 8.4.1 का भाग देखें
2. 8.4.1 का भाग देखें।
3. 8.4.1 का भाग देखें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 9 माखनलाल चतुर्वेदी और उनकी कविता

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 स्वतंत्रता–पूर्व हिन्दी कविता में राष्ट्रीय चेतना की पृष्ठभूमि

9.3 माखनलाल चतुर्वेदी का जीवन परिचय

9.4 पत्रकारिता और माखनलाल चतुर्वेदी

9.5 माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य का भाव पक्ष

9.6 माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य का रचना–शिल्प

9.7 माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य का मूल्यांकन

9.8 सारांश

9.9 उपयोगी पुस्तकें

9.10 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप :

- कवि के युग की प्रवृत्तियाँ बता सकेंगे/सकेंगी;
- कवि के व्यक्तित्त्व और कृतित्व का वर्णन कर सकेंगी/सकेंगे;
- कवि के राष्ट्रीय स्वर का विवेचन कर सकेंगी/सकेंगे;
- तीनों कविताओं 'कैदी और कोकिला', 'पुष्प की अभिलाषा' तथा 'सिपाही' शीर्षक कविता का रसास्वादन कर सकेंगी/सकेंगे;
- राष्ट्रीय नवजागरण में पत्रकारिता के माध्यम से कवि के योगदान का परिचय दे सकेंगी/सकेंगे; और
- कवि के काव्य का अपने शब्दों में मूल्यांकन कर सकेंगी/सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना का विकास भारतेन्दु युग से ही दिखाई देता है। यह राष्ट्रीय भावना अतीत–गौरव के गान एवं देश–प्रेम के रूप में अभिव्यक्त हुई है। बीसवीं शताब्दी में राष्ट्रीयता की भावना तेजी से उभरी, देशवासियों ने ब्रिटिश शासन की दुर्भावना को समझा और देश की एकता की आवश्यकता की गहराई से महसूस किया। दक्षिण अफ्रीका में गांधी जी का अहिंसात्मक प्रतिरोध सफल हुआ जिसने भारतवासियों को मानसिक बल प्रदान किया। देश में एक नये उत्साह की लहर दौड़ गई। इसी अवसर पर माखन लाल जी कविता के क्षेत्र में अवतरित हुए।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

9.2 स्वतंत्रता पूर्व हिन्दी कविता में राष्ट्रीय–चेतना की पृष्ठभूमि

हिन्दी कविता की समस्त काव्य–धाराओं में राष्ट्रीय काव्यधारा का विशेष महत्व है। राष्ट्रीय कविताओं द्वारा राष्ट्र के भिन्न–भिन्न वर्गों, सम्प्रदायों और प्रान्तों में भावात्मक एकता के विचार पुष्ट होते हैं। राष्ट्रीय कविताएँ जाति, समाज और प्रान्तीयता की संकीर्ण भावना मिटाती हैं, जन–सामान्य के ह्रदय में कर्तव्य की भावना जगाती हैं। इन्हीं कविताओं से प्रेरणा पाकर अनेक वीरों ने हँसते–हँसते अपने को देश की आज़ादी के लिए अर्पित कर दिया। वास्तव में हिन्दी कविता ने स्वाधीनता आन्दोलन में राष्ट्र को जगाने का महत्वपूर्ण कार्य किया।

आधुनिक हिन्दी कविता के प्रथम चरण में नवजागरण का प्रभाव व्यापक रूप से पड़ा। भारत में व्यापार के लिए आई हुई विदेशी जातियों ने यहाँ की राजनीतिक स्थिति का लाभ उठाकर छल–बल द्वारा भारत को अपना उपनिवेश बना लिया और अंग्रेज भारतीय जनता पर नाना प्रकार के अत्याचार करने लगे। भारत के नरेशों एवं जनता के साथ जिस प्रकार की नीति उन्होंने अपनायी उससे भारत का समस्त जन–मानस क्षुब्ध हो गया। लार्ड डलहौजी के अमानुषिक अत्याचार ने भारतीय जनता के ह्रदय में विद्रोह की आग सुलगा दी जो 1857 की क्रांति–ज्वाला बनकर धधक उठी। 1857 की इस क्रांति ने उग्र रूप धारण किया परन्तु अंग्रेजों ने उतनी ही क्रूरता एवं नृशंसता से इसका दमन किया। इस प्रकार 1857 की यह क्रांति असफल ही रह गई।

राष्ट्रीयता की भावना चूंकि विखंडित अवस्था में थी अतः प्रथम स्वाधीनता संग्राम असफल रहा। राजनीतिक आन्दोलनों में जैसे–जैसे तीव्रता आती गई वैसे–वैसे राष्ट्रीय चेतना प्रखर होती गई। परिणामस्वरूप समूचे देश ने अंग्रेजी सत्ता से मुक्त होने के लिए अपनी प्रान्तीय संकीर्णता को त्यागकर एकता और संगठन के महत्व को समझा।

अंग्रेज भारत में अपनी राजनीतिक जड़ें गहराई तक रखना चाहते थे अतः यहाँ की सांस्कृतिक चेतना समाप्त करने के लिए उन्होंने कदम उठाया। क्योंकि वे जानते थे कि किसी भी देश की जनता को गुलाम बनाए रखने के लिए वहाँ की सांस्कृतिक चेतना को समाप्त करना आवश्यक है। अंग्रेज यहाँ की शिक्षा–नीति में परिवर्तन करने लगे। संपूर्ण देश में अंग्रेजी शिक्षा–पद्धति चालू हो गई। ईसाई मिशनरियाँ अपने धर्म का प्रचार करने लगीं। धर्म–प्रचार के लिए इन्होंने अपनी धर्म–पुस्तकें यहाँ की भाषाओं में छपवाकर बिना मूल्य के वितरित की। यहाँ के लोगों के सामाजिक–धार्मिक विधानों में भी हस्तक्षेप करना आरम्भ किया और जो गलत रूढ़ियाँ समाज में व्याप्त थीं उनका विरोध किया। फलतः भारतीय समाज पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित होने लगा। भारतीय संस्कृति एवं पाश्चात्य संस्कृति के इस संघर्ष को दूर करने के लिए सांस्कृतिक आन्दोलन चलाए गए। इन आन्दोलनों को चलाने में राजाराम मोहन राय, राम–कृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, लोकमान्य तिलक, स्वामी दयानन्द सरस्वती, अरविन्द रमण महर्षि के नाम उल्लेखनीय हैं।

राजा राममोहनराय ने ब्रहम समाज की स्थापना की। इसका मुख्य उद्‌देश्य समाज में व्याप्त कुरीतियों को जड़ से मिटाना था। इन्होंने विधवा–विवाह–निषेध, सती प्रथा तथा अन्य कुरीतियों का विरोध किया और स्त्री शिक्षा, विधवा विवाह, अन्तर्जातीय विवाह आदि का समर्थन किया। भारतीय जन–जीवन में आरंभिक जागरण की दृष्टि से इस संस्था का बड़ा महत्व रहा। आरंभ में कवीन्द्र, रवीन्द्र ने भी इस संस्था को समर्थन दिया। धर्म और समाज के क्षेत्र में इस संस्था ने जागरण लाने का प्रयत्न किया।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना की। इन्होंने ईसाई धर्म के विरुद्ध आन्दोलन चलाया। लोगों में स्व–धर्म सम्मान की भावना जगी। जाति–अभिमान और राष्ट्रीय चेतना का विकास हुआ। स्वतंत्रता आन्दोलन की चेतना को बल मिला। धर्म के नाम पर होने वाले आडम्बरों का विरोध किया।

रामकृष्ण परमहंस के आदर्शों को लेकर रामकृष्ण मिशन की स्थापना हुई। इस संस्था ने भी राष्ट्रीय आन्दोलनों को बल प्रदान किया। स्वामी विवेकानन्द ने भी इस संस्था को पूर्ण सहयोग दिया, भारतीय जन–मानस को सभी क्षेत्रों में प्रबुद्ध किया।

महाराष्ट्र के महादेव गोविन्द रानाडे ने भी धर्म एवं समाज में व्याप्त रूढ़ियों का विरोध किया, राष्ट्रीय चेतना जगाई। महाराष्ट्र की जागृति में इस संस्था का योगदान महत्वपूर्ण था।

इस दृष्टि से थियोसोफिकल सोसाइटी का महत्व भी कम नहीं है। यद्यपि इसकी स्थापना अमेरिका में हुई थी परन्तु श्रीमती एनी बेसेन्ट के इस संस्था में आने से इस संस्था को उद्देश्य पूर्ति में सफलता मिली। सामाजिक–चेतना, जातीय स्वाभिमान, आधुनिक चेतना, भारतीय सभ्यता, संस्कृति एवं दर्शन का सम्यक अध्ययन आदि की दृष्टि से इस संस्था का महत्व है। इन्होंने ही भारतीय संस्कृति एवं दर्शन के अध्ययन एवं प्रचार हेतु काशी में सेण्ट्रल हिन्दू स्कूल खोला वही बाद में कॉलेज और फिर हिन्दू विश्वविद्यालय के रूप में विकसित हुआ।

इसके अतिरिक्त सनातन धर्म सभा जैसी संस्थाओं ने भी सामाजिक कुरीतियों को दूर करने का कार्य किया। लोगों में राष्ट्रीय चेतना जागृत की।

इण्डियन एसोसिएशन और इण्डियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना ने लोगों के मन में एक राजनीतिक चेतना जगाई। सन् 1876 ई. में श्री सुरेन्द्र नाथ बनर्जी ने कलकत्ता में इण्डियन एसोसिएशन संस्था का आरंभ किया। इन्होंने अंग्रेजों के विरूद्ध देश व्यापी आंदोलन चलाया। यद्यपि बहुत सफलता नहीं मिली लेकिन लोगों में राजनीतिक चेतना आई और राष्ट्रीय स्तर पर एकजुट होकर कार्य करने की भावना जगी। इण्डियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना सन् 1885 में श्री ह्यूम नामक एक अंग्रेज ने की जिसका कार्य केवल भाषण तक ही सीमित रहा परन्तु बाद में बाल गंगाधर तिलक जैसे लोगों का सक्रिय योगदान इस संस्था को मिला और सिद्धांतों में परिवर्तन हुआ। सन् 1905 में जब बंगाल का विभाजन हुआ तो इस संस्था के आन्दोलन द्वारा भारतीय जन–मानस में राजनीतिक जागृति आई और बाद में महात्मा गांधी जैसे लोगों के सहयोग से इस संस्था को अपने उद्देश्य में सफलता मिली। यह वह समय था जब लोगों में राजनीतिक चेतना का जन्म हुआ। देश की वास्तविक दशा का भान लोगों को होने लगा। सुधारवादी आन्दोलनों से धार्मिक एवं सामाजिक जागृति आई और कांग्रेस की स्थापना तो स्वदेशी आन्दोलन जोर पकड़ने लगा। सारे देश में देश–भक्ति की लहर प्रवाहित हो गई।

9.3 माखनलाल चतुर्वेदी का जीवन–परिचय

माखनलाल चतुर्वेदी का जन्म 4 अप्रैल सन् 1889 को होशंगाबाद से 14 मील दूर 'बाबई' ग्राम में हुआ था। इनके पिता श्री नन्दलाल चतुर्वेदी प्राइमरी स्कूल के अध्यापक थे। पं. नन्दलाल स्वयं बड़े साहसी और स्वाभिमानी व्यक्ति थे जिसका प्रभाव उनके पुत्र माखनलाल पर भी पड़ा। असमय ही इनके पिता स्वर्गवासी हो गए और बालक माखनलाल के भरण–पोषण

और शिक्षा–दीक्षा का भार उनकी सात्विक विचारों वाली माताजी श्रीमती सुकर बाई पर पड़ा। 'बाबई' जैसी एक छोटी सी बस्ती में बालक माखनलाल की शिक्षा–दीक्षा की कोई उचित व्यवस्था नहीं हो सकती थी इसलिए ऊँचे संस्कारों वाली जननी ने अपने बेटे के प्रति मोह को भुलाकर उन्हें उनकी बुआ के पास 'सिमरनी' नामक कस्बे में भेज दिया। बालक माखनलाल ने सिमरनी में ही रहकर, लगभग दस वर्षों तक शिक्षा पाई और वहीं उन्हें काव्य–रचना की पहली अन्तः प्रेरणा प्राप्त हुई। बचपन से ही इन्हें तुकबंदियाँ करने का शौक था। अतः तुकबंदियाँ करते–करते इनकी काव्य प्रवृतियाँ पुष्ट हो चली थीं। किन्तु अपने जन्मजात संस्कारों के बल पर उन्होंने स्वाध्याय से ही अपने ज्ञान–भण्डार को समृद्ध किया। चतुर्वेदी जी ने संस्कृत, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती, बंगला आदि भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया और इन सभी भाषाओं में उपलब्ध उच्च कोटि के साहित्य का अध्ययन भी कर लिया। सन् 1904 में 15 वर्ष की अवस्था में इनका विवाह ग्यारसी बाई के साथ हुआ। 1905 ई. में बम्बई के निकट एक देहात 'मसन' में वे अध्यापक नियुक्त हुए। देश की मिट्टी से इनका बचपन से ही अनन्य प्रेम था। यही कारण है कि मिडिल परीक्षा देने के लिए जब ये जबलपुर गए तब इनकी पहचान क्रांतिकारी युवकों से हुई। उस समय से ही ये उन्हें पिस्तौल, बम आदि छुपाने तथा ले जाने में सहायता किया करते थे।

1906 में जब कलकत्ता कांग्रेस में लोकमान्य तिलक पधारे तो माखनलाल जी भी उनकी सुरक्षा के लिए कलकत्ता गए। वहीं से लौटते समय काशी में इन्होंने क्रांतिकारी नेता देवसकर से दल की दीक्षा ली। इसके बाद इनका क्रांतिकारियों से संपर्क बढ़ा। इनके संबंधों का क्षेत्र विस्तृत हो चला था। सैयद अलीमीर, स्वामी रामतीर्थ, पं. माधवराव सप्रे तथा माणकचन्द जैन का इन पर व्यापक प्रभाव पड़ा। सप्रे जी ने इनमें देश–भक्ति की भावना को दृढ़ किया तथा इनके राजनीतिक गुरू बने।

अपने सशस्त्र क्रांतिकारी आन्दोलन के समय में श्री चतुर्वेदी जी को सन् 1905 ई. से 1912 ई. तक शिक्षक का व्यवसाय अपनाना पड़ा। सन् 1907 ई. में जब वे 'मसन' कस्बे से खण्डवा के स्कूल में अध्यापक होकर आए तो वे जल्दी ही खण्डवा और मध्यप्रदेश के अच्छे कवि के रूप में मशहूर हो गए। साहित्य और पत्रकारिता के क्षेत्र में ये इतने आगे बढ़ चुके थे कि इनके सामने यह प्रश्न उपस्थित हुआ–ये सरकारी नौकरी में रहें या स्वतंत्र वाणी और मुक्त जीवन को स्वीकार करें। इन्होंने दूसरे जीवन को ही पसन्द किया और 1913 में अध्यापन के व्यवसाय को सदा–सदा के लिए नमस्कार कर दिया।

जीवन, साहित्य और राजनीति की चिन्ता में दिन–रात व्यस्त रहने के कारण माखनलाल जी अपने परिवार की ओर समुचित ध्यान नहीं दे पाते थे। उनका दिन कार्यों की व्यस्तता में और रात को अधिकांश समय अध्ययन में बीत जाता था। इस व्यस्त जीवन का परिणाम यह हुआ कि वे अपनी जीवन संगिनी सौ. ग्यारसी बाई की ओर भी अधिक ध्यान नहीं दे पाये। इधर ग्यारसी बाई राजयक्ष्मा का शिकार बन गई और भीतर–भीतर घुलते–घुलते एक दिन चिर निद्रा में लीन हो गई। माखनलाल जी को उनकी सही दशा का भान तब हुआ जब उन्हें बचाना मानवीय सामर्थ्य के बाहर हो गया था। माखनलाल जी को इसका कितना दुःख और पश्चाताप था कि इसका आभास उस समय लिखी कविता की पंक्ति से हो जाता है –

> भाई, छेड़ो नहीं, मुझे खुलकर रोने दो,
> यह पत्थर का हृदय आँसुओं से धोने दो।

सन् 1906 ई. से 1920 ई. तक श्री चतुर्वेदी जी निरन्तर क्रांतिकारी दल के लिए कार्य करते

रहे। उन्होंने अनेक क्रांतिकारियों को अपनी जान का खतरा लेकर भी शरण दी। कई बार उनके घर और कार्यालय की तलाशी ली गई।

सन् 1919–20 में माखनलाल जी के जीवन में एक नया मोड़ आया। भारतीय राजनीति में महात्मा गांधी का प्रवेश हो गया था। उन्होंने काशी विश्वविद्यालय में क्रांतिकारियों को निःशस्त्र आने का निमंत्रण दिया। माखनलाल जी भी वहाँ पहुँचे और गांधी जी की बातों से इतने प्रभावित हुए कि उनके अनुयायी बनकर लौटे।

माखनलाल जी का जीवन और साहित्य दोनों ही राष्ट्र सेवा के लिए समर्पित था। अपने जीवन में वे राष्ट्रीय आन्दोलनों में हिस्सा लेते रहे, पहले हिंसावादी क्रांतिकारी दल में दीक्षा लेकर और बाद में गांधी जी के अहिंसात्मक सत्याग्रही बनकर। इन्होंने जहाँ कविता के माध्यम से राष्ट्रभक्ति के भाव व्यक्त किये वहीं पत्रकारिता के माध्यम से देश की राजनीति में योग दिया। अपने पत्र और लेखों द्वारा ब्रिटिश शासन का खूब विरोध किया। इनकी विद्रोहात्मक लेखनी से ब्रिटिश शासन घबरा गया और सन् 1921, 1922 और 1927 में राजद्रोह के अभियोग में इन्हें कारागार भेजता रहा। स्वतंत्रता आन्दोलन को सक्रिय प्रेरणा देने की प्रवृत्ति उनके काव्य में ही नहीं बल्कि उनके जीवन में भी मिलती है। जेल–यात्रा उनके लिए गौरव–यात्रा थी, इसीलिए उन्होंने कहा–

'क्या ? देख न सकती जंजीरों का गहना।
हथकड़ियाँ क्यों? यह ब्रिटिश राज का गहना।'

माखनलाल चतुर्वेदी एक ओर तो गांधीवाद का अनुगमन करते थे तो दूसरी ओर क्रांतिकारियों के प्रति स्नेह भी रखते थे। बलिदानी वीरों के प्रति उनके मन में गहरी आत्मीयता थी। अतः वे जहाँ क्रांतिकारियों को सहायता पहुँचाते थे वहीं दूसरी ओर असहयोग आन्दोलन और राष्ट्रीय गतिविधियों में सक्रिय हिस्सा भी लेते थे। सरकार की इन पर कड़ी नजर थी। अपने भाषणों के क्रम में इन्होंने जबलपुर में अंग्रेजी शासन के खिलाफ आवाज उठाई। परिणाम स्वरूप 12 मई 1930 को उन पर पुनः राजद्रोह का अभियोग लगाया गया और जबलपुर में उन्हें एक मास की सजा हुई।

राजनीतिक नेता, पत्रकार, कवि तथा गद्यकार के रूप में इन्होंने देश और साहित्य की सेवा की। इस कारण ये लोकप्रिय हुए। अनेक संस्थाओं ने इनका स्वागत किया। लोगों ने इन्हें सम्मान दिया।

1943 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ने 'हिमकिरीटनी' पर उन्हें देव पुरस्कार दिया। हरिद्वार में उनका चांदी के सिक्कों से तुलादान हुआ।

1947 में उन्हें 'साहित्य वाचस्पति' उपाधि प्रदान की गयी।

1954 में 'साहित्य अकादमी' की ओर से 'हिमतरंगिनी' पर 5,000 रुपयों का राष्ट्रीय पुरस्कार दिया गया।

1963 में गणतंत्र दिवस पर भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन ने व्यक्तिगत गुणों के लिए इन्हें पद्मभूषण की उपाधि प्रदान की। परन्तु जब भारतीय संसद में हिन्दी को पूर्णतः राष्ट्रभाषा बनने की अवधि में परिवर्तन करने के लिए विधेयक पारित किया गया तो उसके विरोध में इन्होंने वह सम्मान लौटा दिया। वे आजीवन आर्थिक संघर्ष से जूझते रहे। परन्तु जीवन के अंतिम क्षण तक उनका मनोबल शिथिल नहीं हुआ। शरीर के थक जाने पर भी

वे मन से चिर युवा बने रहे। अपने अन्तर्मन के उत्साह को प्रकट करते हुए उन्होंने 'माता' में लिखा है –

'कौन कहता है कि तुम वृद्धत्व मेरे पास आये।'

भावनाओं की तरुणाई चतुर्वेदी जी की सांसों की प्रथम और अंतिम शक्ति थी। वे मन से चिर युवा थे। उनका उत्साह युवकों के लिए स्पृहणीय था। जीवन के संघर्षों के बीच सब कुछ उत्सर्ग कर दिनांक 30 जनवरी 1968 को उन्होंने खण्डवा में अपने निवास स्थल पर प्राण त्याग दिये। उन्हीं के शब्दों में उनके जीवन को यदि कहना चाहें तो हम कह सकते हैं –

सूली का पथ ही सीखा है
सुविधा सदा बचाता आया।
मैं बलिपथ का अंगारा हूँ
जीवन ज्वाल जगाता आया।

रचनायें :

1. कृष्णार्जुन युद्ध नाटक, सिरजन और मंचन 1916, प्रकाशन (पुस्तकाकार) 1918 ई.।
2. हिमकिरीटिनी (कविता संग्रह) 1943 ई.।
3. साहित्य–देवता (निबन्ध संग्रह) 1948 ई., यद्यपि इसके अधिकांश निबन्ध 1921–22 में विलासपुर जेल में लिखे गए थे।
4. हिमतरंगिनी (कविता–संग्रह) 1949 ई.।
5. माता (कविता–संग्रह) 1951 ई.।
6. युग चरण (कविता–संग्रह) 1956 ई.।
7. समर्पण (कविता–संग्रह) 1956 ई.।
8. अमीर इरादेः गरीब इरादे (निबन्ध–संग्रह) 1960 ई.।
9. वेणु लो गूंजे धरा (कविता–संग्रह) 1960 ई.।
10. समय के पाँव (संस्मरणात्मक निबन्ध) 1962 ई.।
11. चिन्तन की लाचारी (भाषण–संग्रह) 1965 ई.। 1
12. बीजुरी काजल आँज रही (कविता–संग्रह) 1980 ई., (जिसमें 1955 से 64 के बीच रची रचनाएँ हैं।)
13. रंगों की बोली (निबन्ध–संग्रह) 1982 ई. (जिसमें बहुत पुराने 1944 तक के निबन्ध भी हैं।)

बोध प्रश्न–1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. राष्ट्रीय चेतना की कविता जन जीवन को किस रूप में प्रभावित करती है ?

....

....

....

2. वे कौन–कौन से सुधारवादी आन्दोलन थे जिसने स्वतंत्रता पूर्व की राष्ट्रीय चेतना को प्रभावित किया।

....

....

....

बोध प्रश्न–2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. माखनलाल चतुर्वेदी का जन्म कब और कहाँ हुआ था?

....

....

....

2. उन्हें किन–किन भाषाओं का ज्ञान था?

....

....

....

3. उनके जीवन पर किन–किन महापुरुषों का प्रभाव पड़ा?

....

....

....

बोध प्रश्न–3

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. माखनलाल चतुर्वेदी ने किन–किन पत्रों का संपादन किया?

....

....

....

2. पत्रकारिता के क्षेत्र में वे किन–किन विभूतियों के निकट संपर्क में आये?

....

....

....

3. वह कौन–सा पत्र था जो उन दिनों राष्ट्रीय जागरण का अग्रदूत था?

....

....

....

बोध प्रश्न–4

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. माखनलाल चतुर्वेदी किस उपनाम से विख्यात हुए?

....

....

....

2. चतुर्वेदी जी की कविताओं के भावपक्ष को किन–किन रूपों में बाँटा जा सकता है?

....

....

....

3. चतुर्वेदी जी की कविताओं में लोक जीवन का प्रभाव किस रूप में है?

....

....

....

बोध प्रश्न – 5

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. इनकी प्रमुख कविताओं के नाम बताइये जो इनकी राष्ट्रीय भावना और कवि व्यक्तित्व की वीरता को उजागर करती है।

....

....

....

2. 18 फरवरी 1922 को बिलासपुर जेल में इन्होंने कौन सी प्रसिद्ध रचना लिखी थी?

....

....

....

बोध प्रश्न – 6

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. कोयल की वाणी को कवि रणभेरी क्यों कहता है?

....

....

....

2. 'पुष्प की अभिलाषा' के माध्यम से किसकी अभिलाषा व्यक्त हुई है?

....

....

....

3. निम्नलिखित पंक्तियों का अर्थ स्पष्ट कीजिए –

   i) मुझे नसीब कोठरी काली

   ii) रोना भी है मुझे गुनाह

9.4 पत्रकारिता और माखनलाल चतुर्वेदी

श्री माखनलाल चतुर्वेदी निर्भीक पत्रकार भी थे। पत्रकार के रूप में उनका व्यक्तित्त्व शत–शत अवरोधों के सामने न तो झुका और न ही बिका और 1913 में जब श्री कालूराम गंगराडे ने 'प्रभा' मासिक का प्रकाशन किया तो इन्होंने 30 रुपये मासिक वेतन पर सहायक संपादक के रूप में अपने आपको पूर्ण रूप से इस कार्य से जोड़ दिया। इनमें मुख्य थे–श्री माधवराव सप्रे, श्री गणेश शंकर विद्यार्थी, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, महात्मा मुंशीराम तथा पंडित विष्णु दत्त शुक्ल। 'प्रभा' के माध्यम से माखनलाल जी ने राष्ट्रीय और सामाजिक जागरण का कार्य संपन्न किया।

माखनलाल जी ने तन–मन से 'प्रभा' की सेवा की परन्तु अनेकानेक कठिनाइयों के कारण 'प्रभा' बारह अंक प्रकाशित होने के बाद बंद हो गई। बन्द होने का विशेष कारण था कि मध्यप्रान्त में हिन्दी का कोई अच्छा प्रेस न था और 'प्रभा' पूना से छपती थी। अतः अनेकानेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। एक वर्ष बाद गणेश शंकर विद्यार्थी के प्रयत्नों से 'प्रभा' फिर कानपुर से प्रकाशित हुई। 'प्रभा' के संपादन एवं प्रकाशन में वे इतने तल्लीन हो गए कि उन्होंने घर–गृहस्थी के सुखों को त्याग दिया तथा अपनी पत्नी की आहुति भी प्रभा की पत्रकारिता के यज्ञ में चढ़ा दी। परन्तु आर्थिक संकटों के कारण एक वर्ष बाद 'प्रभा' पुनः बंद हो गई। 'प्रभा' की विभिन्न सम्पादकीय टिप्पणियाँ और विविध विषयों पर आपके विचार आज साहित्य की अक्षय निधि हैं।

'प्रभा' की अकाल मृत्यु माखनलाल जी के संकल्प और शक्ति को नहीं तोड़ पाई। कालान्तर में वही निष्ठा 'कर्मवीर' में प्रतिफलित हुई। 17 जनवरी, 1920 को जबलपुर से साप्ताहिक 'कर्मवीर' निकला। इसके प्रधान सम्पादक श्री सप्रे जी तथा सम्पादक माखनलाल चतुर्वेदी थे। इस समय तक (1920) चतुर्वेदी जी सशस्त्र क्रांति के विचारों की सक्रियता से विश्राम लेकर गांधी जी की राजनीति में सहयात्री हो गए थे। 'कर्मवीर' नामकरण का भी अपना इतिहास है। पत्र का नामकरण एक ऐसे लोकनायक जीवित व्यक्ति के अनुरूप रखना था जो राष्ट्र के जीवन में नवीन चेतना भर रहा था। उन दिनों महात्मा गांधी जन–जीवन में कर्मवीर मोहनदास कर्मचंद गांधी कहलाते थे अतः जन–जीवन में नवीन क्रांति उत्पन्न करने

के पवित्र उद्देश्य से नये साप्ताहिक का नाम 'कर्मवीर' रखना माखनलाल जी का ही व्यक्तिगत साहस था।

'कर्मवीर' ने देशी रियासतों के दुराचारी राजा–महाराजाओं का खूब भंडा–फोड़ किया। मध्यभारत के एक महाराजा ने उन्नीस हजार रुपये देकर 'कर्मवीर' का मुँह बन्द करना चाहा, किन्तु चतुर्वेदी जी ने आर्थिक कठिनाइयों के होने पर भी इस धनराशि को ठुकरा दिया और 'कर्मवीर' का ईमान बेचने से इन्कार कर दिया। यह पत्र बहुत समय तक देशी राज्यों की प्रजा का मुखपत्र बना रहा। एक बार तो अठारह रियासतों ने इसका प्रवेश बन्द कर दिया परन्तु फिर भी इन्होंने बड़े साहस से स्थिति का सामना किया।

'कर्मवीर' साप्ताहिक और 'प्रभा' में चतुर्वेदी जी की प्रायः वे सभी कविताएँ प्रकाशित हुई थीं, जिन्होंने तत्कालीन हिन्दी काव्य में, क्रांतिकारी एवम् राष्ट्रीय विचारधारा को एक विशिष्ट काव्य प्रवृत्ति के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया। सन् 1920 ई. में वे झण्डा–सत्याग्रह में गिरफ्तार हुए और नागपुर जेल के अपने कारावास काल में, उन्होंने शहीद सत्याग्रही हरदेव नारायण सिंह की स्मृति में 'झण्डे की भेंट' नामक अपनी प्रसिद्ध कविता लिखी जो 'प्रभा' के झण्डा अंक में प्रकाशित हुई थी, उसकी कुछ पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं –

> ले झण्डा, चल पड़ा, प्राण का मोह छोड़, वह तरुण युवा।
> उसकी गति पर अहा। देश के अमरों को भी क्षोभ हुआ।
> सजा हुई, जंजीरें पहनी, दुर्बल था, पर वार हुए,
> मिट्टी, मोट, चक्कियाँ, कोल्हू, हँस–हँस कर स्वीकार हुए।
> मातृभूमि! मैं तेरी सूरत देख, सभी सह जाऊँगा।
> दे लें दण्ड, आर्यबालक हूँ, मस्तक नहीं झुकाऊँगा।

जेल से छूटते ही चतुर्वेदी जी पुनः 'कर्मवीर' के सम्पादन में प्राणपण से जुट गए। उस समय असहयोग आन्दोलन अपनी चरम सीमा पर था और 'कर्मवीर' के सम्पादकीय लेखों ने उसे मध्यप्रदेश में तीव्रतर बनाने में भारी योगदान दिया था। 12 मई, 1921 ई. की रात को पुलिस उन्हें 'कर्मवीर' कार्यालय से हथकड़ी लगाकर ले गई और उन्हें कठोर कारावास का दंड मिला।

'प्रभा', 'कर्मवीर' और 'प्रताप' के माध्यम से उन्होंने देश की जनता में व्याप्त जड़ता को तोड़ा एवं क्रांति का संदेश दिया। इस दृष्टि से कर्मवीर मध्य प्रदेश की पत्रकारिता की एक विशिष्ट उपलब्धि है। उनकी पत्रकारिता ने आत्मशौर्य एवं अपराजेय भावना को जन–जन में भरा और लेखकों, कवियों तथा पत्रकारों की एक ऐसी पीढ़ी तैयार की जिनकी अभिव्यक्ति निरन्तर आग से नहाती रही। पत्रकारिता के क्षेत्र में श्री माखनलाल चतुर्वेदी का योगदान ऐतिहासिक महत्व रखता है।

9.5 माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य का भाव–पक्ष

चतुर्वेदी जी की कविताओं का अनुशीलन करने पर 'ज्ञात' होता है कि उनके हृदय में प्रेम की एक अखंड एवं अनन्त धारा प्रवाहित हो रही थी। यह प्रेम कहीं श्रृंगार–भावना के रूप में है और कहीं भगवद् भक्ति के रूप में। अतः इनकी कविताओं में व्यक्त अनुभूतियों को हम तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं–

1) अलौकिक प्रेम या रहस्य भावना

2) भगवद् प्रेम या भक्ति–भावना

3) स्वदेश प्रेम या राष्ट्रीय भावना

अलौकिक प्रेम

चतुर्वेदी जी के काव्य में अलौकिक प्रेम को मान्यता मिली है। कवि असीम की सत्ता में विश्वास करता है। यह प्रेम तत्व सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में है क्योंकि वह प्रेम जगदीशमय है –

है कौन–सा वह तत्व, जो सारे भुवन में व्याप्त है
ब्रह्माण्ड पूरा भी नहीं जिसके लिए पर्याप्त है
है कौन–सी वह शक्ति क्यों जी कौन सा वह भेद है
बस ध्यान ही जिसका मिटाता आपका सब शोक है
वह प्रेम है, वह प्रेम है, वह प्रेम है, वह प्रेम है
है अचल जिसकी मूर्ति, हाँ, हाँ अटल जिसका नेम है।

अलौकिक प्रेम की व्यापकता का बोध कराने के लिए कवि कहता है –

यह व्याप्त है सब में अजी यह सभी का आधार है
पाठक महोदय! अधिक क्या यह स्वर्ग सुख का द्वार है
जगदीशमय है प्रेम निश्चय, प्रेममय संसार है।

वह अव्यक्त समस्त प्रकृति में व्याप्त होते हुए भी कवि को कभी दूर प्रतीत होता है और कभी पास –

यौवन के छल की तरह दूर, कलिका से फल की तरह दूर
सीपी की खुली पंखुड़ियों से स्वाती के जल की तरह दूर।
ताड़ित तंरग की तरह पास, अधकटे अंग की तरह पास
उल्लास श्वास की तरह नहीं, पागल उल्लास की तरह पास।

कवि एक अव्यक्त सर्वव्यापक तत्व को ऐसे प्रियतम के रूप में मानता है कि उसे यह कहना अच्छा लगता है–

तुम्हारे खो जाने में दुख, तुम्हारे पा जाने में आज।
भूमि का मिल जाता है छोर, गगन का मिल जाता है राज।

चतुर्वेदी जी की बहुत सी रचनाएँ देशकाल से परे शाश्वत भावों को अभिव्यक्त करती हैं। चतुर्वेदी जी ने प्रकृति के नैसर्गिक आनन्द का अनुभव किया और प्रकृति में व्याप्त रहस्य को अपने काव्य में चित्रित किया। अलौकिक प्रेम द्वारा मानवीय एकता को बनाये रखने का प्रयास किया।

भगवद् प्रेम या भक्ति भावना

माखनलाल चतुर्वेदी की भगवद् भक्ति के आलम्बन हैं 'श्रीकृष्ण'। उनकी कविताओं में कृष्ण भावना और राष्ट्रीयता की भावना अलग–अलग न रहकर एक रूप हो गई है। माखनलाल जी अपने देश की धरती से श्यामल प्रभु की गाँठ बांधते हैं –

श्यामल प्रभु से, भू की गांठ बांधती, जोरा–जोरी
सूर्य किरण ये, यह मन–भावनि, यह सोने की डोरी,
छनक बांधती, छनक छोड़ती, प्रभु के नव–पद–प्यार
पल–पल बहे पटल पृथिवी के दिव्य–रूप सुकुमार।

उनके लिए देश की माटी है माखन और कृष्ण, धूल–धूसरित वेश है भारत माँ का मैला आंचल। वे कहते हैं–

माखन? भले माटी भले–हो धूलिधूसर वेश।
खाऊँ, खिलूं, गाऊँ तुम्हारे विजयगीत स्वदेश।

'मुक्ति का द्वार' शीर्षक कविता में वे भारत के तीस करोड़ लोगों को बन्दी के रूप में देखते है तथा उसके द्वार के खुलने की प्रार्थना श्यामल प्रभु से करते हैं–

अरे कंस के बन्दी–गृह की,
उन्मादक किलकार।
तीस करोड़ बंदियों का भी
खुल जाने दे द्वार।

तिलक की मृत्यु पर उन्होंने कविता लिखी, जिसमें पहली बार वे इस संदर्भ का उल्लेख करते हैं–

दुखियों के जीवन लौट पड़ो, मेरे घन–गर्जन लौट पड़ो।
जसुदा के मोहन लौट पड़ो, सित काली–मर्दन लौट पड़ो।

राष्ट्रीय स्वाधीनता के लिए गोवर्धन पर्वत उठाने में वे अद्वितीय पराक्रम देखते हैं। सदियों से पददलित और अपमानित देश के लिए साहस के शैल को उठाने की जरूरत है। वे वनमाली से प्रार्थना करते हैं कि –

ब्रज की रज खाने को जाओ, प्रेम प्रवाह बहाने को
छगुनि शिखा पर साहस का यह भारी शैल उठाने को।

इस प्रकार कृष्ण के जीवन के अनेक प्रसंग स्वाधीनता संग्राम में सार्थक हो गए। श्री कृष्ण उनके आराध्य इसलिये हैं कि वे राष्ट्रीय स्वाधीनता में उनके प्रेरक बनते हैं। उपासना और संघर्ष एक बिन्दु पर मिल जाते हैं।

स्वदेश प्रेम या राष्ट्रीय चेतना

राष्ट्रीय चेतना का अत्यन्त उदात्त स्वर माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य में मिलता है। वे कवि के रूप में 'भारतीय आत्मा' के नाम से विख्यात थे, उनका काव्य सच्चे अर्थों में भारतीय आत्मा की अभिव्यक्ति है। 'भारतीय आत्मा' का समस्त जीवन राष्ट्र के लिए समर्पित रहा। राष्ट्रीय चेतना के कवियों में माखनलाल चतुर्वेदी का शीर्ष स्थान है।

भारतीय साहित्य में राष्ट्रीय जागरण, त्याग–बलिदान एवं सांस्कृतिक गौरवाभिमान की दृष्टि से चार गीत विशेष महत्व रखते हैं। वे हैं–राष्ट्रगान (जन गन मन), वंदेमातरम्, सारे जहाँ से अच्छा तथा पुष्प की अभिलाषा। इन गीतों में चतुर्थ गीत माखनलाल चतुर्वेदी की वाणी

से निःसृत हुआ। संसार के किसी अन्य कवि ने स्वदेशी की स्वतंत्रता के लिए आत्म–बलिदान की ऐसी कामना नहीं की है–

चाह नहीं मैं सुरबाला के गहनों में गूंथा जाऊं।
चाह नहीं प्रेमी–माला में विंध प्यारी को ललचाऊं।
चाह नहीं सम्राटों के शव पर हे हरि डाला जाऊं।
चाह नहीं देवों के सिर पर चढ़ूँ भाग्य पर इठलाऊं।
मुझे तोड़ लेना बनमाली उस पथ पर देना तुम फेंक।
मातृभूमि पर शीष चढ़ाने जिस पथ जावें वीर अनेक।

'भारतीय आत्मा' के काव्य में सर्वत्र राष्ट्रीय चेतना का ज्वालामुखी धधक रहा है। यह ज्वालामुखी अंग्रेजों के पाषाणी शासन को खण्ड–खण्ड कर सात समुद्र पार फेंक देना चाहता है। वे एक वीर सिपाही के रूप में सदैव राष्ट्र मुक्ति के युद्ध में सन्नद्ध खड़े अपने सेनापति के आदेश की प्रतीक्षा करते हैं–

बोल अरे सेनापति मेरे मन की घुण्डी खोल।
जल–थल–नभ हिलडुल जाने दे तू किंचित मत डोल।
दे हथियार या कि मत दे तू पर तू कर हुंकार।
ज्ञातों को मत, अज्ञातों को तू इस बार पुकार।

वे सिर पर प्रलय लिए और नेत्रों में मस्ती भरे एक वीर सिपाही के रूप में सदैव राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम में लक्ष्य–प्राप्ति हेतु अटल खड़े हैं–

सिर पर प्रलय नेत्र में मस्ती
मुट्ठी में मनचाही
लक्ष्य मात्र मेरा प्रियतम है
मैं हूँ एक सिपाही।

वे राष्ट्रीय मुक्ति संग्राम के सेनानी से अपनी बलि देने की आज्ञा माँगते हुए कहते हैं–

खिलने के पहले टूटेंगी, तोड़, बता मत भेद।
वनमाली अनुशासन की सूची से अंतर छेद।
श्रम–सीकर, प्रहार से जीकर, बना लक्ष्य आराध्य।
मैं हूँ एक सिपाही, बलि है मेरा अंतिम साध्य।

सैनिक केवल लड़ना और मरना जानता है। ये ही उसके अधीन हैं। इस कार्य में विलम्ब उसे सह्य नहीं होता। यदि सेनानायक उस कार्य में किंचित् विलंब और प्रतिरोध उपस्थित करता है तो उसके प्राण तिलमिला उठते हैं। आखिर वह स्वतंत्रता–संग्राम का सैनिक जो है। जीवन से उसे मोह कैसा। मृत्यु से उसे भय कहाँ। वह तो देह धारण कर भी विदेह हो जाता है। वह तो इतना ही जानता है कि–'मरण के बीच कहाँ विश्राम।' अतः चतुर्वेदी जी कहते हैं –

धीरज रोग, प्रतीक्षा, चिंता, सपने बने तबाही,
ऐ दिलदार द्वार खुलने दे, मैं हूँ एक सिपाही।

युवकों को बलि का संदेश देते हुए वे कहते हैं –

ये न मग हैं, तब चरण की रेखियाँ हैं
बलि–दिशा की अमर देखा–देखियाँ हैं
विश्व पर पद से लिखे कृति–लेख हैं ये
धरा–तीर्थों की दिशा की मेख हैं ये।
प्राण–रेखा खींच ये, उठ बोल रानी
री मरण के मोल की चढ़ती जवानी।

x x x

खून हो जाये न तेरा देख, पानी
मरण का त्योहार, जीवन की जवानी।

वस्तुतः मरण का त्योहार मनाने का जो दिव्य स्वर चतुर्वेदी जी के काव्य में निनादित हुआ है वह अन्यत्र नहीं। चतुर्वेदी जी मूलतः बलि के कवि थे, सच्चे अर्थ में वे बलि–पंथी थे –

द्वार बलि का खोल चड़ भूडोल कर दें
एक हिमगिरि एक सिर का मोल कर दें
मसल कर अपने इरादों सी उठाकर
दो हथेली है कि पृथ्वी गोल कर दें,
रक्त है या है नसों में क्षुद्र पानी
जाँच कर तू सीस दे देकर जवानी।

स्वतंत्रता आन्दोलन को सक्रिय प्रेरणा देने की प्रवृत्ति उनके काव्य में ही नहीं मिलती बल्कि उनके जीवन में भी मिलती है। उन्होंने स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लिया और अनेक बार जेल यात्रा की। जेल–यात्रा उनके लिए गौरव यात्रा थी –

'क्या ? देख न सकती जंजीरों का गहना।
हथकड़ियाँ क्यों ? यह ब्रिटिश राज का गहना।'

जो कवि बलिदान की भावना को लेकर मृत्यु का जयगान कर रहा हो, जिसकी वाणी और जीवन में कोई अन्तर न हो, जो स्वयं राष्ट्रीय–पथ का सच्चा पथिक हो उस कवि के काव्य की ओजस्विता का क्या कहना। बलिपन्थी कारागार को कृष्ण मन्दिर, हथकड़ी को माता, पृथ्वी को शैया और आकाश को आच्छादन मानकर अपने नाम के संकेत पर सुरपुर तक को ठुकराकर राष्ट्र के लिए स्वयं को अर्पित कर देने के लिए पूरी तरह तत्पर हो रहे थे और ये भाव इसके लिए उन्हें प्रेरणा दे रहे थे –

'कागों का सुन कर्तव्य राग, कोकिल–कलरव को भूल–भूल,
सुरपुर ठुकरा, आराध्य कहे तो चल रौरव के कूल–कूल,
भूखण्ड बिछा, आकाश ओढ़, नयनोदक में, मोदक प्रहार
ब्रह्माण्ड हथेली पर उछाल, अपने जीवन–धन को निहार।'

उनकी कविताओं में निष्कपट देश प्रेम अभिव्यक्त हुआ है –

बलिशाला ही हो मधुशाला
प्रियतम पथ हो देश निकाला
प्राणों का आसव हो ढाला
गिरे न उसमें दाग री

चतुर्वेदी जी ने मानव–जीवन की उस अनुभूति को अभिव्यक्ति दी है जिसके कारण सोया राष्ट्र जाग उठता है। 'अमर राष्ट्र' कविता में कवि के ओजस्वी भाव व्यक्त हुए हैं–

मैं यह चला पत्थरों पर चढ़, मेरा दिलवर यहीं मिलेगा।
फूंक जला दें सोना–चाँदी तभी क्रान्ति का सुमन खिलेगा ?
चट्टानें चिंघाड़ें हँस–हँस सागर गरजे मस्ताना–सा,
प्रलय राग अपना भी उसमें, गुँथे चले ताना–बाना–सा।

जो काल के विकराल रूप पर अपने चिह्न अंकित कर युग को सहज तथा प्रेरित करता है वह 'युग कवि' कहलाता है। पं. माखनलाल चतुर्वेदी का कवि एक ऐसा ही युगकवि है, जिसने अपने युग की आत्मा को पहचानकर उसे वाणी के स्वर दिये हैं। युग के सत्य को प्रकट करते हुए कवि कहता है–

मातृभूमि है उसकी, जिसको उठ जीना आता है,
दहन–भूमि है उसकी, जो क्षण–क्षण गिरता जाता है।

सच्चा राष्ट्रकवि सच्चे जननायक से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। अपनी कविता के द्वारा राष्ट्रनायक के संदेशों को जन–जन तक पहुँचाने का गुरुतर दायित्व कवि ग्रहण करता है। चतुर्वेदी जी ने पूज्य बापू को अपनी युग–चेतना और राष्ट्रीय भावना के प्रतीक के रूप में देखा था। अतः उन्होंने बापू के प्रति कहा था –

युग तुम में तुम युग में कैसे झांक रहे हो बोलो।
उथल–पुथल तब हो कि समय में जब तुम जीवन घोलो।
तुम कहते हो बलि से पहले अपना हृदय टटोलो
युग कहता है क्रांति–प्राण पहिले बंधन तो खोलो।

x x x

कंठ भले हों कोटि–कोटि तेरा स्वर उनमें गूंजा
हथकड़ियों को पहन राष्ट्र ने पढ़ी क्रांति की पूजा।

यह गाना राष्ट्रीय धारा के सशक्त कवि माखनलाल चतुर्वेदी स्वाधीनता संग्राम काल के समस्त भारतीय काव्य में अन्यतम स्थान के अधिकारी हैं। 'भारतीय आत्मा' ने वास्तव में अपना समस्त जीवन राष्ट्र के लिए समर्पित कर दिया था। उनका हर शब्द, हर भाव और हर कार्य राष्ट्रीय चेतना की अनुगूंज होता था। वे आरंभ से लेकर अंत तक राष्ट्रीयता का ही अलख जगाते रहे। राष्ट्रीय चेतना और राष्ट्रीय भावना के एक चतुर चितेरे के रूप में उन्होंने भारत के परंपरागत आदर्श, त्याग, बलिदान और गांधीवाद के विचार को बड़े सुंदर ढंग से चित्रित किया। वास्तव में चतुर्वेदी जी की रचनायें राष्ट्रीय वेदना, शौर्य और उदात्त भारतीय संस्कृति की आंतरिक चेतना को अभिव्यक्त करने में बेजोड़ हैं।

9.6 माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य का रचना–शिल्प

चतुर्वेदी जी उस युग के कवि थे जिस युग ने काव्य–निर्माण की नींव डाली। चतुर्वेदी जी द्विवेदी कालीन प्रमुख कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त के साथ ही हिन्दी साहित्य में आये और उनके ही समान छायावाद की सीमा को पार करके कई दशकों तक हिन्दी काव्य को समृद्ध करते रहे। अतः चतुर्वेदी जी की द्विवेदी कालीन रचनाएँ अपने शिल्प में सरल होते हुए भी बड़ी ही मार्मिक हैं। 'जवानी' शीर्षक रचना में प्राकृतिक चित्रों के सहारे कवि ने युवावस्था का सुन्दर चित्र खींचा है –

वह कली के गर्भ से फल–रूप में, अरमान आया।
देख तो मीठा इरादा किस तरह, सिर तान आया।

x x x

फल दिये ? या सिर दिये ? तरु की कहानी
गूंथ कर युग में, बताती चल जवानी।

ऐसी रचनाओं में शिल्पगत लाक्षणिकता के स्थान पर सहज अभिव्यक्ति ही काव्य–सौंदर्य को आकर्शक बनाती है। इन रचनाओं में विद्वत्ता–प्रदर्शन अथवा चमत्कार निर्माण की प्रवृत्ति नहीं है।

चतुर्वेदी जी की भाषा सरल, सीधी और मुहावरेदार है, जो अभीष्ट विषय को ओजस्वी और सशक्त रूप प्रदान करती है। शैली में कहीं उद्‌बोधन है, कहीं भाषण कला की विशेषताएँ हैं तो कहीं–कहीं उपदेशात्मकता की शुष्कता भी है। कवि युग पुरुष को संबोधित करते हुए कहता है–

उठ–उठ तू, ओ तपी तमोमय जग उज्ज्वल कर।
गूंजे तेरी गिरा कोटि भवनों में घर–घर।

x x x

तू युग की हुंकार, अमर जीवन की वाणी,
तेरी सांसों में अमर हो उठे युग–कल्याणी।

कवि की संबोधन–शैली आत्मीयता की भावना जगाती है। कभी–कभी कवि की अभिलाषा, प्रकृति की अभिलाषा के रूप में प्रकट हुई है, जैसे 'पुष्प की अभिलाषा', 'वृक्ष की अभिलाषा' आदि में। चतुर्वेदी जी ने अपनी रचना में राष्ट्रीय–सामाजिक चेतना उदबुद्ध करने के लिए आग, ज्वाला, चिनगारी, श्मशान, पेड़–पौधे, हिमालय की हुंकार, समुद्र–गर्जन, बादल, अंकुर, हरियाली, पौराणिक प्रसंग, ऐतिहासिक प्रसंग, अमृत–विष आदि नित्य जीवन परक, प्राकृतिक और सांस्कृतिक बिम्बों और प्रतीकों की योजना की है।

माखनलाल जी साहित्य के जनता से कटे रह जाने, संग्रहालय की वस्तु बन जाने के खतरों को समझते हुए सरल भाषा के व्यवहार के प्रबल पक्षधर हैं।

चतुर्वेदी जी की कविता में ध्वनि संयोजना, पद संयोजना या शब्द योजना और वाक्य योजना के विविध स्तर इस रूप में मिलते हैं–

ध्वनि संयोजना

चतुर्वेदी जी की रचना में साधारण हिन्दी भाषा और लोकभाषा की ध्वनियों के प्रयोग मिलते हैं वे ध्वनियाँ हैं– गूंज उत्पन्न करने के लिए वर्णद्वित्व यथा–अन्न, मरणासन्न। अनुनासिकता–आँज, साँझ।

'ण' ध्वनि के प्रचुर प्रयोग–वेणु, रेणु, प्रणय, वाणी।

पद या शब्द योजना

चतुर्वेदी जी प्रायः संस्कृत से आगत तत्सम पद योजना का अधिक प्रयोग करते हैं–हिमगिरि, हिमशैल, हिमकिरीटिनी, हिमतरंगिनी, शिर, सुजन, सृजन, मुक्ति, ब्रह्माण्ड, पथ, बेला, अस्तित्व, रजतक्षण, संचार, व्रत, वैभव, उन्माद, प्रयास, उपहास, यौवन, वर, धूम्र–वलय, अणु, प्रणय, स्वेद, अणिमा, वाणी, प्रकाश जैसे तत्सम पद या शब्द उनकी कविता में बहुत प्रभुक्त हुए हैं। उनकी रचनाओं में तत्सम प्रकृति के पद–बंध भी मिलते हैं जैसे–मानव–हृदय, मुग्ध–संस्कार, राष्ट्र–वाणी, रजत–मुकुट, प्राण–रेखा, अखिल–जगतीतल, किरणबेला, मिलन–बेला, रजत–क्षण, अमर–रस, रवि–रथ, धूम्र–वलय, संकट–दल, अमित–अभिमान, पति–प्रकृति, स्वेद–कण, मौन–पुकार, गगन की रानी।

पद–संयोजना और भावानरूप क्रियापद निर्माण में उन्होंने तत्सम–तद्भव देशी और विदेशी शब्दों का मेल भी किया है जैसे–भूडोल करदे, मोल करदे, इरादों सी उठाकर, पृथ्वी गोल करदे, छलक–छलक बन छन्द, कोल्हूकी चर्रक–चूँ, जीवन की तान, अकड़ का कुँआ, हड्डियों का स्वाद, दुःख भोगी प्यारे, दहलता नभ मंडल, हरिया उठना, उतर जी पर, नसीब कोठरी काली, कल्पना पर चढ़।

तुक और ताल के खिलाफ निरंतर चल रहे सशक्त आन्दोलन के चलते हुए भी चतुर्वेदी जी की कविता में तुक और ताल निरन्तर बने रहे हैं। उनकी कविताओं में लय और छन्द की झंकार हमेशा बनी रही है।

माखनलाल चतुर्वेदी जी की कविताओं की रचना धर्मिता को देखने पर एक बात और ध्यान आकर्षित करती है कि अपनी कविताओं में वे प्रश्नवाचक वाक्यों का बहुत अधिक प्रयोग करते हैं। अधिकांश कविताओं में प्रश्न ही कविता के आधार वन जाते हैं फिर प्रश्न और उत्तर के क्रम में ही कविता पूरी होती है। कविताओं की ऐसी प्रश्न शैली हिन्दी के किसी अन्य कवि में नहीं है –

1) सजृन ये कौन खड़े हैं?

2) कौन पथ भूल?

3) सूझों के रवि रथ पर किसने?

4) कैसे दीखे हो मुरलीधर?

5) चुपचाप मधुर विद्रोह बीज इस भांति बो रही क्यों हो? कोकिल बोलो तो।

जैसे प्रश्न उनकी कविताओं में प्रायः ही मिलते हैं। चतुर्वेदी जी का जीवन साधारण लोक–जीवन से अधिक निकट रहा है अतः स्वाभाविक ही था कि वे लोक–जीवन की विशेषताओं को भी आत्मसात करते। अपनी कविता में उन्होंने समय–समय पर लोक–धुनों

को भी शामिल किया है। जैसे–स्वतंत्रता–संग्राम के संघर्षमय जीवन में जिस पत्नी को समुचित स्नेह–संरक्षण न दे सके उन्हीं के स्वर्गवास के बाद प्रथम श्राद्ध तिथि पर लिखी कविता में उनके हृदय में बसी लोक–धुन जैसे स्वतः निकल आई है–

बोलते थे तुम
अमर रस घोलते थे
तुम हठीले
पर हृदय पट तार
हो पाए कभी
मेरे न गीले।
ना, अजी! मैंने
सुने, तक भी नहीं,
प्यारे तुम्हारे बोल।
एक बिरिया, एक बिरिया
फिर कहो वे बोल।

माखनलाल जी की काव्य–साधना के मूल्यांकन में यह उल्लेखनीय है कि उस युग में हिन्दी कविता घुटरूअन चलने की स्थिति में थी। अतः चतुर्वेदी जी के काव्य का मूल्यांकन कभी भी उन्हें युग से काटकर नहीं किया जा सकता। संक्षेप में, चतुर्वेदी जी हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावनाओं के अमर गायक कवि हैं। उनकी काव्य–सम्पदा भाव और भाषा दोनों दृष्टि से विपुल है। उनकी शैली सर्वथा मौलिक और नूतन है। वे किसी लीक के पुजारी नहीं हैं, यही उनकी विशेषता है।

9.7 माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य का मूल्यांकन

स्व. माखनलाल चतुर्वेदी एक साथ कवि, लेखक, पत्रकार, वक्ता, कहानीकार, नाटककार आदि रूपों में हमारे सामने आते हैं। उनके साहित्य का मूल स्वर राष्ट्रीयता का है। इनकी कविताओं में राष्ट्रीय भावना अनेक रूपों में व्यंजित हुई है। राष्ट्र के प्रति अनुराग, राष्ट्र–सेवकों और नेताओं के प्रति स्नेह और श्रद्धा, देश में जागरण का सन्देश एवं राष्ट्रहित के लिए बलि की भावना इनकी कविताओं में अभिव्यक्त हुई है।

माखनलाल चतुर्वेदी का हृदय सदैव स्वदेश अनुराग से ओत–प्रोत रहा है। यही कारण है कि इनकी कविताओं में भारत का एक प्रतिनिधि कवि पराधीनता के शिकंजे से मुक्त होने के लिए छटपटाता सा जान पड़ता है। कवि की आत्मा 'जवानी' शीर्षक कविता में भारत के युवकों का आह्वान करती है –

प्राण अन्तर में लिए, पागल जवानी।
कौन कहता है कि तू विधवा हुई, खो आज पानी ?

x x x

द्वार बलि का खोल चल, भूडोल कर दें,
एक हिमगिरि एक सिर का मोल कर दें,

मसलकर, अपने इरादों–सी, उठाकर,
दो हथेली हैं कि पृथ्वी गोल कर दें।
रक्त है या है नसों में क्षुद्र पानी ?
जाँच कर, तू सीस दे–देकर, जवानी।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पथ पर मरण भी उनके लिए एक त्यौहार है। वे युवकों को बलि का संदेश देते हुए कहते हैं –

खून हो जाये न तेरा देख पानी
मरण का त्यौहार जीवन की जवानी।

माखनलाल चतुर्वेदी देश की राजनीतिक नब्ज को पहचानने वाले पहले हिन्दी साहित्यकार थे। ब्रिटिश साम्राज्य में भारतीय जनता को जिस अत्याचार और दमन का सामना करना पड़ रहा था उसका जीता–जागता चित्र चतुर्वेदी जी की अनेक कविताओं में अंकित हुआ है। कवि ने स्वयं अनेक बार जेल की कठोर यातनायें सही थी यही कारण है कि उनकी कविताओं में कोरी कल्पना ही नहीं है। अनुभूति की सच्चाई के कारण कवितायें और मार्मिक बन गई है।

'मरण–त्यौहार', 'कैदी और कोकिला', 'सिपाही', 'सिपाहिनी', 'जलियाँवाला बाग', 'जवानी', शीर्षक कविताएँ आज भी पाठक के हृदय में राष्ट्रप्रेम की उमंग पैदा करती हैं। उन्होंने हिन्दू–मुस्लिम एकता की महत्ता को अनुभव किया, पहचाना और भावाकुल अनुरोध किया कि इस भेद–भाव की संकीर्णता में मानव जीवन ही नहीं इस जीवन का जनक भी कलंकित होता है –

मन्दिर में हो चाँद चमकता, मसजिद में मुरली की तान,
मक्का हो चाहे वृन्दावन, होवें आपस में कुरबान।

x x x

हिन्दी माता की दोनों आँख, नाक को रखकर बीचों बीच,
अश्रु की उज्ज्वल धारा छोड़, प्रेम का पौधा देवें सीच।

यही नहीं इस गुलाम और अनपढ़ देश में मनुष्य को अशिक्षा के अभाव में तिल–तिल पिसते या शोषित होते भी कवि ने देखा। उस शोषण की पीड़ा और कथा को सुना, गुना, गुनगुनाया तथा जन–जन को सुनाया भी –

अन्न नहीं है, फीस नहीं है, पुस्तक है न सहायक हाय,
जी में आता है पढ़ लिख लें, पर इसका है नहीं उपाय।
कोई हमें पढ़ाओ भाई, हुए हमारे व्याकुल प्राण,
हा! हा!! रोते फिरते हैं भारत के भावी विद्वान।

माखनलाल जी की कविताएँ समस्त भारतीय इतिहास की आवाज है। पूरे देश के हृदय को झकझोर देने की उनमें क्षमता है। जो कवि–'ऊंची काली दीवारों के घेरे में, डाक चोरों बरमारों के डेरे में' घिरा रहकर भी हार नहीं मानता और निरंतर कहता है 'खाली करता हूँ ब्रिटिश अकड़ का कुआँ'। यह कवि निश्चित ही धरती का कवि है, जो कहता है–

'धड़ से धड़ को जोड़ बना तू भारत एक अखंडित
तेरे यश का गान करेंगे प्रलय नाद के पंडित।'

'युग और तुम', 'तिलक', 'रोने दो लुट गया आज', 'स्वर्गीय सप्रे जी की महायात्रा पर' तथा 'राष्ट्रीय झण्डे की भेंट' जैसी कविताएँ कवि व्यक्तित्त्व की वीरता को उजागर करती हैं।

'जीवन का फूल' नामक कविता में वे कहते हैं –

"किन्तु कहे देता हूँ तुमसे सब जायेंगे भूल।
तेरे चरणों पर ही अर्पित होगा जीवन फूल।'

स्वातंत्र्य आन्दोलन का इससे अधिक और कहाँ आत्म त्याग एवं आत्म बलिदान का भाव देखने को मिलता है–जहाँ विजय मारने में नहीं अपितु मरने में होती है। वीरता शीष काटने में नहीं बल्कि कटाने में है।

पत्रकारिता के क्षेत्र में श्री माखनलाल चतुर्वेदी का योगदान ऐतिहासिक महत्व का रहा है। उन्होंने 'प्रभा', 'कर्मवीर' और 'प्रताप' के माध्यम से देश और समाज को जागृत करने का अद्भुत कार्य किया। इनकी विद्रोहात्मक लेखनी से शासन घबरा गया और 1921, 1922, 1927 में इन्हें कारावास का दंड दिया। पत्रकारिता के क्षेत्र में ये जिन विभूतियों के आत्मीय संपर्क में आए उनमें प्रमुख थे–श्री माधवराव सप्रे, श्री गणेश शंकर विद्यार्थी, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, महात्मा मुंशीराम, तथा पंडित विष्णु दत्त शुक्ल। 'कर्मवीर' साप्ताहिक और 'प्रभा' में माखनलाल जी की जो कविताएँ प्रकाशित हुई उन्होंने उस समय के हिन्दी काव्य में क्रांतिकारी एवं राष्ट्रीय विचारधारा को एक प्रमुख काव्य प्रवृत्ति के रूप में स्थापित कर दिया।

माखनलाल चतुर्वेदी के व्यक्तित्त्व एवं साहित्य की विशिष्टता इस बात में है कि उनकी वाणी और उनके कर्म में अद्भुत समन्वय था। उन्होंने न केवल राष्ट्रीयता की भावना से युक्त साहित्य लिखा बल्कि स्वयं राष्ट्रीय आन्दोलनों में हिस्सा लिया और कई बार जेल गए। जबलपुर जेल में जाने से पहले जब चतुर्वेदी जी बिलासपुर जेल में थे तब उन्होंने 18 फरवरी को अपनी सर्वाधिक लोकप्रिय रचना 'एक फूल की चाह' लिखी जो सत्याग्रहियों के लिए सुबह–शाम प्रार्थना जैसी थी। 'हिम–किरीटिनी', 'झरना' आदि अन्य रचनायें भी जबलपुर सेण्ट्रल जेल में लिखी गई थी। ये कवितायें अंग्रेजी शासन द्वारा सत्याग्राहियों के साथ किए जाने वाले व्यवहार की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत करती हैं तथा हिन्दी राष्ट्रीय कविताओं में अपना विशेष महत्व रखती हैं।

निष्कर्श रूप में कहा जा सकता है कि चतुर्वेदी जी ने स्वतंत्रता संग्राम की विस्तृत भावभूमि का निर्माण किया और उसमें लड़ने एवं घूमने वालों की एक ऐसी टोली तैयार की जिसमें अदम्य साहस एवं गहन आत्मविश्वास था। वे देश की स्वतंत्रता संग्राम के अदम्य सेनानी थे, पत्रकारिता के क्षेत्र में राष्ट्र के जागरूक प्रहरी थे, कविता के क्षेत्र में राष्ट्र के बलिदान हो जाने का महान आदर्श प्रस्तुत करने वाले कवि थे। देश प्रेम के उत्कट भावों से उनकी सभी काव्य–कृतियों हिमकिरीटिनी, हिमतरंगिनी, माता, शुभचरण, समर्पण, वेणुलो गूँजे धरा आदि ओत–प्रोत हैं।

9.8 सारांश

- स्वतंत्रता पूर्व हिन्दी कविता पर नवजागरण का प्रभाव व्यापक रूप से पड़ा। विविध सुधारवादी आन्दलनों से देश की जनता में जागृति आयी। अफ्रीका में गांधी जी का

अहिंसात्मक प्रतिरोध सफल हुआ जिसने देश की जनता को मानसिक बल प्रदान किया। उसी समय हिन्दी कविता–क्षेत्र में माखनलाल चतुर्वेदी का आगमन हुआ।

- चतुर्वेदी जी का जन्म 4 अप्रैल 1889 को होशंगाबाद के बाबई ग्राम में हुआ था। बचपन से ही चतुर्वेदी जी को देश की मिट्टी से प्यार था और वे क्रांतिकारियों की मदद भी किया करते थे। 1906 में इन्होंने क्रांतिकारी नेता देवसकर से दल की दीक्षा ली। सैयद अलीमीर, स्वामी रामतीर्थ, पं. माधवराज सप्रे और माणकचन्द जैन का उन पर बहुत प्रभाव पड़ा। अपना जीवन और साहित्य इन्होंने राष्ट्र के लिए अर्पित कर दिया। 1906 से 1920 तक ये क्रांतिकारी दल के लिए कार्य करते रहे। 1920 में ये गांधी जी के अनुयायी बने। इन्हें इनकी कृतियों के लिए अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। इनकी मृत्यु सन् 1968 को खण्डवा में इनके निवास स्थान पर हुई।

- माखनलाल चतुर्वेदी एक निर्भीक एवं समर्पित पत्रकार थे। उन्होंने 'प्रभा' और 'कर्मवीर' का संपादन किया। गणेश शंकर विद्यार्थी के जेल जाने पर इन्होंने 'प्रताप' का सम्पादन भी किया। 'कर्मवीर' माखनलाल जी की भावनाओं एवं विचारधाराओं को स्पष्ट करने वाले प्रमुख पत्र के रूप में सामने आता है। इस पत्र का एक–एक शब्द राष्ट्रीय जागरण का जीता–जागता इतिहास है। इनकी विद्रोहात्मक लेखनी से घबराकर ब्रिटिश शासन ने सन् 1921, 1922 एवं 1927 में गिरफ्तार कर उन्हें कारागार में भेज दिया। इन्होंने 'प्रभा', 'कर्मवीर' और 'प्रताप' के माध्यम से देश की जनता को क्रांति का संदेश दिया और लेखकों, कवियों तथा पत्रकारों की ऐसी पीढ़ी तैयार की जिनकी रचनाएँ निरन्तर क्रांति का संदेश देती रहीं।

- चतुर्वेदी जी की कविताएँ मुख्य रूप से तीन भावधारा में विभक्त की जा सकती हैं– (1) अलौकिक प्रेम या रहस्य भावना (2) भगवद् प्रेम या भक्ति–भावना (3) स्वदेश प्रेम या राष्ट्रीय भावना। इनकी कविता का केन्द्रीय भाव राष्ट्रीयता का ही है। राष्ट्र के प्रति अनुराग, राष्ट्र–सेवकों और नेताओं के प्रति स्नेह और श्रद्धा, देश में जागरण का सन्देश एवं राष्ट्र हित के लिए बलि की भावना इनकी राष्ट्रीय कविताओं का मूल स्वर है। चतुर्वेदी जी की रचनाएँ शिल्प की दृष्टि से बड़ी सरल होते हुए भी मार्मिक हैं।

- शिल्पगत लाक्षणिकता के स्थान पर सहज अभिव्यक्ति ही इनके काव्य–सौन्दर्य का मूल आधार है। इनकी भाषा सरल, सीधी और मुहावरेदार है। सरल भाषा व्यवहार के ये प्रबल पक्षधर है। इन्होंने तत्सम शब्दों का प्रयोग बहुत किया है साथ ही तत्सम तद्भव, देशी और विदेशी शब्दों का मेल भी किया है।

- इनकी कविता में तुक और ताल, लय और छंद की झंकार हमेशा बनी रहती है। इनकी रचनाओं में प्रश्नवाचक वाक्यों का प्रयोग अधिक हुआ है। चतुर्वेदी जी की शैली सर्वथा मौलिक और नूतन है।

इन्होंने न केवल राष्ट्रीयता की भावना से युक्त साहित्य लिखा बल्कि स्वयं राष्ट्रीय आन्दोलनों में हिस्सा लिया, कई बार जेल गए। 'मरण त्यौहार', 'कैदी और कोकिला', 'सिपाही', 'सिपाहिनी', 'जलियाँवाला बाग', 'जवानी', 'युग और तुम', 'तिलकः, 'रोने दो लुट गया आज', 'स्व. सप्रेजी की महायात्रा पर', 'राष्ट्रीय झण्डे की भेंट, ''पुष्प की अभिलाषा' –शीर्षक कविताएँ इनके हृदय की देश भक्ति भावना को उजागर करती हैं। वे देश के स्वतंत्रता संग्राम के अनन्य सेनानी, पत्रकारिता के क्षेत्र में राष्ट्र के जागरूक प्रहरी, कविता के क्षेत्र में राष्ट्र के लिए बलिदान हो जाने का महान आदर्श प्रस्तुत करने वाले कवि थे।

अभ्यासः

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए :

(i) इन्होंने क्रांतिकारी नेता .... से दल की दीक्षा ली।

(ii) सन् ...... से .... ई. तक श्री चतुर्वेदी क्रांतिकारी दल के लिए कार्य करते रहे।

(iii) इनकी विद्रोहात्मक लेखनी से घबराकर ब्रिटिश शासन इन्हें सन् .... और .... में राजद्रोह के अभियोग में कारागार भेजता रहा।

(iv) हिन्दी साहित्य–सम्मेलन प्रयाग में .... पर उन्हें .... पुरस्कार दिया।

(v) 'झण्डे की भेंट' शीर्षक कविता .... के .... में प्रकाशित हुई थी।

(vi) .... चतुर्वेदी जी की भावनाओं एवं विचारधाराओं को स्पष्ट करने वाले प्रमुख पत्र के रूप में सामने आता है।

(vii) .... के जेल जाने पर इन्होंने 'प्रताप' का संपादन कानपुर में रहकर किया।

सही उत्तर दीजिए :

(i) माखनलाल चतुर्वेदी की रचनाएँ शिल्प की दृष्टि से सरल/दुरुह हैं।

(ii) माखनलाल चतुर्वेदी की काव्य भाषा सरल और मुहावरेदार है/क्लिष्ट है।

(iii) माखनलाल चतुर्वेदी की रचनाओं में तत्सम पद योजना/तद्भव पद योजना का प्रयोग अधिक हुआ है।

(iv) इनकी कविता में तुक और ताल है/नहीं है।

(v) इनकी कविताओं में लोकधुन भी शामिल है/नहीं है।

9.9 उपयोगी पुस्तकें

1) माखनलाल चतुर्वेदी : व्यक्तित्व और कृतित्व – संपादक प्रेमनारायण टंडन

2) हिन्दी अनुशीलन (माखनलाल चतुर्वेदी विशेषांक) – इलाहाबाद

3) माखनलाल चतुर्वेदी : यात्रा पुरुष–संपादक, श्रीकान्त जोशी

9.10 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न–1

1. राष्ट्रीय चेतना की कविता जाति, समाज और प्रान्तीयता की संकीर्ण भावना मिटाती है और जन–जीवन में कर्तव्य की भावना जगाती है।

2. राजा राम मोहन राय के ब्रह्म समाज, स्वामीदयानन्द सरस्वती के आर्य समाज, रामकृष्ण परम हंस के रामकृष्ण मिशन, महाराष्ट्र के महादेव गोबिन्द रानाडे, थियोसोफिकल सोसाइटी, इण्डियन एसोसिएशन और नेशनल कांग्रेस द्वारा सुधारवादी आन्दोलन चलाए गए जिसने स्वतंत्रतापूर्व की राष्ट्रीय चेतना को प्रभावित किया।

बोध प्रश्न–2

1. माखनलाल चतुर्वेदी का जन्म 1 अप्रैल सन् 1889 को होशंगाबाद के 'बाबई' ग्राम में हुआ था।
2. उन्हें संस्कृत, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती, बंगाली आदि भाषाओं का ज्ञान था। सैयद अलीमीर, स्वामी रामतीर्थ, प. माधवराज सप्रे तथा माणक चन्द जैन का उनके जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ा।

बोध प्रश्न–3

1. माखनलाल चतुर्वेदी ने 'प्रभा', 'कर्मवीर' और 'प्रताप' का संपादन किया।
2. पत्रकारिता के क्षेत्र में वे श्री माधवराज सप्रे, श्री गणेश शंकर विद्यार्थी, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, महात्मा मुंशी राम तथा पंडित विष्णु दत्त शुक्ल के निकट संपर्क में आये।
3. 'कर्मवीर' पत्र उन दिनों राष्ट्रीय जागरण का अग्रदूत था।

बोध प्रश्न–4

1. माखनलाल चतुर्वेदी 'भारतीय आत्मा' के नाम से विख्यात हुए।
2. चतुर्वेदी जी की कविताओं के भाव पक्ष को तीन रूपों में बाँटा जा सकता है–(1) अलौकिक प्रेम या रहस्य भावना (2) भगवद् प्रेम या भक्ति भावना (3) स्वदेश प्रेम या राष्ट्रीय भावना।
3. चतुर्वेदी जी की कविताओं में लोक जीवन का प्रभाव लोक धुनों के रूप में पड़ा।

बोध प्रश्न–5

1. 'मरण त्यौहार', 'कैदी और कोकिला', 'सिपाही', 'सिपाहिनी', 'जलियाँवाला बाग', 'जवानी', 'युग और तुम', 'तिलक', 'रोने दो लुट गया आज' स्व. सप्रे जी की महायात्रा पर तथा 'राष्ट्रीय झण्डे की भेंट' आदि कविताएँ इनकी राष्ट्रीय भावना और कवि व्यक्तित्व की वीरता को उजागर करती हैं।
2. 18 फरवरी 1922 को इन्होंने बिलासपुर जेल में 'पुष्प की अभिलाषा' शीर्षक कविता लिखी थी।

बोध प्रश्न–6

1. कोयल की वाणी को कवि 'रण भेरी' इसलिए कहता है क्योंकि कवि को ऐसा प्रतीत होता है मानो यह गुलामी के विरुद्ध संघर्ष करने का आह्वान कर रही है।
2. 'पुष्प की अभिलाषा' के माध्यम से स्वयं कवि की बलिदान भावना व्यक्त हुई है।

पंक्ति का अर्थ :

(i) पराधीन व्यक्ति की यह पीड़ा है कि वह अपनी इच्छा से रो भी नहीं सकता।

(ii) कैदी का संसार जेल की चार–दीवारी के भीतर की अंधेरी कोठरी ही होता है।

अभ्यासों के उत्तर

(i) इन्होंने क्रांतिकारी नेता देवसकर जी से दल की दीक्षा ली।

(ii) सन् 1906 से 1920 ई. तक श्री चतुर्वेदी निरंतर क्रांतिकारी दल के लिए कार्य करते रहे।

(iii) इनकी विद्रोहात्मक लेखनी से घबराकर ब्रिटिश शासन इन्हें सन् 1921, 1922 और 1927 में राजद्रोह के अभियोग में कारागार भेजता रहा।

(iv) हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ने हिमकिरीटिनी पर उन्हें 'देव' पुरस्कार दिया।

(v) 'झंडे की भेंट' शीर्षक कविता 'प्रभा' के 'झंडा अंक' में प्रकाशित हुई थी।

(vi) 'कर्मवीर' चतुर्वेदी जी की भावनाओं एवं विचारधाराओं को स्पष्ट करने वाले प्रमुख पत्र के रूप में सामने आता है।

(vii) गणेश शंकर विद्यार्थी के जेल जाने पर इन्होंने 'प्रताप' का संपादन कानपुर में रहकर किया।

सही उत्तर दीजिए :

(i) सरल हैं।

(ii) सरल और मुहावरेदार है।

(iii) तत्सम पद योजना का प्रयोग अधिक हुआ है।

(iv) तुक और ताल हैं।

(v) शामिल है।

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर अपने शब्दों में लिखिये :

1. माखनलाल चतुर्वेदी का जीवन–परिचय अपने शब्दों में लिखिये।

....

....

....

....

2. माखनलाल चतुर्वेदी की कविताओं में व्यक्त राष्ट्रीय भावना को अपने शब्दों में लिखिये।

....

....

....

....

3. पत्रकारिता के क्षेत्र में चतुर्वेदी जी के योगदान को अपने शब्दों में लिखिये।

....

....

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

....

....

4. 'कैदी और कोकिला' कविता के माध्यम से कवि क्या कहना चाहता है?

....

....

....

....

5. 'पुष्प की अभिलाषा' में व्यक्त बलिदान भावना का मर्म उद्घाटित कीजिए।

....

....

....

....

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

इकाई 10 सुभद्रा कुमारी चौहान और उनकी कविता

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 सुभद्रा कुमारी चौहान : एक परिचय

10.3 सुभद्रा कुमारी चौहान का साहित्यिक परिचय

10.4 युग परिवेश

10.4.1 राजनीतिक परिवेश

10.4.2 सामाजिक परिवेश

10.4.3 आर्थिक परिवेश

10.5 सुभद्रा कुमारी चौहान की भाषा शैली

10.6 सारांश

10.7 उपयोगी पुस्तकें

10.8 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

10.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप सुप्रसिद्ध कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान के बारे में अध्ययन करेंगे। इकाई के अध्ययन के उपरांत आप –

- कवयित्री के युग परिवेश के बारे में जान सकेंगी/सकेंगे;
- कवयित्री के जीवन और व्यक्तित्व के बारे में बता सकेंगी/सकेंगे;
- कवयित्री के साहित्यिक कृतित्व का वर्णन कर सकेंगी/सकेंगे;
- कवयित्री की कविताओं के माध्यम से उनकी राष्ट्रीय, सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना का विश्लेषण कर सकेंगी/सकेंगे;
- कवयित्री की भाषा शैली को समझ सकेंगी/सकेंगे; और
- कवयित्री के काव्य का अपने शब्दों में मूल्यांकन कर सकेंगी/सकेंगे।

10.1 प्रस्तावना

इस खंड में आप सुभद्रा कुमारी चौहान के व्यक्तित्व और कृतित्व का सम्पूर्ण अध्ययन कर रहे हैं। इसके साथ ही अन्य कवियों को भी जानेंगे जिन्होंने राष्ट्रीय और सामाजिक क्षेत्र में विशेष भूमिका निभाते हुए देश की प्रगति में योगदान दिया है। ये कवि देश के निर्माता हैं। सुभद्रा कुमारी चौहान भारत की पहली सत्याग्रह आंदोलन में भाग लेने वाली महिला हैं। इसके साथ ही संवेदनशील कवयित्री, ममतामयी माँ एवं सच्ची देशभक्त भी हैं। अपनी अस्मिता को खोई बैठी नारी को जगाकर उसमें ओज और शौर्य का संचार करने वाली एक

असाधारण महिला की पहचान हैं। कवयित्री सफल राजनीतिज्ञा के साथ–साथ सफल समाज सेविका भी रही हैं। सुभद्रा कुमारी चौहान दलित, पिछड़े और अभिवंचित वर्ग की मुक्ति के लिए हमेशा संघर्षशील रही हैं। कवयित्री अपने समाज की परिस्थितियों से प्रभावित होती है जो कि उनकी रचनाओं में साफ झलकता है। वह अतीत का गौरव गान भी करती हैं ताकि लोगों में उर्जा का संचार हो। वह एक राष्ट्रवादी प्रसिद्ध कवयित्री रही हैं। 1857 के संग्राम में अंग्रेजों को लोहा देने वाली 'झांसी की रानी' लक्ष्मीबाई की रणगाथा को आधार बनाकर उन्होंने एक लम्बी कविता लिखी जिससे उन्हें खूब प्रसिद्धी मिली। कवयित्री की समकालीन परिस्थितियों को देखते हुए राष्ट्र की उन्नति के लिए उन्होंने किस प्रकार की रचनाएं की हैं यह हम इस पाठ में देखेंगे। साथ ही भाषा के स्तर पर वह लोगों तक अपनी बात पहुँचाने में किस प्रकार सफल होती हैं इसका भी अध्ययन हम करेंगे। आइए पहले उन युगीन परिस्थितियों का अवलोकन करें जिनमें सुभद्रा कुमारी चौहान ने रचनाएं की हैं।

10.2 सुभद्रा कुमारी चौहान : एक परिचय

राष्ट्रसेवी सुभद्रा कुमारी चौहान का जन्म 16 अगस्त सन् 1904 ई. इलाहाबाद के गाँव निहालपुर में हुआ था। इनकी माता का नाम धिराज कुंवर और पिता का नाम ठाकुर श्री रामनाथ सिंह था। जमींदार परिवार में जन्मी सुभद्रा अपने माता–पिता की सातवीं सन्तान थी। बहुमुखी प्रतिभा से मंडित सुभद्रा कुमारी का स्वभाव बचपन में चंचल और विद्रोही था। 20 फरवरी 1919 में सुभद्रा का विवाह बड़े भाई रामप्रसाद सिंह के ही सहपाठी ठाकुर लक्ष्मण सिंह चौहान के साथ सम्पन्न हुआ। विवाहोपरान्त अपनी शिक्षा को जारी रखने के लिए वह बनारस आ गई। इसके पश्चात विवाह के दो वर्ष बाद ही 1921 में गांधी जी के असहयोग आंदोलन में हिस्सा लेने के लिए वह उत्तर आई थी। सुभद्रा असहयोग आंदोलन में हिस्सा लेने वाली पहली महिला थी। अठारह वर्ष की आयु में सन् 1923 ई. में 'राष्ट्रीय झण्डा आन्दोलन' के समय पहली बार जेल गई और पुनः 1941 में व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन हेतु जेल जाना पड़ा। 15 फरवरी 1948 ई. में मोटर दुर्घटना में उनकी आकस्मिक मृत्यु हो गई।

सुभद्रा कुमारी चौहान स्वाधीनता संग्राम की सेनानी तो थी ही साथ ही राष्ट्रीय काव्य धारा की सुप्रसिद्ध लेखिका भी रही हैं। उनकी लेखनी में 'झाँसी की रानी' और 'वीरों का कैसा हो बसंत' जैसी ओजस्वी, देशप्रेम की कविताएं दी थी।

कविता संग्रह–

मुकुल

त्रिधारा

कहानी संग्रह–

बिखरे मोती –1932

उन्मादिनी –1934

सीधे–साधे चित्र –1947

बाल–साहित्य

झाँसी की रानी

कदम्ब का पेड़

सभा का खेल

कविता संकलन–

'मुकुल तथा अन्य कविताएँ' – (बाल कविताओं के अतिरिक्त संकलित–असंकलित समस्त कविताओं का संग्रह। प्रकाशक–हंस प्रकाशन इलाहाबाद।)

कथा संकलन–सीधे–साधे चित्र–1983 (संकलित–असंकलित समस्त कहानियों का संग्रह। प्रकाशक– हंस प्रकाशन इलाहाबाद)

सम्मान

सेकसरिया पारितोषिक (1931) मुकुल (कविता–संग्रह) के लिए

सेकसरिया पारितोषिक– (1932) बिखरे मोती (कहानी–संग्रह) के लिए (दूसरी बार),

अन्य सम्मान–1 भारतीय डाक तार विभाग ने 6 अगस्त 1976 को सुभद्रा कुमारी चौहान के सम्मान में 25 पैसे का एक डाक–टिकट जारी किया।

बोध प्रश्न–1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

1. सुभद्रा जी का जन्म कब और कहाँ हुआ था।

   ....

   ....

   ....

2. सुभद्रा जी के समक्ष शिक्षा ग्रहण करने में किस प्रकार की स्थितियाँ रही हैं।

   ....

   ....

   ....

3. सुभद्रा जी के जीवन पर किस विचारधारा का अधिक प्रभाव रहा है।

   ....

   ....

   ....

10.3 सुभद्रा कुमारी चौहान का साहित्यिक परिचय

आधुनिक काल के तीसरे चरण को छायावाद कहते हैं। छायावाद की समय सीमा सन् 1918–1936 ई. है। सुभद्रा जी इसी काल खण्ड के अंतर्गत आती हैं। छायावादी युग की तीन काव्य धाराएं हैं। सुभद्रा जी ने दूसरी काव्य धारा में प्रसिद्धि ग्रहण की है।

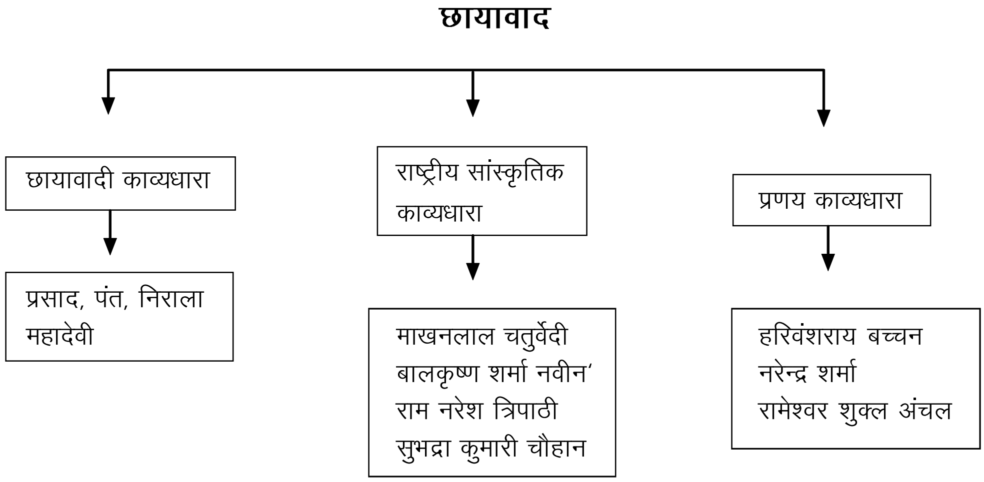

सुप्रसिद्ध कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान समाज में रहने वाली सहृदया हैं। इन्होंने तत्कालीन समाज और राजनीति से प्रभावित होकर अपना साहित्य रचा है। यदि सुभद्रा जी की विशेषताओं पर बात की जाए तो कहा जा सकता है कि वे लोक की कवयित्री हैं, जनमनमयी हैं, राष्ट्र की कवयित्री हैं, इतिहास, संस्कृति, परम्परा एवं आधुनिकता वहन करने वाली एक असाधारण व्यक्तित्व हैं। इनके काव्य में हम विभिन्न स्वरूपों को देख सकते हैं जो जन मानस के मस्तिष्क पर अपनी छाप छोड़ते नजर आते हैं। आइए इस पर थोड़ी चर्चा करें–

सुभद्रा जी की कविताओं में हमें वीरत्व से पूर्ण ओजस्वी राष्ट्रीयता नजर आती है। वे ऐतिहासिक रचना करती नजर आती हैं जब वीरांगना रानी लक्ष्मीबाई पर कविता लिखती हैं और वीरत्व का उदाहरण पेश करती हैं–

लक्ष्मी थी या दुर्गा थी, स्वयं वीरता की अवतार।
देख मराठे पुलकित होते, उसकी तलवारों के वार।।

(सुभद्रा कुमारी चौहान, मुकुल, सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर पंचम सं–1944, पृ.सं.– 48)

सुभद्रा जी के काव्य में वीरत्व–बोध 'वीरों का कैसा हो बसंत' नामक कविता में भी झलकता है। इस कविता में बताया गया है कि जब देश अपनी जंग लड़ रहा हो तो उस समय वीरों के लिए साज–शृंगार की चीजों में लिप्त होना शोभा नहीं देता हैं उस समय जान की बाजी लगाकर रणक्षेत्र में कूदना ही उनके लिए बसन्त के समान है–

कह दे अतीत अब मौन त्याग,
लंके। तुझमें क्यों लगी आग,
ऐ कुरूक्षेत्र! अब जाग–जाग
बतला अपने अनुभव अनन्त।

(सुभद्रा कुमारी चौहान, मुकुल, सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर पंचम सं.–1944, पृ.सं–107)

सुभद्रा जी विश्वप्रेम में डूबी रहने वाली महान लेखिका हैं। इस विश्वप्रेम में व्यक्तिप्रेम, समाज प्रेम, देशप्रेम, राष्ट्रप्रेम, दाम्पत्य प्रेम, वात्सल्य प्रेम, इष्ट प्रेम तथा प्रकृति प्रेम सब समाहित है। वह अपने विश्व प्रेमरस में मतवाली होकर अपने 'मैं' को भी भूल जाती है–

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

मैं प्रसन्न थी, पर प्रसन्नता
मेरी आज निराली थी;
मैं न आज मैं थी यह कोई
विश्वप्रेम– मतवाली थी।

(सुभद्रा कुमारी चौहान, मुकुल, सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर पंचम सं.–1944, पृ.सं–21)

निःसंदेह सुभद्रा जी ने प्रेम की महत्ता को भलि–भाँति समझा है। वह बंधनमुक्त व त्यागमय प्रेम पर बल देती हैं। प्रेम को सुभद्रा जी एक बड़े फ्रेम में देखती हैं। संयोग और वियोग दोनों ही पक्षों से वह रमी हुई हैं। इसके अलावा प्रेम में ईर्ष्या भी उनके काव्य में नजर आती है। जब प्रिय कहीं अन्यत्र फ्रेम दिखाने को आकुल होता है जो बेवजह उसे सह नहीं पाती और फूट पड़ती है। ईर्ष्या और डाह के जागृत होने से कोमल हृदय कठोर हो जाता है–

खूनी भाव उठें उसके प्रति
जो हो प्रिय का प्यारा,
उसके लिए हृदय यह मेरा
बन जाता हत्यारा।

वह अपने प्रिय को रिझाना चाहती है। वह नहीं चाहती है कि उसके प्रिय का ध्यान इधर–उधर भटके इसके लिए वह सभी कलाएँ सीखना चाहती है। वह उषे सजनि से कहती है–

उषे! सजनि अपनी लाली से
आज सजा दो मेरा तन,
कला सिखा खिलने की कलिके,
विकसित कर दो मेरा मन।

(सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण–जनवरी 2000 पृ. सं. 135)

सुभद्रा जी ने अपनी कविताओं में वैवाहिक जीवन को रेखांकित किया है। वैवाहिक जीवन की नोंक–झोंक, रूठना–मनाना, शिकायतें आदि को अपनी कविताओं में जगह दी हैं। आमतौर पर देखा जाता है कि पति को पत्नी से कभी शिकायत हो गई तो वह बात करना बंद कर देता है। इसके पश्चात् आग्रह करती है कि वह उससे बात तो करे। कई दिनों से पति की आवाज सुनने के लिए पत्नी के कान तरस गए हैं। वह पति के साथ हँसना–बोलना चाहती है –

बहुत दिनों तक हुई प्रतीक्षा,
अब रूखा व्यवहार न हो।
अजी बोल तो लिया करो तुम
चाहे मुझपर प्यार न हो।

(सुभद्रा कुमारी चौहान, मुकुल, सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर, पंचम सं.– 1944 पृ. सं.–138)

'विरह' एक तरह से प्रेम मापने का पैमाना है। प्रेम में यदि विरह न हो तो प्रेम परिपक्व नहीं हो जाता है। प्रेम विरह अग्नि में तपकर ही पुष्ट होता है। कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान के काव्य में 'वेदना' या 'विरह' के विविध रूप दिखाई देते हैं। इनके काव्य में हम देखते हैं कि प्रिया को यह बोध होने लगता है कि जब अलग ही होना था तो क्यों उसे थोड़े समय के लिए संयोग का स्वाद चखाया गया –

मधुमय पीड़ा से मेरी
रीति प्याली भर लाये क्यों?
जलते जीवन में जल के
दो चार बिन्दु टपकायें क्यों?

(सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, जनवरी 2000, पृ. सं–138)

सुभद्रा के काव्य के माध्यम से हम उनका व्यक्तिगत प्रेम विश्वप्रेम की ओर उन्मुख होता हुआ देख सकते हैं। कहा जाता है कि विरह की पीड़ा प्रेम को अधिक पवित्र कर देती है। हमारे प्रेम को सूक्ष्मता से विशालता की ओर ले जाती है। विरह हमें ह्रदय की विशालता प्रदान करके, विश्व एकता की ओर प्रेरित करता है। कवयित्री आज विश्वप्रेम में मतवाली हो गई है। प्रेम की यही उदात्त भावना कवयित्री को सेवा पथ की राह दिखाती है। वह कहती है–

सेवाभाव लिए निकली मैं
अब जन कष्ट मिटाने को।

(सुभद्रा कुमारी चौहान, मुकुल, सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर, पंचम सं.–1944 पृ. सं.–21)

अतः यह कहना सही होगा कि सुभद्रा कुमारी चौहान जितनी राष्ट्रीय कवयित्री हैं उतनी ही प्रेममयी कवयित्री भी हैं।

मनुष्य सदा प्रकृति की गोद में रहने वाला प्राणी है प्रकृति के बिना मनुष्य की कल्पना ही नहीं की जा सकती है। कविता और प्रकृति का भी संबंध इस प्रकार अटूट है जिस प्रकार प्रकृति और मनुष्य का। विश्वहिंदी कोश में प्रकृति के कई अर्थ बताए गए हैं जैसे– स्वभाव, मूल गुण, योनि, लिंग, स्वामी, शिल्पी, शक्ति, परमात्मा, करण, जंतु, छंदोभेद, माता आदि। मानव और मानव निमृत पदार्थों के अलावा जो भी संसार में मौजूद है जब उसका चित्रण लेखन में किया जाता है तो उसे प्रकृति–चित्रण कहा जाता है। सुभद्रा जी के काव्य में प्रकृति विविध रूपों में आई है। कविता में कोयल अपनी कूक से लोक समाज एवं देश को जागृत करती नजर आती है। वह स्वयं स्वीकार करती हुई लिखती हैं–

अपनी कविता कानन की
मैं हूँ कोयल मतवाली
मुझसे मुखरित हो गाती
उपवन की डाली–डाली।

(सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी, 2000, पृ. सं –128)

सुभद्रा जी अपने जीवन की गतिविधियों को सदैव प्रकृति से जोड़ती हैं। ऐसा लगता है जैसे मनुष्य और प्रकृति के बीच का भेद मिट गया हो। कवयित्री प्रकृति के माध्यम से अपनी विरह वेदना भी प्रकट करती है। वह प्रिय की अनुपस्थिति में तड़प रही है अतः अपनी भावनाएं व्यक्त करते हुए कहती हैं कि –

बाल सूर्य की प्रथम रश्मि के
साथ–साथ ही आयी शाम।
जल तम में प्रज्जवलित हो उठी
वह वियोगी ज्वाला उद्दाम।

(सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. सं –139)

जो मानव नहीं है, उस पर मानव के गुणों का आरोप करने की प्रक्रिया को मानवीकरण कहा जाता है। 'मानवीकरण' छायावादी कवियों की मुख्य विशेषता मानी गयी है। प्रसाद, पंत, निराला व महादेवी वर्मा ने प्रकृति का मानवीयकरण करते हुए प्रकृति को मानव की भांति क्रिया–कलाप करते हुए दिखाया है। हिंदी साहित्य में पहले से इस परम्परा का पालन हुआ है। स्वच्छन्द कवि घनान्द की विरहणी नायिका 'पवन' को अपना दूत बनाती है और कहती है–

ऐ रे वीर पौन! सबै और गौन बीरी
ते सा और कौन, मनै ढर कौही बानि दे।

(आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, शास्त्री चन्द्रशेखर, घनानंद कवित्त, संजय बुक सेंटर, वाराणसी, संस्करण 2001, पृ. सं–218)

प्रकृति के मानवीकरण की इस परंम्परा को कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान आगे बढ़ाती हैं। अपने प्रिय के वियोग में नायिका बहुत विकल है। वह अपना संदेश शिशिर समीरण के माध्यम से अपने प्रिय तक पहुंचाना चाहती है? वह कहती है–

चूर–चूर हो गया हृदय यह
सह– सह कर अघात सखी।
शिशिर–समीरण भूल न जाना
कह देना सब बात सखी।

(सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2020, पृ.सं. 30)

सुभद्रा जी अपने काव्य में मानवीकरण के अलावा मानवतावादी रूप में भी प्रकृति–चित्रण किया है। प्रकृति की बात करते हुए यदि वृक्ष को देखें तो वह अपना रोम–रोम मनुष्य पर न्यौछावर कर देता है। धूप, ताप, वर्षा आदि आपदाओं में भी सब कुछ सहते हुए शांत भाव से तनकर खड़ा रहता है। वह प्रेम भाव से छाया, फल–फूल, शीतलता मनुष्य को देता है। वह हमारे प्राणों की रक्षा करता है। इसी वजह से सम्पूर्ण सृष्टि को संरक्षण देने वाली प्रकृति सदैव सुभद्रा जी को आकर्षित करती रही है। सन् 1913 में 'मर्यादा' पत्रिका में छपी उनकी 'नीम' कविता पाठक वर्ग के दिलों में बस जाती है। इस कविता में बताया गया है कि नीम मनुष्य जाति के लिए कितना लाभकारी है। वह सबके दुःख हर लेता है। इसे देख वह लिखती हैं कि –

सब दुखहरन सुखकर हे नीम! जब देखूँ तुझे।
तुहि जानकर अति लाभकारी हर्ष लेता है मुझे।।
ये लहलही पत्तियाँ हरी शीतल पवन बरसा रही।
निज मंद मीठी वायु से सब जीव को हरषा रहीं।।

(सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2020, पृ.सं. 10)

सुभद्रा जी ने अपने काव्य में संवेदनात्मक रूप में प्रकृति–चित्रण किया है। ऐसा लगता है जैसे प्रकृति मनुष्य के साथ संवेदना प्रकट कर रही है। उसके दुख में दुखी और उसके सुख में सुखी होती जान पड़ती है। इसी वजह से सुभद्रा जी की संवेदना की प्रकृति के साथ जुड़े बिना नहीं रह पाती है। वह अपनी एक कविता में बताती हैं कि खिले फूलों को हर कोई पसंद करते हैं किंतु मुरझाए या गिरे फूलों को कोई पसंद नहीं करता है। वह कहती हैं कि यदि मुरझाए फूल नीचे गिरे पड़े हैं तो उनको पैरों से रौंदना नहीं चाहिए क्योंकि यह उनकी अंतिम घड़िया हैं। यदि मनुष्य उनपर दो आँसू टपका दे तो उसके हृदय को शीतलता मिल सकेगी। कवयित्री लिखती हैं–

यह मुरझाया हुआ फूल है,
इसका हृदय दुखाना मत।
स्वयं बिखरने वाली इसकी
पंखुड़ियाँ बिखराना मत।

(सुभद्रा कुमारी चौहान, मुकुल, सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर, पंचम सं. 1944, पृ.सं. 2)

सुभद्रा जी के काव्य को देशभक्ति, राष्ट्रप्रेम, समाज, व्यक्ति आदि सब आकार देते नजर आते हैं और प्रकृति उसमें रंग भरने का कार्य करती है।

इसके अतिरिक्त सुभद्रा जी का वात्सल्य भाव उनकी कविताओं में झलकता है। सुभद्रा जी की बेटी के जन्म के साथ ऐसा लगता है जैसे सुभद्रा जी का बचपन दोबारा आ गया। वह अपनी बेटी की बाल क्रिड़ाओं को देख वातसल्य भाव में डूबी रहती है। इन्होंने ममत्व को पूर्ण रूप से चरितार्थ करने वाले बाल– साहित्य की रचना की है। इन्होंने केवल 'माँ' होने का ही नहीं 'शिशु' होने के अर्थ को भी साहित्य के माध्यम से स्पष्ट किया है। इसके साथ ही वे बाल साहित्य में भी राष्ट्रीयता का बीज डालना नहीं भूलती। सुभद्रा जी बच्चों का लगाव तलवार, तीर–कमान आदि के खिलौनों के प्रति दिखाती हैं। उनकी कविता में एक बालक कहता है–

मैं तलवार खरीदूँगा माँ; या मैं लूँगा तीर कमान
जंगल में जा, किसी ताड़का, को मारूँगा राम समान।

(सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण–प्रथम जनवरी, 2000 पृ. सं. – 183)

सुभद्रा कुमारी चौहान एक आस्तिक महिला रही हैं वह सदैव ईश्वर के अनुकूल रहने की बात करती हैं। इष्ट पर वह अटूट विश्वास रखती हैं किंतु वह अपनी थाली में धूप, दीया, बाती न रखकर सम्पर्ण, सेवा प्रेम, दया, ममता, मधुरिमा और विश्वास को स्थान देती हैं। वे लिखती हैं–

पूजा और पुजापा प्रभुवर
इसी पुजारिन को समझो,
दान दक्षिणा और निछावर
इसी भिखारिन को समझो।

(सुभद्रा कुमारी चौहान, मुकुल, सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर, पंचम सं.–1944 पृ. सं. 10)

सुभद्रा राम की परम भक्त हैं। जिस प्रकार राम विषम परिस्थितियों में एक आम मनुष्य की तरह हताशा और निराशा के शिकार हो जाते हैं किंतु धैर्य नहीं खोते और आशावान बने रहते हैं। शक्ति की आराधना करते हैं, ठीक इसी प्रकार सुभद्रा जी भी आशावान हैं। उन्हें पूर्ण विश्वास है कि भारतवासी एक दिन जरूर अपनी शक्ति का संचयन कर बेड़ियों में जकड़ी भारत माता को मुक्त करवाएंगे। वे 'विजय–दशमी' कविता में लिखती हैं –

रामचन्द्र की विजय कथा का
भेद बता आदर्श सखी।
प्यारा भारत वर्ष सखी।

(सुभद्रा कुमारी चौहान, मुकुल, सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर, पंचम सं.–1944 पृ. सं. 72)

निःसंदेह कह सकते हैं कि सुभद्रा जी की भक्ति उच्च कोटि की भक्ति है। इनकी भक्ति किसी भी प्रकार की संकीर्णता और अनुदारता से मुक्त है और अत्यन्त उदार, उदात्त और संकुचित है।

अतः सुभद्रा जी का काव्य अपेक्षित सभी गुणों से पूर्ण है। इस महान लेखिका को प्रेम, रोमांस, प्रकृति प्रेम, वात्सल्य, भक्ति आदि भावों को अपने काव्य में बहुत ही सुंदर रूप से उकेरा है। इस महान लेखिका ने प्रेम, रोमांस, प्रकृति प्रेम, वात्सल्य, भक्ति आदि भावों को अपने काव्य में बहुत ही सुंदर रूप से उकेरा है। उन्होंने तत्कालीन समय की समस्याओं को समझा, उनके प्रति जागृत रहीं, तथा राजनीतिक और साहित्य क्षेत्र में प्रवेश लेकर नीडर होकर राष्ट्र के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया। हिंदी की कवयित्रियों का नाम जब भी अंकित करा जाएगा उनका नाम स्वर्णिक अक्षरों से सदैव लिखा जाएगा।

बोध प्रश्न–2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

1. सुभद्रा जी के काव्य की क्या–क्या विशेषताएँ हैं?

   ....

   ....

   ....

2. सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से सम्बंधित सुभद्रा जी ने साहित्य में क्या योगदान दिया है।

....

....

....

3. सुभद्रा जी समाज में स्त्रियों की भूमिका को किस प्रकार देखती हैं।

....

....

....

बोध प्रश्न–3

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

1. सुभद्रा जी के जेल जाने का क्या कारण था?

....

....

....

2. राष्ट्रीय चेतना की कविता 'झांसी की रानी' जनजीवन को किस प्रकार प्रभावित करती है।

....

....

....

अभ्यास–1

1. नीचे एक प्रश्न के उत्तर में एक से अधिक विकल्प दिए जा रहे हैं। सही विकल्प को (√) के निशान से चिन्हित कीजिए।

   i) सुभद्रा कुमारी चौहान का जन्म सन् (1816 / 1904 / 1999) में हुआ था।

   ii) 1857 के संग्राम में अंग्रेजों को लोहा देने वाली लक्ष्मीबाई पर कविता (झांसी की रानी / वीरों का कैसा हो बसंत / चुनौती) है।

   iii) जलियाँवाला बाग की मार्मिक घटना सन्(1908 / 1916 / 1919) में हुई थी।

   iv) प्रसिद्ध 'मुकुल'कविता संग्रह का प्रकाशन वर्ष (1881 / 1931 / 2001) है।

2. i) सुभद्रा कुमारी चौहान गांधीवादी और मार्क्सवादी विचारधारा से बिल्कुल प्रभावित नहीं थी। ( )

   ii) सुभद्रा कुमारी चौहान अंहिसा की दृढ़ पक्षधर थी। ( )

   iii) देशप्रेम के कारण सुभद्रा जी को पढ़ाई बीच में ही छोड़नी पड़ी। ( )

   iv) सुभद्रा जी के लेखन में साहित्य और राजनीति दोनों का कोई संबंध नहीं है। ( )

v) सुभद्रा ने राष्ट्र की स्वाधीनता और उन्नति के लिए नारी जागृति को अति महत्वपूर्ण माना। ( )

10.4 युग परिवेश

सुभद्रा कुमारी चौहान का विवाह 20 फरवरी 1919 को सम्पन्न हुआ। विवाहोपरान्त वह बनारस के थियोसोफिकल स्कूल में भी भर्ती हुई। इस समय देश को स्वतंत्र कराने की बयार चल रही थी। देश की राजनीति में काफी उठक–पठक चल रही थी। विदेशी बेड़ियों को तोड़ने के लिए शिक्षा का प्रसार किया जा रहा था। इस शिक्षा में स्त्री शिक्षा सम्मिलित थी क्योंकि इसके बिना सामाजिक कुरीतियों और अंधविश्वासों को नष्ट करना संभव नहीं था। इन सब को सफल बनाने के लिए स्त्रियों में पर्दा प्रथा का भी विरोध हुआ। गाँव–शहर हर जगह हिन्दुस्तान में जागरण की हवा फैली हुई थी। उस समय देश–काल से प्रभावित होकर अधिकांश लेखकों की रचनाएँ देश–भक्तिपरक और समाजोन्मुखी होती थी। उस समय सुभद्रा कुमारी चौहान की कविताएं निरंतर पत्र–पत्रिकाओं में छप रही थीं। सन् 1920 के बाद के कुछ वर्ष भारतीय इतिहास में जन–जागृति, देश–प्रेम की अभिव्यक्ति और विदेशी शासन के प्रति एक व्यापक असन्तोष और आक्रोश की भावना के कारण अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। उस समय हर उम्र, हर क्षेत्र का व्यक्ति इस जागृति से अछूता नहीं था। वह चाहे कोई सरकारी कर्मचारी हो या सक्रिय राजनीतिक कार्यकर्ता, चाहे भक्तों को रामकथा सुनाने वाला रामायणी हो या चाहे गृहिणी। स्कूल जाने वाले नन्हे बच्चे की तरह बिना किसी बूझ के कूद–कूदकर चिल्लाते थे –

('गोल बाजार में लाठी–चार्ज, मर गए बेटा पंचम जार्ज')

इस प्रकार पुलिस वालों को देखकर भी गाना गाने लगते थे –

'फांसी पर झूला झूल गया मर्दाना भगत सिंह
मर के हमें सिखला गया मर जाना भगत सिंह'

इस समय की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिवेश पूर्ण रूप से देशभक्ति में ही डूबा हुआ था। साहित्य में भी लेखकों ने बढ़–चढ़ कर अपना देश प्रेम दिखाया और लोगों में उत्साह पैदा किया। अंग्रेजों का विरोध हमें भारतेंदु की लेखनी से दिखना शुरू हो जाता है और द्विवेदी युग से होता हुआ छायावाद में पूर्ण रूप से दिखता है। छायावाद में राष्ट्रीय, सांस्कृतिक काव्यधारा में माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', रामनरेश त्रिपाठी, सुभद्रा कुमारी चौहान मुख्य हैं। सुभद्रा कुमारी चौहान सत्याग्रह में भाग लेने वाली पहली महिला थी। सुभद्रा जी राजनीति और साहित्य दोनों में अंग्रेजों के खिलाफ मुखर रूप से सबके समक्ष उभरकर आती हैं। वह अपने युग परिवेश को समझने वाली महा विदुषी थीं।

10.4.1 राजनीतिक परिवेश

हम यह जानते हैं कि कोई भी सजग कवि अपनी तत्कालीन युग परिवेश से कटा हुआ नहीं है। उसकी ज्वलन्त राजनीतिक मुद्दों पर पैनी नज़र रहती है तथा अपनी कलम के माध्यम से वह लोगों के सामने उन मुद्दों को प्रस्तुत करता है।

हिंदी साहित्य में ऐसे महान कवि एवं साहित्यकार हुए हैं जिन्होंने राजनीतिक और साहित्य दोनों में अपने बौद्धिक व्यक्तित्व का परिचय दिया है। सुभद्रा कुमारी चौहान का व्यक्तित्व

उन्हीं में से एक है। सुभद्रा जी के द्वारा लिखी गई कविताएं हमारे समक्ष इतिहास को भी पुनर्जीवित कर देती हैं जैसे – 1857 की क्रांति, जलियाँवाला बाग हत्याकांड, असहयोग एवं सत्याग्रह आंदोलन आदि। हम सुभद्रा जी के राजनीतिक परिवेश को 2 भागों में बांट सकते हैं।

सुभद्रा पूर्व राजनीतिक परिस्थितियाँ (सन् 1857 – 1900 तक)	सुभद्रा युगीन राजनीतिक परिस्थितियाँ (सन् 1900– 1948 तक)

सुभद्रा पूर्व राजनीतिक (सन् 1857 – 1900 तक)

सुभद्रा कुमारी की कविता 'झांसी की रानी' भारतवर्ष में एक हुंकार पैदा करती रही है। बच्चों से लेकर बड़ों के बीच यह प्रसिद्ध कविता है–

'चमक उठी सन् सत्तावन में वह तलवार पुरानी थी
बुन्देलों हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।

सन् 1857 की क्रांति की पहली स्वाधीनता की लड़ाई है। इस लड़ाई में झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई ने अंग्रेजों के साथ डटकर मुकाबला किया था और उन्हें नाको चने चबवाये थे। यह युग वैश्विक पुनर्जागरण का युग था। औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप यूरोप के देशों में माल के उत्पादन में वृद्धि और बाजार ढूँढने की प्रतियोगिता बढ़ने लगी। इसी वजह से पुर्तगाल, हालैण्ड, ब्रिटेन, फ्रांस के लोग भारत में व्यापार के उद्देश्य से आए। महारानी ऐलिजाबेथ ने 16वीं शताब्दी में ईस्ट इंडिया कम्पनी को भारत के साथ व्यापार करने के लिए अधिकार–पत्र प्रदान कर दिया। इन्होंने प्रारंभ में बम्बई, मद्रास और कलकत्ता में अपनी कोठियाँ स्थापित की। इस समय यूरोप के देशों में युद्ध चल रहा था। जिसमें ब्रिटेन सबसे शक्तिशाली सिद्ध हुआ। डेढ़ सौ वर्षों तक ब्रिटेन चुपचाप भारत में व्यापार करता रहा और यहां की राजनीति को समझता रहा। वह मौके के इंतजार में था जैसे ही उसे केंद्रीय सरकार थोड़ी कमज़ोर नज़र आई वैसे ही भारत में 'फूट डालो राज करो' की नीति को अपनाकर भारत को उपनिवेश बनाने की योजना में सक्रिय हो गया। बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला को हरा कर अंग्रेजी साम्राज्य ने अपनी नींव डाली। इसके पश्चात उन्होंने एक राजा को दूसरे राजा से लड़वाया। धीरे–धीरे पूरे भारत को अपना गुलाम बना लिया। भारत के राजा–महाराजा काफी देर में अंग्रेजों की चाल समझ पाए। इसके पश्चात कठिन परिश्रम से सन् 1857 में भारतीयों ने अंग्रजों के खिलाफ पहली स्वाधीनता की लड़ाई छेड़ी। इसे ही भारत का पहला स्वाधीनता संग्राम कहा जाता है। यह संग्राम सफल तो नहीं रहा किंतु इसने अंग्रेजी शासन तन्त्र की जड़ें हिला दी। इस विद्रोह का ऐतिहासिक महत्व यह है कि इसमें हिन्दू और मुसलमान दोनों ने मिलकर एक साथ विदेशी शासन के विरूद्ध लड़ाई लड़ी थी। इस क्रांति की भूमिका इतिहास में इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि झाँसी की रानी 'लक्ष्मीबाई' की वीरता शौर्य एवं साहस इस क्रांति में देखते ही बनती है। इस ऐतिहासिक घटना और ऐतिहासिक चरित्र को सुभद्रा कुमारी जी ने अपने साहित्य में विशिष्ट स्थान दिया है।

सुभद्रा युगीन राजनैतिक परिस्थितियाँ (सन्1900–1948 तक) सन 1857 की क्रांति में अंग्रेज विजयी रहे जिसके पश्चात भारतीय सल्तनत की बागडोर उन्होंने अपने हाथों में ली। किंतु अकेले इतने बड़े हिन्दुस्तान को संभालना आसान बात नहीं थी इसलिए उन्होंने भारतीयों को अपने साथ मिलाने का षडयंत्र किया। सन् 1862 ई. में अंग्रेजों ने एक अधिनियम पारित किया जिसके तहत भारतीयों को केन्द्रीय विधानमंडल में समुचित स्थान प्रदान किया गया।

सन् 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई। इस संगठन का गठन ए.ओ.ह्यूम के समर्थन से हुआ। ऐसा माना जाता है कि ह्यूम ने इसलिए समर्थन किया था ताकि भारतीय राजनीतिक गतिविविधियों की जानकारी प्राप्त हो सके किंतु ह्यूम की यह इच्छा पूरी नहीं हो सकी। विपिन चंद्रा लिखते हैं कि – 'यदि श्री ह्यूम ने कांग्रेस का उपयोग एक सुरक्षा नालिका (सेफ्टी वाल्व) के रूप में करना चाहा तो कांग्रेस के प्रारंभिक नेताओं ने भी उम्मीद की थी कि वे श्री ह्यूम का इस्तेमाल 'विद्युत प्रतिरोधक' (स्पहीजपदह ब्वदकनबजवत) के रूप में करेंगे। (सुभद्रा कुमारी चौहान–सृजन एवं चिंतन, पृष्ठ–38)

उन दिनों कांग्रेस की भूमिका को दर्शाने के लिए सुभद्रा कुमारी लिखती हैं–

मरे हुए को अमर बनाने–
वाली तू संजीवनी मन्त्र
प्रिय स्वराज्य–संचालन का है
एकमात्र तू जीवित यन्त्र।।

(कविता संग्रह – 'मुकुल' पृ. 94, सं–1944)

अंग्रेज मूलतः कूटनीतिज्ञ थे। वे 'फूट डालो और राज करो' की नीति को आधार बनाकर पूरे देश पर कब्जा करना चाहते थे। उन्होंने हिन्दू–मुसलमानों में हिंसा और विद्रोह का भाव भर दिया। दोनों भ्रमित होकर एक–दूसरे को मारने काटने लगे। भारतीयों की सोचने समझने की क्षमता अंग्रेजों ने समाप्त कर दी थी। सुभद्रा जी इस विभत्स दृश्य को देखकर लिखती हैं–

'अंधकार छा रहा भ्रमित सी
आज हमारी मति है।
जिधर उठते दृष्टि दिखायी
देती क्षति ही क्षति है।'

(सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन इलाहाबाद पृ. 142, सं–जनवरी–2000)

सन् 1905 में जब लार्ड–कर्ज़न भारत आए तो उन्होंने बंगाल विभाजन की योजना भारतीयों के सामने रखी। किंतु यह भारतीयों को स्वीकार नहीं था पुनः हिन्दू–मुसलमान में एकता कायम हो गई और दोनों साथ मिलकर इसका विरोध करने लगे। अंग्रेजों को यह एकता रास नहीं आई और सन् 1906 में 'मुस्लिम लीग' नामक एक अलग पार्टी की स्थापना करवा ली। लार्ड कार्जन की 'दुर्नीति' ने दोनों जातियों की खाई को पुनः चौड़ा कर दिया था।

असंतोष का एक बहुत बड़ा कारण सन् 1914 में प्रथम विश्वयुद्ध के समय अंग्रेजों ने भारतीयों के साथ जो धोखा दिया था। अंग्रेजों को भारतीयों की बहुत जरूरत थी इसलिए हार्डिंग्स को गर्वनर जनरल बनाकर भारत भेजा गया था ताकि भारतीय उन पर विश्वास कर सकें कि वे उनके लिए काफी कुछ कर सकते हैं। किंतु सन् 1919 में युद्ध समाप्त होने पर

भारतीयों की आशाओं पर पानी फिर गया। लोकमान्य तिलक ने इसके लिए home rule नामक आंदोलन को चलाया था। जिसके अनुसार अंग्रेज प्रतीकात्मक रूप से शासक रहेंगे किंतु देश के भीतर शासन भारतीयों द्वारा संचालित किया जाएगा। किंतु अंग्रेजों ने फिर विश्वास तोड़ दिया और 'राजद्रोह अधिनियम' एवं 'रोलेक्ट एक्ट' बना दिया जिसका सीधा लक्ष्य भारतीयों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को बाधित करना था। यह पूरे देश को अस्वीकार था और इसका विरोध भी हुआ।

13 अप्रैल सन् 1919 में जलियाँवाला बाग में 'रोलेक्ट एक्ट' के संदर्भ में सभा हो रही थी। इस समय अंग्रेजी सेना के कमांडर जनरल डायर ने बाग को चारों ओर से घेर लिया और अंदर–बाहर जाने वाले एक मात्र दरवाजे पर तोप लगवा दी जिसमें हजार से ज्यादा बच्चे–बूढ़े, महिलाएं–पुरुष मारे गए और सैंकड़ों व्यक्ति कुँए में जा गिरे। सुभद्रा कुमारी इस पीड़ा को सह नहीं पाई और उनकी संवेदना व पीड़ा शब्दों के माध्यम से फूट पड़ी–

हाथ काँपता, हृदय धड़कता,
है मेरी भारी आवाज़।
अब भी चौंकाता है जलियाँ–
वाले का वह गोलंदाज जलियाँ

(कविता संग्रह 'मुकुल' पत्र 70)

मुसलमान भी अंग्रेजों के अमानुष व्यवहार से परेशान रहने लगे थे जिसका कारण खिलाफत आन्दोलन था। भारतीय मुस्लिम भावनाओं के अनुकूल यह आन्दोलन चलाया गया था। तुर्की के साथ किये गए ब्रिटिश दुर्व्यवहार का विरोध करना इस आंदोलन का मुख्य उद्देश्य था। महात्मा गांधी ने भी इस आंदोलन का समर्थन किया।

गाँधी जी ने अंग्रेजों को सहयोग देने की बजाय अब असहयोग करने का निर्णय किया। सन् 1920 में उन्होंने असहयोग आन्दोलन प्रारंभ किया। महात्मा गांधी, ने जनता के समक्ष तीन सिद्धांत रखे थे – 1. असहयोग 2. सत्याग्रह 3. अहिंसा। गांधी जी के आंदोलनों का प्रभाव सुभद्रा कुमारी पर पड़ता है। इस आंदोलन का इतना प्रभाव सुभद्रा पर पड़ा कि वह स्कूली शिक्षा को बीच में ही छोड़कर आन्दोलन में कूद पड़ी। वह लिखती हैं कि –

'विजयिनी माँ के वीर सुपुत्र,
पाप से असहयोग ले ठान
गुँजा डालें स्वराज की तान
और सब हो जावें बलिदान।'

(कविता संग्रह–मुकुल)

इस आंदोलन में स्त्रियों की अहम भूमिका रही है। जिस सक्रियता और लगन के साथ वे सम्मिलित हुई वह एक महान बात थी। सुभद्रा ओजस्वी वाणी में लिखती हैं –

सबल पुरुष यदि भीरू बनें,
तो हमको दे वरदान सखी।
अबलाएँ उठ पड़ें देश में
करे युद्ध घमासान सखी।

पन्द्रह कोटि असहयोगिनियाँ,

दहला दें ब्रह्मांड सखी।

(कविता संग्रह–मुकुल, पृ.74)

सन् 1928 में साइमन कमीशन स्थापित किया गया। इस कमीशन के सात सदस्य थे, सभी अंग्रेज थे। इस वजह से इसे 'समस्त श्वेत' (all white) कहा जाने लगा। इस कमीशन का मुख्य उद्देश्य था कि इस तथ्य का निर्णय करना कि भारतीयों में शासन करने की योग्यता है या नहीं। इस कमीशन का जगह–जगह 'साइमन गो बैक' के नारे से काफी विरोध हुआ। इसके खिलाफ लाला लाजपत राय के नेतृत्व में एक विशाल जुलूस निकाला गया। जिसमें अंग्रेजों ने लाठी चार्ज करवाया और चोट लगने से घटनास्थल पर ही उनकी मृत्यु हो गई। आहत सुभद्रा ने उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए लिखा है –

भारत के हो राजतिलक, तुम

तिलक यहीं के कहलाओ

अमरपुरी बलि कर दो इस पर

यही रहो, हा! मत जाओ।।

(कविता संग्रह, पृ.101)

कांग्रेसी साइमन रिपोर्ट को मानने के लिए बिल्कुल सहमत नहीं थे। अंग्रेज सरकार ने भारतीय नेताओं को चुनौती दी कि वे सर्वसम्मति से अपनी रिपोर्ट तैयार करें। पंडित मोती लाल नेहरू की अध्यक्षता में रिपोर्ट बनाकर सौंपी गई वह अंग्रेजों ने खारिज कर दी। इस रिपोर्ट को नेहरू रिपोर्ट कहा गया। यह रिपोर्ट सर्वदलीय सम्मेलन संयोजित करके बनाई गई थी। इसका परिणाम यह हुआ कि 26 जनवरी, 1930 को कांग्रेस ने यह घोषणा की कि – ''अब हम प्रतीक रूप में भी ब्रिटिश शासन को नहीं चाहते तथा इसी दिन हम गणतंत्र दिवस मनायेंगे।''

(विनय कुमार पाठक– हिंदी साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि, मित्तल एण्ड संस, दिल्ली')

देश में अब आंतकी और साम्प्रदायिक घटनाएँ लगातार बढ़ रही थीं, इसी बीच किसी ने केन्द्रीय एसेम्बली में पब्लिक गैलेरी से बम का गोला फेंक दिया। इससे अंग्रेजों में अफरा–तफरी मच गई। ऐसे उत्तेजित वातावरण को शांत करने के लिए अंग्रेजों ने इंग्लैड में गोलमेज परिषद् की स्थापना की। इधर महात्मा गाँधी भी घोषणा कर चुके थे कि यदि 1930 तक 'स्वराज्य' नहीं दिया गया तो वे सत्याग्रह करेंगे। इसके पश्चात भी अंग्रेजों की गतिविधियों में कोई बदलाव नहीं आया जिसका परिणाम हुआ सन् 1930 में 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' प्रारम्भ किया गया।

अंग्रेज भारतीयों से नमक के ऊपर भी कर लेते थे। भारतीय करों के बोझ से दबे जा रहे थे। इसके प्रतिरोध में महात्मा गांधी ने नमक सत्याग्रह शुरू किया। उन्होंने साबरमती आश्रम से लेकर दांडी तक पद यात्रा की। गांधी जी ने समुद्र के जल को स्टोव पर उबाल नमक बनाया और 'नमक कर' का विरोध किया। इसमें पुरुषों के साथ भारी संख्या में स्त्रियों ने भी भाग लिया। इसके साथ देशभर में ब्रिटिश माल के बहिष्कार का आन्दोलन फैल गया। इसके अलावा 'मद्य निषेध' आन्दोलन भी हुए। नमक सत्याग्रह के समय अंग्रेजों द्वारा लाठी चार्ज किया गया। निडर सुभद्रा भी इस सत्याग्रह के समय जेल गयीं; वे लिखती हैं–

गोली लाठी–चार्ज जेल की
वह भीषण दीवारें।
काल–कोठरी दण्ड यात्ना
वे कोड़ों की मारें।

(सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, प्रथम सं. जनवरी, 2000 पृ. 143)

इस आंदोलन से अंग्रेज बातचीत करने के लिए मजबूर हो गए। उन्होंने गाँधी को लार्ड इरविन से मिलने के लिए आमंत्रित किया। दोनों के बीच एक समझौता हुआ जिसे 'गांधी इरविन समझौता' कहा जाता है। किंतु अंग्रेज अधिक समय तक इस समझौते पर टिक नहीं सके जिससे भारतीयों में पुनः आक्रोश पैदा हो गया।

नमक सत्याग्रह होने से अंग्रेजों को एहसास हो गया कि इस प्रकार वातावरण बना रहा तो लम्बे समय तक भारत पर उनका पूर्ण राज नहीं रह पाएगा। इस लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए इंग्लैंड के प्रधानमंत्री एवं लेबर पार्टी के नेता मैक्डोनल्ड ने अपने अंग्रेज साथियों के साथ सलाह करके लन्दन में गोलमेज सम्मेलन आयोजित किया। सन् 1930–1932 के बीच तीन गोलमेज सम्मेलन आयोजित किए गए। पहले गोलमेज सम्मेलन (1930) में मतभेद के कारण कांग्रेस के प्रतिनिधि महात्मा गांधी बिना समझौते के लौट आए थे, दूसरे सम्मेलन (सन् 1931) में कांग्रेस ने भाग नहीं लिया तथा तीसरे गोलमेज सम्मेलन (1931) में अधिकतर मुख्य भारतीय राजनीतिक प्रमुख मौजूद नहीं थे। इस सम्मेलनों का उद्‌देश्य भारत को छिन्न–भिन्न करना ही नजर आ रहा था। इसी बीच गांधी ने नारा दिया 'करो या मरो'। जिसके लिए गांधी के साथ लगभग तीस हजार जनता को जेल में डाला गया। सुभद्रा अपनी विदा कविता में लिखती हैं –

तिलक, लाजपत गाँधीजी भी
बन्दी कितनी बार हुए।
जेल गये, जनता ने पूजा,
संकट में अवतार हुए।।

(कविता संग्रह–मुकुल, सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर प्रसं.1944, पृ स.90)

सन् 1939 में दूसरे विश्व युद्ध की शुरूआत हो चुकी थी। भारतीय यह समझ चुके थे कि किसी बड़े आन्दोलन के बिना स्वाधीनता नहीं मिल सकती। अतः कांग्रेस पार्टी ने व्यक्तिगत सत्याग्रह प्रारम्भ कर दिया। व्यक्तिगत सत्याग्रह करने वाले प्रथम सत्याग्रही 'विनोबा भावे' जी थे। इसका परिणाम यह हुआ अंग्रेजी सरकार को मजबूरी में नई विधान सभा बनानी पड़ी। इसके अनुसार भारत के सभी प्रान्तों में विधान सभाएँ बन गईं और इन प्रातों के ऊपर दो केन्द्रीय सभाएँ बनाई गईं – 1. विधान सभा 2. राज्य सभा। इसमें एक पक्ष तो था कि विधान सभा में सभी मंत्रीमंडल भारतीय होंगे ताथा दूसरा पक्ष यह था कि गर्वनर जनरल के अधिकारों में वृद्धि कर दी गई थी। इस मंत्रीमंडल के विचारों को खारिज करने का पूर्ण अधिकार था। इससे यह साबित हो गया कि अभी भी पूर्ण अधिकार अंग्रेजों का है। मतदान पद्धति में भी उन्होंने कूटनीति अपनाई। विभिन्न जाति–वर्ग, समुदाय, धर्म के लोगों को आपस में लड़वाया ताकि सब लोग आपस में एकजूट न हो पाएं और उनका शासन कायम रहे। इन विषम परिस्थितियों के बाद भी कांग्रेस ने चुनाव लड़ा और जीत अर्जित की। अंग्रेजों को यह सहन नहीं हुआ और मुसलमानों को भड़काना शुरू किया जिसके कारण साम्प्रदायिक घटनाएं अधिक बढ़ गई । सुभद्रा अपने कराहते हुए हृदय से लिखती हैं–

अंधकार! सघनाँधकार! हा!
निराधार संस्कार हुआ।
हम असहाय निहत्थों पर, यह
कैसा भीषण वार हुआ।।

(कविता संग्रह–मुकुल, सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर, 5वां संस्करण–1944 पृ सं 99)

इसी बीच मुस्लिम लीग के नेता जिन्ना ने अलग देश बनाने की मांग की। अन्ततः दुख के साथ देश का विभाजन हुआ। कितने ही त्याग, बलिदान यातनाओं के पश्चात् 15 अगस्त 1947 में भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुई। अंग्रेजों का सूरज डूब चुका था। निःसंदेह देश की राजनीति और साहित्य में सुभद्रा जी की बहुत ही महत्वपूर्ण और मजबूत भूमिका रही है।

10.4.2 सामाजिक परिवेश

जिस प्रकार सुभद्रा जी के युग परिवेश में भारतीय राजनीति में उठा–पठक चल रही थी ठीक उसी प्रकार भारत का सामाजिक परिवेश भी उस समय त्रुटिग्रस्त था। कई सारी आई खामियों के कारण सामाजिक ढाँचा चरमराने लगा था। समाज में आर्थिक शोषण से उत्पन्न हीन दशा, जमींदारी प्रथा, दासत्व प्रथा, बेरोजगारी, भूखमरी, महँगाई, मादक–द्रव्य सेवन, धर्माडम्बर, अन्ध–विश्वास, जातिवाद, स्त्री सम्बंधित विविध कुप्रथाओं आदि से उस समय देश की कमर टूट गई थी जिसके उपचार के लिए बाद में कुछ समाज सुधारक आंदोलन चलाए गए। इन सबके प्रति सामाजिक कार्यकत्ताओं ने अपना ध्यान आकर्षित किया। इसके साथ ही अपने आंदोलनों के माध्यम से समाज में एक नई जागृति लाने का प्रयास किया। अंग्रेजों के कुशासन ने गाँव व शहरों में नए–नए वर्गों को जन्म दिया है। भारतीय गाँव–देहातों में जमींदार वर्ग, काश्तकार वर्ग, गरीब किसान वर्ग, खेतिहर मज़दूर वर्ग, आधुनिक सूदखोर तथा व्यापारी वर्ग पैदा हुए और शहरों में औद्योगिक व्यवसायिक और वित्तिय पूँजीपति, कल कारखानों, यातायात आदि में काम करने वाला आधुनिक मजदूर वर्ग तथा कारीगर, डॉक्टर, इंजीनियर, पत्रकार, वकील, अध्यापन, मैंनेजर, क्लर्क आदि बुद्धि कर्मी वर्ग का भी जन्म हुआ।

अंग्रेजों का क्योंकि दबदबा बहुत ज्यादा था, वे अत्यंत क्रूर थे इसलिए कई लोग उनकी चापलूसी करने लग गए। एक तबका अंग्रेजों के चापलूसों का भी खड़ा हो गया। इनका काम चापलूसी करना और अपमान का घुँट पीना ही रह गया था।

समाज में तमाम कमजोरियों के कारण देश की स्थिति उस समय दयनीय थी और देश के भविष्य को भी दयनीय बनाने की तैयारी चल रही थी। उस समय लिंग भेद एक बड़ी समस्या थी। पुरुष के लिए माना जाता था कि वह कुल का दीपक है, सबल व शक्तिमान है और स्त्रियाँ नाजुक, स्वभाव से दुर्बल बुद्धि से कमजोर व अपनी रक्षा खुद न कर सकने वाली हैं। कुछ परम्परागत लोगों का मानना था कि स्त्रियों को शिक्षा देना पाप है। यदि स्त्री को शिक्षा दी तो वह चरित्रहीन हो जाएगी, कुल का विनाश कर देगी। इस प्रकार की संकीर्ण धारणाओं के कारण स्त्रियाँ सदियों से शिक्षा से वंचित रहीं। उसे दोयम दर्जे का माना गया, सदैव उपेक्षिता रहीं। स्त्री शिक्षा की जब माँग उठी तो सामन्ती ढाँचें और लिंग भेदीय समाज की जड़े हिल गई। 19वीं सदी के समाज सुधारकों का लक्ष्य था– स्त्रियाँ पढ़ें लिखें, सामाजिक उन्नति के मार्ग में अग्रसर हों, सुन्दर और साक्ष्य समाज की धूरी बनें।

19वीं सदी से पूर्व समाज में स्त्रियों से सम्बंधित कई कुप्रथाएं थी जिनके कारण नारी का जीवन नरक के समान हो गया था। जैसे– सती प्रथा, पर्दा प्रथा, बाल–विवाह, बहुपत्नी प्रथा, वेश्यावृति एवं अनमेल विवाह, दहेज प्रथा आदि।

उस समय पुरुष को ही श्रेष्ठ माना जाता था, स्त्री का कोई अस्तित्व नहीं था। इस वजह से पति की मृत्यु होने पर स्त्री के अकेले रहने की समाज कल्पना ही नहीं कर सकता था। माना जाता था पत्नी पति के साथ स्वर्ग जाएगी और उसे पति के शव के साथ जला दिया जाता था। ये घटनाएँ सबसे अधिक उच्च परिवार में दर्ज की गई। स्त्री चाहे किसी भी वर्ग से आती हो उसकी स्थिति हर जगह चिंतनीय थी।

इस प्रकार पर्दा प्रथा स्त्रियों में इसलिए थी ताकि पुरुष उसे नियंत्रित कर सके। वह अपने परिवार के अलावा कोई दूसरी दुनिया को गलती से भी न देख पाए। स्त्री को घर से बाहर तो दूर घर के आंगन में भी मुँह उघाड़ने की आजादी नहीं थी।

19 सवीं सदी में बालिकाओं को लेकर भारतीय मानसिकता बहुत ही अजीब थी। बल्कि माता–पिता का मानना था कि 11 वर्ष से पहले बेटी का विवाह कर देना चाहिए अन्यथा वे व्याभिचारिणी हो जायेंगी। उस समय लोगों का यह भी मानना था कि बाल विवाह से जिस दाम्पत्य प्रेम की सृष्टि होती है वह विशुद्ध प्रेम अधिक उम्र में विवाह होने से संभव नहीं होता है।

इसके अलावा समाज में बहुपत्नी प्रथा भी दीमक की तरह स्त्रियों की स्थिति को और खोखली करती जा रही थी। इसमें एक पुरुष कई स्त्रियों से विवाह कर सकता था। यह बंगाल के कुलीन ब्राह्मणों के घरों में एक रोग की तरह था। राजा राममोहन राय ने भी इसकी पुष्टि करते हुए लिखा है– ''कुलीन ब्राह्मण दस, बीस, तीस लड़कियों तक ब्याह लाते हैं इसका नतीजा यह होता है कि बंगाल में आत्महत्या करने वाली स्त्रियों की संख्या अन्य ब्रिटिश प्रांतों की अपेक्षा दस गुनी है''

(डॉ. श्रीनिवास शर्मा, राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष और हिंदी पत्रकारिता, छपते–छपते, प्रकाशन, कलकत्ता, प्रकाषन वर्ष–1999, पृ.स.–254)

इसी प्रकार लड़कियों की सौदे–बाजी, उनको खरीदना–बेचना यह विकृति समाज में व्याप्त थी। बंगाल और मिथिला में दो तिहाई ब्राह्मण यही काम करते थे। अपनी लड़कियों को बेचकर समाज में यह बताते थे कि उन्होंने अपनी लड़की का विवाह कर दिया है। यह करके वे काफी धन कमाते थे। उनके लिए लड़की मतलब कमाई का साधन था।

इसी प्रकार दहेज प्रथा भी समाज में अपनी जड़े जमाए बैठी थी। इसमें वर पक्ष, वधु पक्ष से दहेज वसूलते थे। 19वीं शताबदी से पूर्व यह समस्या हमारे समाज में नहीं थी। गरीब से गरीब पिता अपनी बेटी को अपनी हैसियत के अनुसार विदा करते हुए दिल से जो बनता था दान करते थे। किंतु जैसे–जैसे लोग उन्नत होते गये। शिक्षा का प्रसार बढ़ा लड़के और अधिक तरक्की करने लगे अब उन्हें अपने विवाह के लिए अपनी नीलामी लगाने में बिल्कुल शर्म नहीं आती है। माखनलाल चतुर्वेदी इस संदर्भ में लिखते हैं–

> ''आज दहेज बन्द नहीं है। समझदार लड़के जामाता बनकर लोगों के दरवाजों पर बिकने में संकोच नहीं करते। बालिकाएँ इस कुप्रथा के भय से पिताओं द्वारा निर्दयतापूर्वक जन्मते ही मारी जा रही हैं। कई प्राण त्याग रही हैं और कई कठोर काम के कराल पुष्प वाणों का लक्ष्य बनकर, कोई प्रकट और कोई गुप्त रूप से वैश्या बन रही हैं।''

(श्रीकांत जोशी, माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली–2, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण–2003, पृ.सं.29)

स्त्री हर कोण से पीड़ित थी। दहेज देने के पश्चात भी उनके आजीवन सुखी रहने की जिम्मेदारी अधिकतर ससूराल वाले नहीं लेते थे। और यदि दुर्भाग्यवश विधवा हो जाए तो उसकी स्थिति और अधिक दर्दनाक हो जाती थी। कारण यह था कि लड़कियों को पहले शिक्षा ग्रहण करने नहीं दिया गया जिससे वह कमाने लायक नहीं हो पाती थी और पति की मृत्यु के पश्चात वह परिवार के अन्य सदस्यों पर बोझ मानी जाती थी। उस समय क्योंकि पर्दा प्रथा भी थी। स्त्रियों को पूर्ण रूप से नियंत्रण या कहें कि बंदिश में रखा जाता था तो समाज के लोग यह कल्पना ही नहीं कर पाते थे कि विधवाएं पति के जाने के बाद पवित्र जीवन व्यतीत कर सकती हैं। इसलिए पति की मृत्यु के पश्चात लोग उसे अत्यंत क्रूरता के साथ पति की लाश के साथ जला देते थे।

स्त्री का पैदा होना एक तरह से अभिशाप माना जाता था। उनकी स्थिति अधिकतर क्षेत्र में खराब ही थी। सदैव धर्म के नाम पर उन पर अकथनीय अत्याचार किए जाते थे। पैतृक सम्पति पर पुत्री को अधिकार नहीं दिया गया था केवल पुत्र का अधिकार था। आज भी देखें तो संवैधानिक रूप से पैतृक सम्पति पर पुत्री का अधिकार तो है किंतु यदि वह मांग ले तो परिवार की वह शत्रु हो जाती है और बहन के साथ भाई का वर्षों पुराना प्रेम एकदम से समाप्त हो जाता है।

समाज में स्त्री को अधिकारों से वंचित व कई कुप्रथाओं से ग्रसित रखा गया। तमाम कुप्रथाओं और अंधविश्वासों से जकड़े समाज को मुक्त करने के लिए बंगाल में सर्वप्रथम 'युवा बंगाल आन्दोलन' ने प्रयास किया। 19वीं शताब्दी के तीसरे–चौथे दशक में अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करने वाले जागरूक बंगालियों का युवावर्ग उभरा और उन्होंने राष्ट्रीयता पर बल दिया। उन्होंने पुरानी सड़ी–गली व्यवस्था और परम्परा का घोर विरोध किया।

बंगाल में ब्रह्म समाज की स्थापना सामाजिक सुधार के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण घटना है। रूढ़िवादी विचारों को तिलांजलि देकर ब्रहम समाज ने विवेकपूर्ण वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानवीय प्रतिष्ठा और सामाजिक समानता के सिद्धांत ने समर्थन किया। ब्रहम समाज ने धार्मिक, सामाजिक, एवं शैक्षणिक सुधार किए हैं। ब्रहम समाज के संस्थापक राजा राममोहन राय और इनके अनुयायियों ने शास्त्रों का सहारा लेकर यह दर्शाने की कोशिश की कि धर्म शास्त्रों में भी सती प्रथा का जमकर विरोध किया गया। ब्रह्म समाज के अतिरिक्त प्रार्थना समाज, आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन आदि ने समाज सुधार और विशेष रूप से स्त्री की दशा सुधारने में बड़ी भूमिका निभाई है।

समाज सुधारक व राष्ट्रवादी काव्यधारा की महत्वपूर्ण लेखिका सुभद्रा कुमारी चौहान की रचनाओं में भी नायिकाएं रूढ़ीग्रस्त समाज को चुनौती देती हैं, विरोध करती हैं। पुरुषों से मित्रता करती हैं, उनके साथ कंधे से कंधा मिलाकर जूलूस करती हैं। वे आंदोलनों में भाग लेती हैं किंतु कहीं भी मर्यादा का अतिक्रमण नहीं करती हैं। कह सकते हैं कि सुभद्रा जी ने महिलाओं को आगे आने के लिए प्रेरित किया और वो आगे आईं किंतु वे समाज की इच्छानुसार मर्यादा को लांघती नहीं हैं। हम जानते हैं कि कहानियों में यदि सत्य बताया जाए तो एक समय बाद वह ऊब पैदा करती है इसलिए सुभद्रा जी की रचनाओं में सत्यता के साथ–साथ कल्पना भी मिलती है। लेखिका ने अपनी रचनाओं में समाज की कुरीतियों वे अंधविश्वासों पर व्यंग्य करने के लिए व्यंग्य शैली का भी प्रयोग किया है।

10.4.3 आर्थिक परिवेश

भारत के इतिहास में सन् 1757 ई. का युद्ध (प्लासी का युद्ध) विशेष महत्व रखता है। इस युद्ध में अंग्रेजों की जीत हुई थी और बंगाल के नवाब की हार हुई थी। अंग्रेजों की जीत

भारत की आर्थिक बदहाली का पैगाम था। भारत की ये बदहाली स्वतंत्रता के पूर्व तक बनी रही। प्लासी के युद्ध की जीत के बाद क्लाइब राजाओं का भगवान बन गया और जिस नवाब से उसे ज्यादा कमाई होती वही उसका खास बन जाता। क्लाइब ने अपनी कम्पनी के चाकरों को छूट दे दी कि ज्यादा से ज्यादा व्यापार करें, देशी लोगों को बाहर रखें और कुछ चीजों के व्यापार पर अधिकार कायम करे, इससे लोगों की दशा और बिगड़ गई और वे उतपीड़ित व निर्धन होते चले गए।

विश्व पूँजीवाद की तीन मंजिलें होती हैं– व्यापारिक पूँजीवाद, औद्योगिक पूँजीवाद और महाजनी पूँजीवाद। अंग्रेजों ने भारत में अपना कदम रखते ही तीनों पूँजियों पर अपना अधिकार जमा लिया। अंग्रेज भारत व्यापार करने आए थे और फिर अपनी कूट नीति से भारत के राजा बन बैठे। अंग्रेजों के राज का एक ही लक्ष्य था; भारत को लूटकर अपने देश को समृद्ध बनाना। सन् 1857 की क्रांति में भारतीयों की हार हुई जिसके बाद सन् 1858 में अंग्रेजों ने घोषणा पत्र जारी कर दिया, कम्पनी का राज समाप्त हो गया। अब भारत की जनता महारानी विक्टोरिया की प्रजा बन गई भारतेन्दु ने अंग्रेजी राज की बार–बार आलोचना की थी। कम्पनी के राज और विक्टोरिया की घोषणा के पश्चात की स्थिति पहले जैसी बनी हुई थी। भारतीयों की स्थिति में किसी प्रकार का कोई सुधार नहीं आया भारत को सोने की चिड़िया कहा जाता था। इसी भारत को आर्थिक रूप से बरबाद करने के लिए अंग्रेजों ने कई क्रूर हथकण्डें अपनाए। अंग्रेजों ने औद्योगिक क्रांति के लिए भारत में लूट मचा दी। इंग्लैड में जो औद्योगिक क्रांति हुई थी उसके लिए पूँजी भारत से ही लूटी गई थी। इस बात की पुष्टि सुजाता राय की पुस्तक 'राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन और हिंदी पत्रकारिता का आदिकाल' से होती है। इस रहस्य से सम्बंधित खुलासा होता है –''अचूक धन राशि समुद्र पार से इंग्लैड पहुँची थी? इसमें आंशिक योगदान तो दासों के व्यापार का था लेकिन सर्वाधिक धन 1760 के दशक में भारत की सुनियोजित लूट से हासिल हुआ था'' 18वीं सदी पहले इंग्लैंड कृषि प्रधान देश था किंतु जैसे–जैसे भारत से पैसा इंग्लैंड पहुंचता रहा वैसे–वैसे इंग्लैड में पूँजी संचय होता गया। जब पूंजी का भरपूर संचयन हो गया तब जाकर इंग्लैड में औद्योगिक क्रांति आई। भारत में इस लूट की प्रक्रिया को तेज करने के लिए अंग्रेजों ने रेल, तार और डाक का विस्तार किया इसके अलावा 1850 के आस–पास कुछ बन्दरगाहों का भी विकास हुआ। भारत में ब्रिटिश बैंको की शाखाएँ भी खोली गयीं। जिन–जिन चीजों में यहाँ विस्तार और विकास किया गया वो पैसा भी विदेश से नहीं आया; यहीं का पैसा लगाया गया। किंतु अंग्रेजों ने इन खर्चों को भारत के कर्ज के खाते में डाला गया और इस कर्ज पर ब्याज लगाया जिसे इंग्लैंड की तिजारियों में भरा गया।

अंग्रेजों ने साम्राज्य विस्तार के लिए जो भी युद्ध लड़े उनका भी अधिकांश खर्च भारत से वसूला गया। यह भारत पर बहुत बड़ा आर्थिक बोझ था। सन् 1857 के सैनिक विद्रोह को दबाने के लिए जो भी खर्च अंग्रेजों ने किया उसे भी छलतापूर्वक उन्होंने भारत के खाते में डाल दिया था।

'होम चार्जेज' यानि कि 'कर' के नाम पर भी ब्रिटिश सरकार ने भारत को लूटा और उसकी आर्थिक बदहाली की। सरकार ने अपने विशेषाधिकार दिए तथा भारत को गुलाम बनाकर रखा; इन दो सुविधाओं पर जो खर्च हुआ देश में उसको घरेलू खर्च का नाम दे दिया गया। हिन्दुस्तान पराधीन देश था, सत्ता ब्रिटिश की थी किंतु इनके प्रधान सूत्रधार भारत नहीं इंग्लैड में रहते थे। उनके वहाँ पदो के नाम भी थे और उन्हें तन्ख्वाह देने का जिम्मा भी भारत का था। इसके अलावा हजारों की संख्या में जो अंग्रेज यहाँ से सेवानिवृत होते थे तो उनको

इंग्लैंड वापस जाने पर भी भारत से उनकी पेंशन बनकर इंग्लैड जाती थी। भारत हर कोण से सिर्फ लुट रहा था। राजकीय कामों के लिए सामान बाहर से मंगवाने या भिजवाने के लिए जहाजों को भी रखा जाता था। जिसका बोझ भारत ही उठा रहा था।

उद्योग–धंधों के ह्रास एवं नाश से भी अंग्रेजों ने भारत की आर्थिक स्थिति को दयनीय बना दिया। भारतवासियों के कितने ही उन्नत उद्योग थे; अंग्रेजों ने अपने छल कपट से सब नष्ट करा दिया था। इनको नष्ट कराने का एक ही कारण था कि भारतवासी उनके उद्योगों पर निर्भर रहें और उनके उद्योगों द्वारा बनाए गए सामानों पर अपना जीवन यापन करने के लिए विवश हो जाएं। अंग्रेज अपनी इस योजना में धीरे–धीरे सफल भी हो गए। भारत में तैयार रेशमी और सूती माल को अपने देश में आयात होने से भी रोका ताकि उनके देश के पिछड़े हुए उत्पादक, भारतीय उत्पादकों से प्रतियोगिता में सुरक्षित रहें, इसके पश्चात् यूरोप के लोगों ने अंग्रेजी वस्तुओं को भारत में लाकर यहाँ के जुलाहों, दर्जियों, बढ़ई, लुहारों और जूता बनाने वालों का रोजगार हड़प लिया। इस प्रकार प्रत्येक देशी दस्तकार की दशा भिखारी के समान हो गई। उद्योगों का नाश होने की वजह से ही देश में गुलामी और गरीबी आई। 19वीं सदी के मध्य तक भारतीय व्यापारियों को विश्व बाजार से निकाल फेंका गया था। भारतीयों के हाथ से भारत का विदेशी व्यापार छीन लिया गया था। भारत में मशीन न होने की वजह से करोड़ों लोगों की आजीविका कारीगरी से चलती थी। किंतु ये कारीगर अब बर्बाद होने लगे थे, भूखे मरने लगे थे। ऐसा लगता था जैसे भारत के मैदानों में बुनकरों की सफेद हड्डियाँ बिखरी हुई हों।

भारतीय अर्थव्यवस्था पर अंग्रेजों द्वारा अनेक बार प्रहार हुए। अंग्रेज कर वसूली के लिए नए–नए नियम कानून बनाते थे। मुख्य रूप से आयकर, बिक्री कर और नमक कर ने भारतीय जनता को गर्त में डाल दिया था। ब्रिटिश सरकार ने इतनी अधिक लूट मचाई थी कि उन्होंने खेती और किसानी को भी नहीं छोड़ा, उस पर भी कर लगा दिया।

भारतेंदु अंग्रेजों की चतुर नीति को पहले ही समझ गए थे इसलिए लिखते हैं–

भीतर–भीतर सब रस चूसे
हंसि हंसि के तन–मन– धन चूसे।
जाहिर बातन में अति तेज,
क्यों सखी साजन नहीं अंग्रेज।।

(भारतेन्दु ग्रन्थावली, दूसरा भाग, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, प्रथम संस्करण– 2010, पृ. 811)

अंग्रेज जमींदारों की भांति सबका शोषण कर रहे थे जहाँ जैसा मौका मिलता किसानों, कारीगरों, राजाओं और व्यापारियों को लूटते रहते थे। 19वीं सदी में भारत को बर्बाद और इंग्लैड को आबाद करने की एक और नीति आई जिसके तहत भारत में बिकने वाले भारतीय कपड़ों पर 17.5 प्रतिशत कर लगाया जाता और विलायती कपड़ों पर केवल 2.5 प्रतिशत शुल्क लगता था। इसी तरह भारतीय उद्योगों को जड़ से नष्ट करने के लिए लगभग 235 प्रकार के कर लगा दिए गए थे।

पंडित माखनलाल चतुर्वेदी ने ब्रिटिश शासन की पोल अपने एक सम्पादकीय 'बजट या दीवाला' शीर्षक लेख में खोली है –

'बड़े भैया ने और भी गजब किया पूरे साढ़े 18 करोड़ का घाटा सिर पर ले लिया है और आगे की राम जाने, पर सरकार को आशा थी कि 2 करोड़ की बचत होगी, किन्तु साल बीतने पर मालूम हुआ कि 22 करोड़ का घाटा है।'

(श्रीकांत जोशी, माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली– भाग–9, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण – 1995, द्वितीय– 2003, पृ. सं–296)

अंग्रेजी सरकार की आर्थिक नीतियों का विद्रूप चेहरा भारतेंदु हरिश्चंद्र के काव्य में नजर आता है –

अंग्रेज राज सुख साज सजे सब भारी।
पै धन विदेशी चली जात है अति ख्वारी।।
ताहि पर मंहगी काल रोग स्तिारी
दिन–दिन दूने ईस देत हा हा री।।
सबके ऊपर टिक्कस की आफत आयी।
हा! हा! भारत दुर्दशा देखी न जायी।

(संम्पादक– हेमन्त शर्मा, भारतेन्दु समग्र, प्रचारक ग्रंथावली परियोजना हिंदी प्रचारक संस्थान, वाराणसी, संस्करण– 1857, पृ. सं. 460–461)

अतः 19वीं सदी तक ब्रिटिश सरकार का आर्थिक शोषण इतना बढ़ गया था कि भारतीयों के लिए वह असहनीय हो गया था। किसान, मजदूर, दस्तकार और सामान्य जनता इससे घोर प्रताड़ित थे। अब इनका आक्रोश धीरे–धीरे बढ़ता जा रहा था। जिसने अब ज्वालामुखी का रूप ले लिया था। जिसे फटना शेष बचा था और यह ज्वालामुखी 'स्वाधीनता आन्दोलन' के रूप में फटा। सब एकजुट होकर आंदोलन करने लगे। अलग–अलग स्थानों पर किसान आन्दोलन' मजदूर आन्दोलन, असहयोग आन्दोलन, की गूँज सुनाई देने लगी। जगह–जगह श्रमिक एवं मजदूर वर्ग हड़ताल करने लगे।

सुभद्रा कुमारी चौहान इसी आर्थिक परिवेश का एक हिस्सा रही हैं। वह ब्रिटिश सरकार के इन आर्थिक शोषण को देखकर दुखी और हतप्रभ थी। इस भारतीय अर्थव्यवस्था की दुर्दशा को उन्होंने देखा और समझा जिसके कारण उनके भीतर आक्रोश पैदा हुआ और वह राष्ट्र को ब्रिटिश सरकार से मुक्त करवाने के लिए आंदोलन में कूद गई।

10.5 सुभद्रा कुमारी चौहान की भाषा शैली

हिंदी साहित्य की सुप्रसिद्ध लेखिका सुभद्रा कुमारी चौहान की लेखन भाषा सीधी, सरल एवं स्पष्ट है। इस महान लेखिका की भाषा में राष्ट्रीयता, सामाजिकता, प्रेम, वात्सल्य आदि भाव झलकते हैं। इन्होंने बिल्कुल आम बोलचाल के सीधे–सादे वाक्यों का प्रयोग करके अपनी कविता को गढ़ा है –

तुम मुझे पूछते हो 'जाऊं'
मैं क्या जवाब दूँ तुम्हीं कहो!
'जा........' कहते रूकती है जबान
किस मुंह से तुमसे कहूँ 'रहो'

(सुधा चौहान, सुभद्रा कुमारी चौहान, साहित्य अकादेमी, प्रथम सं. 1681 पृ. सं. 26)

सुभद्रा जी ने खड़ी बोली को अपने काव्य का आधार बनाया। उस समय हिंदी भाषा देश की भाषा थी इसलिए स्वतंत्रता पाने का वह राष्ट्रीय आधार बनी। सुभद्रा जी ने अपनी भाषा को सम्मान देने के लिए लिखा है–

तू होगी आधार देश की / पार्लमेण्ट बन जाने में।
तू होगी सुख सार देश के / उजड़े क्षेत्र बसाने में।
तू होगी व्यवहार देश के / बिछड़े हृदय मिलने में।
तू होगी अधिकार, देशभर / को स्वातंत्र्य दिलाने में।

सुभद्रा जी की भाषा में तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशज तथा अनुकरणात्मक शब्दों का खूबसूरत प्रयोग मिलता है। इनकी रचनाओं में भाषा की सरलता व विषय के अनुरूप शब्दों का सटीक चयन मिलता है।

यदि सुभद्रा जी के काव्य में प्रयुक्त तत्सम शब्दावली की बात की जाए तो; इन्होंने अपने काव्य का कुछ विशिष्ट सांस्कृतिक औदात्य प्रदान करने के लिए तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है। ये शब्द कुछ इस प्रकार हैं – जैसे हिमालय, उदधि, प्राची, नभ, दिगन्त, अनंग, वसुधा, कोकिला, अधर, अनन्त, शिलाखंड प्रचंड, छनद, स्वछन्द, हन्त–ज्वलन्त, विलास, त्राण, अतीत आदि।

आ रही हिमाचल से पुकार
है उदधि गरजता बार–बार
प्राची पश्चिम भू–नभ अपार
सब पूछ रहे हैं दिग–दिगन्त
वीरों का कैसा हो बसन्त?

(सुभद्रा कुमारी चौहान, मुकुल, सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर, पंचम सं. 1944, पृ. 105)

इसके अतिरिक्त इनके काव्य में तद्भव शब्दावली का बहुलता से प्रयोग किया गया है। संस्कृत और प्राकृत से विकृत होकर जो शब्द हिंदी में आए हैं उन्हें तद्भव शब्द कहा जाता है। इसे इस प्रकार भी समझा जा सकता है कि जो शब्द मूलतः संस्कृत के थे, और फिर मध्यकालीन भाषाओं–पालि, प्राकृत, अपभ्रंश की प्रवृतियों के अनुसार बदलते–बदलते हिंदी तक एक नए रूप में पहुँचे; इन्हीं शब्दों को तद्भव शब्द कहा जाता है। जैसे – आग, पुकार, गरज आदि।

1) आग लंके! तुझमें क्यों लगी आज (सुभद्रा कुमारी चौहान, मुकुल, सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर, पंचम सं. 1944, पृ. 107)

2) पुकार– ''मातृ मंदिर में हुई पुकार (सुभद्रा कुमारी चौहान, मुकुल, सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर, पंचम सं. 1944, पृ. 82)

3) गरज – '' है उदधि गरजता बार–बार (सुभद्रा कुमारी चौहान, मुकुल, सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर, पंचम सं. 1944, पृ. 105)

सुभद्रा जी के काव्य में हमें देशज शब्दों का प्रयोग मिलता है। देशज शब्द देश की विभिन्न बोलियों से आए शब्द होते हैं जैसे– हरियाने, सरसों, निहारा आदि।

1) 'उसे जरा हरियाने दो (सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 106)

2) फूली सरसों ने दिया रंग (सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 106)

3) सहसा उन्हें निहार हमने/संकोच हो आया (सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 13)

अन्य देश की भाषा से आए हुए शब्दों को विदेशज शब्द कहते हैं। इन शब्दों को 'आगत शब्द' और 'गृहित शब्द' के नाम से भी जाना जाता है। विदेशज शब्दों में सुभद्रा जी ने मुख्य रूप से अंग्रेजी और अरबी–फारसी के शब्दों का प्रयोग किया है। इस प्रकार सुभद्रा जी ने अपनी व्यापक रचनाधर्मिता का परिचय दिया है। अरबी–फारसी के शब्द जैसे– कलम, गिरफ्तारी, बिजली जालिम आदि।

1) है कलम बंधी स्वछन्द नहीं (सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 160)

2) आज गिरफ्तारी होगी (सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 106)

3) बिजली भर दे वह छन्द नहीं (सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 112)

4) वह जालिम के घर से लाने गया है (सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 66)

इसके अतिरिक्त अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग कुछ इस प्रकार हुआ है जैसे–

1) लेफ्टिनेण्ट वॉकर आ पहुँचा (सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 62)

2) आजा है वारन्ट अभी (सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 97)

3) डर है कहीं न मार्शल लॉ का (सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 78)

4) पार्लमेण्ट बन जाने से (सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 87)

सुभद्रा जी ने अपनी भाषा को और अधिक खूबसूरत बनाने के लिए अंलकारों, छन्दों के साथ–साथ अभिधा, लक्षणा, व्यजंना शैली का प्रयोग किया है। आप इसके कुछ उदाहरण देख सकते हैं –

अभिधा – जो कुछ है बस यही पास है । (सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 21)

लक्षणा – शाही शान भिखारिन की है मनोकामना मतवाली (सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 51)

व्यजंना – तुम मुझे पूछते हो जाऊँ? मैं क्या जवाब दूं तुम्ही कहो? (सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 14)

अलंकारों में उपमा, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास, रूपक, उल्लेख, अन्योक्ति आदि का प्रयोग किया गया है। इसे हम उदाहरण सहित समझ सकते हैं –

नंदन वन–सी फूल उठी
यह छोटी–सी कुटिया मेरी – उपमा अलंकार
(सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 49)

मानों लुटता जाता हो – उत्प्रेक्षा अलंकार
(सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 44)

बचपन बेटी बन आया – अनुप्रास अंलकार
(सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 50)

गत जीवन की तरल मेघ–सा
स्मृति नभ में मिट जाने दूं – रूपक अलंकार
(सुभद्रा समग्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम सं. जनवरी 2000, पृ. 22)

सुभद्रा जी ने शब्दालंकार और अर्थालंकार दो का अपनी भाषा में सशक्त रूप से प्रयोग किया है। भाव की प्रांजलता तथा भाषा की सरलता ने उनके काव्य को एक अलग उँचाई प्रदान की है। जो छायावाद में अन्य जगह नहीं दिखाई देती। काव्य में लय छंद के माध्यम से ही आती है। इस दृष्टि से 'झाँसी की रान्ी उनकी बहुत ही उत्कृष्ट कविता है। कविता में एक विशिष्ट प्रकार की भाषिक व्यवस्था, बलाघात, तारत्वता संगीतात्मकता, वर्ण, ध्वनि, तुक का समन्वय दिखाई देता है।

सुभद्रा जी की यह विशेषता है कि वे हार्दिक अनुभूतियों को इस प्रकार प्रभावी रूप से प्रस्तुत करती हैं कि वे पाठक वर्ग में उत्तेजना और चेतना पैदा करती है।

10.6 सारांश

अतः सुभद्रा कुमारी चौहान संबंधी इस समग्र एवं गहन अध्ययन के बाद स्पष्ट हो जाता है कि सुभद्रा जी व उनकी लेखनी अत्यंत प्रभावशाली एवं मर्मस्पर्शी है। सुभद्रा जी अपने समकालीनों की तुलना में उनका लेखन कार्य सामाजिक वास्तविकता के नजरिए से अधिक प्रमाणिक और मानवीय संवेदना की दृष्टि से समृद्ध है क्योंकि इनके लेखन में साहित्य और राजनीति का गहरा संबंध है। सुभद्रा जी का साहित्य यह सीख देता है कि अन्य साहित्यकारों को कि उन्हें कभी किसी खास विचारधारा, गुटबंदी, दलबंदी, खेमेबाजी आदि से बचना चाहिए और राष्ट्रहित के लिए समाज में व्याप्त उत्पीड़न, शोषण, भ्रष्टाचार कुरीतियों, अंधविश्वास, आर्थिक बदहाली आदि को समाप्त करने के लिए प्रयास करना चाहिए। इनकी राष्ट्रीयता में देश प्रेम तो विद्यमान तो है ही इसके साथ ही मातृभूमि प्रेम, मातृभाषा प्रेम, मानव प्रेम, प्रकृति प्रेम, साहित्य प्रेम आदि भी समाहित है। सुभद्रा जी को

लगता है समाज में व्याप्त तमाम कमियो को दूर करने व राष्ट्र की प्रगति के लिए स्त्री जागृति अति आवश्यक है। इनका जीवन दर्शन गाँधीवाद एवं मार्क्सवाद से प्रभावित है। यह गांधी जी की प्रबल पक्षधर होने के बावजूद भी मानवहित के लिए अंहिसा की अंध समर्थक नहीं रही है। इनके गीतों में वात्सल्य अधिक उभर कर आता है। कह सकते हैं कि भक्तिकाल में वात्सल्य के क्षेत्र में जो स्थान सूर का रहा है वही स्थान आधुनिक युग में सुभद्रा जी का है। इनकी भाषा सरल, सहज व आम बोलचाल की भाषा है। इनकी रचनाएँ बंधन और जड़ता के खिलाफ मुक्ति के लिए एक मुखर आवाज है। इनका व्यक्तित्व और कृतित्व राष्ट्र और राष्ट्र के लोगों के लिए सदा समर्पित रहा है और भारतीय जन भी उन्हें उसी श्रद्धा भाव से अपने चित में संजोकर रखते हैं।

10.7 उपयोगी पुस्तकें

1. मुकुल : सुभद्रा कुमारी चौहान, 'सुषमा साहित्य मंदिर, जबलपुर, पंचम सं 1944
2. सुभद्रा कुमारी चौहान : सुधा चौहान, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, प्रथम सं. 1988, द्वितीय – 1990
3. सुभद्रा समग्र : हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण– जनवरी 2000
4. सुभद्रा कुमारी चौहान सृजन एवं चिन्तन : सुनीता मंडल, आनंद प्रकाशन कोलकात्ता। प्रथम सं. 2017

10.8 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न – 1

1. सुभद्रा कुमारी चौहान का जन्म 16 अगस्त सन् 1904 को इलाहाबाद के एक गांव निहालपुर में हुआ था। जमींदार परिवार में जन्म हुआ। यह माता–पिता की सातवीं सन्तान थी।
2. सुभद्रा कुमारी चौहान की आरंभिक शिक्षा इलाहाबाद में और विवाहोपरान्त बनारस में शिक्षा जारी रखी गई। इसके उपरान्त दो वर्ष बाद ही असहयोग आंदोलन में उतर आई और शिक्षा का परित्याग कर दिया।
3. सुभद्रा जी के ऊपर मुख्य रूप से गांधीवादी विचारधारा का प्रभाव रहा है।

बोध प्रश्न – 2

1. सुभद्रा जी के काव्य में राष्ट्रप्रेम, मातृभूमि प्रेम, मातृभाषा प्रेम, मानव प्रेम, प्रकृति प्रेम, साहित्य प्रेम, परिवार प्रेम आदि दिखाई देता है और इनकी भाषा बहुत ही सरल, आम बोलचाल की है। इसी कारण पाठक।
2. सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की ऐतिहासिक पात्र झाँसी की रानी ने अंग्रेजों को नाकों चने चबवाए थे। इन्हीं के शौर्य गाथा में सुभद्रा जी ने 'झाँसी की रानी' कविता लिखी है।
3. सुभद्रा जी अपने समय में स्त्रियों को बहुत ही दयनीय स्थिति में देखती हैं; जिन्हें पढ़ने–लिखने, अपनी बात रखने, अपनी पसंद का जीवन जीने का कोई अधिकार नहीं

था। उन्हें तमाम कुरीतियों द्वारा जकड़ा गया था तथा उन पर अत्याचार किया जाता था। सुभद्रा जी का मानना था कि बिना स्त्रियों के सहयोग के राष्ट्र को स्वाधीनता नहीं मिल सकती तथा नारी जागृति को उन्होंने अति महत्वपूर्ण माना और इसके लिए उन्होंने कार्य भी किया।

बोध प्रश्न–3

1. सुभद्रा जी सन् 1923 में 'राष्ट्रीय झण्डा' आन्दोलन के समय पहली बार जेल और पुनः सन् 1914 में व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन की वजह से उन्हें जेल जाना पड़ा।

2. राष्ट्रीय चेतना की कविता 'झाँसी की रानी' जनता को प्रेरित करती है कि वे उस राष्ट्र के लोग हैं जिनके वंशज बहुत वीर रहे हैं। जिस प्रकार एक अकेली महिला ने अंग्रेजों के दांत खट्टे कर दिए थे उसी प्रकार तुम्हारे भीतर भी ओज पैदा हो और देश को अंग्रेजों से मुक्त करवाओ।

बोध प्रश्न –4

1. भारत के स्वाधीनता प्राप्त करने तक की घटनाओं में सन् 1857 का पहला स्वतंत्रता संग्राम, अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना, बंग–भंग आंदोलन, प्रथम विश्वयुद्ध से उत्पन्न असंतोष, जलियाँवाला बाग हत्याकाण्ड, खिलाफत आंदोलन, असहयोग आंदोलन, साइमन कमीशन, नेहरू रिपोर्ट, सविनय अवज्ञा आंदोलन, नमक सत्याग्रह, गोलमेज सम्मेलन, व्यक्तिगत सत्याग्रह आदि मुख्य रहीं हैं। इसके पश्चात् 15 अगस्त 1947 में स्वंतत्रता प्राप्त हुई।

2. इस समय समाज में जमींदारी प्रथा, दासत्व प्रथा, बेरोजगारी, भूखमरी, महँगाई, मादक–द्रव्य सेवन, धर्माडम्बर, अन्धविश्वास, जातिवाद, स्त्री संबंधित विविध कुप्रथाएँ जैसे बहुपत्नी प्रथा, लड़कियों की सौदे–बाजी, दहेज प्रथा, शिक्षा व मूल अधिकारों से दूर रखना आदि कुरीतियां विद्यमान थीं।

3. सोने की चिड़ियाँ कहे जाने वाले देश को अंग्रेजों ने दोनों हाथों से लूटा भारतवासियों पर तमाम तरह के कर लगाए गए, अंग्रेज कोई भी युद्ध लड़ते थे उसका खर्च भारत से निकाला जाता था। भारत के उन्नत उद्योगों को नष्ट कर दिया जिसके कारण यहाँ के लोग बेरोजगार हो गए और अग्रेजों पर आश्रित होना उनकी मजबूरी हो गई। अंग्रेजों के आर्थिक शोषण के कारण देश के किसान, मजदूर, दस्तकार और सामान्य जनता की स्थिति बहुत दयनीय हो गई।

4. सुभद्रा जी की भाषा शैली सरल, सहज, आम बोलचाल की है। इन्होंने तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशज और अनुकरणात्मक शब्दों का प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त उपमा, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास, रूपक, उल्लेख, अन्योक्ति आदि अंलकारों का प्रयोग किया गया है। छंदों का प्रयोग भी सुभद्रा जी ने भाषा को खूबसूरत बनाने के लिए किया है।

अभ्यास –1

1. i) 1904

   ii) झाँसी की रानी

iii) राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्यधारा

iv) 1919

v) 1931

2. i) ग

ii) ग

iii) अ

iv) ग

v) अ

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 11 बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' और उनकी कविता

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 पृष्ठभूमि

11.3 बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

- 11.3.1 जीवन परिचय
- 11.3.2 साहित्यिक रचनाएँ

11.4 'नवीन' साहित्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

- 11.4.1 राष्ट्रीय चेतना
- 11.4.2 नवजागरण

11.5 सारांश

11.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

11.7 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

11.0 उद्देश्य

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' से संबंधित इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के समय की विभिन्न परिस्थितियों के बारे में बता सकेंगी/सकेंगे;
- नवीन के जीवन एवं व्यक्तित्त्व का परिचय दे सकेंगी/सकेंगे;
- उनके साहित्य में व्यक्त राष्ट्रीय चेतना को स्पष्ट कर सकेंगी/सकेंगे; तथा
- नवीन जी के काव्य की विशेषताओं का विश्लेषण प्रस्तुत कर सकेंगी/सकेंगे।

11.1 प्रस्तावना

छायावाद के कवियों ने प्राकृतिक एवं ऐतिहासिक विषयों को लिया लेकिन उनकी रचनाओं का मुख्य स्वर पुर्नजागरण से ही जुड़ा रहा। प्रसाद, पंत, निराला एवं महादेवी वर्मा ने अपनी रचनाओं से जहाँ हिंदी साहित्य को समृद्ध किया वहीं विभिन्न विषयों के माध्यम से सामाजिक चेतना को भी स्वर दिया। इसी युग के एक और रचनाकार हैं जिन्होंने अपनी रचनाओं से तत्कालीन राजनीतिक चेतना को और आगे बढ़ाया। बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' इस युग के ऐसे रचनाकार हैं जिन्होंने केवल साहित्यिक रचनाओं द्वारा ही नहीं बल्कि राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय योगदान द्वारा चेतना जगाने का कार्य किया। इस इकाई में हम उनके साहित्यिक कार्य की जानकारी तो प्राप्त करेंगे ही साथ ही उनके सक्रिय राजनीतिक जीवन से भी परिचय प्राप्त करेंगे।

नवीन जी की पारिवारिक स्थिति अच्छी नहीं थी। बचपन कष्टों में गुजरा। संघर्षों में पल कर बड़े हुए कवि के जीवन में कई पड़ाव आए। साहित्यिक गतिविधियों से जुड़ाव होने पर उनमें काफी परिवर्तन आया। बड़े–बड़े लेखकों का उन पर प्रभाव पड़ा। राष्ट्र में उस समय स्वतंत्रता आंदोलन का दौर था। कवि का विकल मन कब पीछे रहने वाला था। वे भी उस आंदोलन में कूद पड़े थे। इस इकाई में हम विस्तार से इन सब बातों पर विचार करेंगे। नवीन जी द्वारा काव्य रचना में समय–समय पर परिवर्तन आता गया। भक्ति से लेकर राष्ट्रीय भावना से युक्त रचनाओं के द्वारा कवि ने समाज एवं देश को जगाने का ही कार्य किया है। इस इकाई में हम उनकी रचनाओं को भी प्रस्तुत करेंगे। तो आइए सर्व प्रथम हम तत्कालीन पृष्ठभूमि की जानकारी प्राप्त करें।

11.2 पृष्ठभूमि

अंग्रेजों के आगमन से देश की राजनीतिक एवं आर्थिक परिस्थिति में परिवर्तन आया। एक ओर भारतीय जनता विदेशी शक्ति की गुलाम बन गई वहीं ईस्ट इण्डिया कंपनी की नीतियों से आर्थिक असमानता भी बढ़ने लगी। अंग्रेज सरकार हर प्रकार से भारतीयों का शोषण कर रही थी। तत्कालीन प्रबुद्ध भारतीयों के प्रयास से एक नयी प्रकार की हलचल शुरू हुई। यह हलचल जीवन के विभिन्न पक्षों से जुड़ी हुई थी। सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना का उदय होने लगा। कांग्रेस के रूप में एक सशक्त राजनीतिक मंच से भारतीयों ने विदेशी शासन के खिलाफ आवाज बुलंद की। धीरे–धीरे यह राजनीतिक मंच संपूर्ण भारतीयों के लिए एक बहुत बड़ा अस्त्र बन गया। कई महान् नेताओं ने इस संगठन के द्वारा विभिन्न आंदोलन चलाए। इस प्रकार भारतीयों में राजनीतिक चेतना जागृत हो चुकी थी, दूसरी ओर राजाराममोहन राय तथा ईश्वर चंद्र विद्या सागर के कार्यों से समाज सुधार का दौर भी प्रारंभ हो गया था। ऐसे ही राजनीतिक एवं सामाजिक उथल–पुथल के माहौल में बालकृष्ण शर्मा का आविर्भाव होता है।

11.3 बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

11.3.1 जीवन परिचय

बालकृष्ण शर्मा का जन्म 8 दिसम्बर 1897 ई. को तत्कालीन ग्वालियर राज्य के भ्याना नामक गाँव में हुआ था। इनके पूर्वज ग्वालियर के गोदा गाँव में रहते थे। परिवार वल्लभाचार्य के वैष्ण संप्रदाय में विश्वास रखता था। इनके पिता तेज मिजाज किंतु सरल हृदय के व्यक्ति थे। पिता के अंदर जो त्याग तथा प्रखर स्वाभिमान था वह बेटे में भी आ गया था। इनका बचपन गरीबी में बीता था। माता चक्की पीस कर तथा दूसरों के यहाँ कार्य करके घर चलाती थी।

बालकृष्ण जब आठ बरस के हुए तब उन्हें पढ़ने के लिए नाथद्वारा भेज दिया गया। वहाँ वे पढ़ाई के स्थान पर षरारत ही किया करते थे अतः वापिस बुलाकर षाजापुर के मिडिल स्कूल में दाखिल करा दिया गया। बालक नवीन में बचपन से नाटक आदि में हिस्सा लेने की लालसा थी। 1913 में जब वे मिडिल स्कूल में थे तभी 'मुद्राराक्षस' नाटक में वे चन्द्रगुप्त बने, इस प्रकार हमेशा मंच पर कार्य करते रहे। यही कारण था कि उनमें अभिनय तथा व्याख्यान देने के गुण का विकास हुआ। बाद के दिनों में राष्ट्रीय आंदोलन को सक्रिय सहयोग देते हुए वे अपने भाषणों से जनता में जागृति लाने का प्रयास करते रहे।

मिडिल स्कूल में पढ़ते समय उनकी मित्रता एक मराठी भाषी छात्र से हुई। उसका नाम सेतु था। इसके चरित्र से प्रभावित होकर 'नवीन' जी ने एक कहानी की रचना कर डाली। यह उनकी पहली कहानी थी। यह तत्कालीन 'सरस्वती' पत्रिका में छपी थी। अपने माता–पिता से उन्होंने भक्ति के गीत सीखे तथा ब्रजभाषा की कविताएँ भी याद की। धीरे–धीरे हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी भाषा के साहित्य से उनका लगाव बढ़ता गया। सीखने की ललक बचपन से ही थी। केवल एक क्षेत्र में नहीं बल्कि कई क्षेत्रों में। जैसे तैराकी, पहलवानी आदि में भी उन्होंने महारत हासिल की। 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से उनमें साहित्यिक रुचि का विकास हुआ।

सन् 1916 ई. में लखनऊ के कांग्रेस अधिवेशन का उनके जीवन में विशेष स्थान रहा। इस अधिवेशन में वे कवि माखनलाल चतुर्वेदी के साथ गए थे। वहाँ उनकी मुलाकात गणेश शंकर विद्यार्थी तथा मैथिलीशरण गुप्त से भी हुई। अपने इस सौभाग्य का वर्णन उन्होंने 'चिंतन' स्मृति अंक में बड़े ही रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। इसी अधिवेशन में उन्होंने देश के महान् नेताओं का भाषण भी सुना। इनमें थे महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, मोतीलाल नेहरू, सरोजनी नायडू, ऐनी बेसेंट तथा जवाहरलाल नेहरू। गणेश शंकर विद्यार्थी ने नवीन जी को कानपुर के क्राईस्ट चर्च कॉलेज में भर्ती करा दिया। नवीन जी ने यहाँ से सन् 1917 में इंटरमीडियट की परीक्षा पास की थी।

देश में राजनीतिक आंदोलन का दौर चल रहा था ऐसे में भला बालकृष्ण कैसे चुप बैठ सकते थे। जब गांधी जी ने असहयोग 'आन्दोलन' की शुरूआत की तब नवीन जी भी उसमें कूद पड़े। देश के लिए उनका जीवन समर्पित रहा। उन दिनों वे कानपुर के एकमात्र छात्र नेता थे। उत्तर प्रदेश के राजनीतिक नेताओं में उनका नाम हमेशा स्मरणीय रहेगा। सन् 1952 से मृत्यु पर्यन्त अर्थात 29 अप्रैल 1960 ई. तक वे संसद सदस्य भी रहे।

11.3.2 साहित्यिक रचनाएँ

नवीन जी बचपन से ही साहित्य में रुचि रखते थे। लेखन का कार्य उन्होंने इन्दौर से शुरू किया किंतु 1917 में गणेश शंकर विद्यार्थी से मिलने के बाद उन्होंने व्यवस्थित ढंग से लेखन कार्य शुरू किया। वे तत्कालीन एक महत्वपूर्ण पत्र 'प्रताप' से जुड़ गए थे। वे इस पत्र के संपादक भी रहे। राष्ट्रीय काव्य धारा को प्रचारित करने वाली पत्रिका 'प्रभाग' का भी लगभग वर्षों तक संपादन भी किया। नवीन जी की प्रकाशित काव्य रचनाएँ इस प्रकार से हैं।

1) कुंकुम
2) रश्मिरेखा
3) अपलक
4) कवासि
5) विनोबास्तवन
6) उर्मिला
7) प्राणर्पण
8) हम विषपायी जनम के
9) अर्चणा के फूल
10) आधुनिक हिन्दी काव्य

11) आधुनिक काव्य संग्रह

12) आकाशवाणी काव्य–संगम (भाग–1)

13) आकाशवाणी काव्य–संगम (भाग–2)

14) कवि भारती

15) कविताएँ

16) कवियों की झाँकी

17) काव्य सरोवर

18) काव्य धारामा

19) गांधी अभिवादन

20) निकुंज

21) परिचय

22) पुष्कतरिणी

23) भारतीय कविता पार

24) मुंशी अभिनंदन ग्रंथ

25) राष्ट्रीय कविताएँ

26) राजधानी के कवि

27) रूपांबंश

28) साहित्य चयन

29) सौहार्द–सुमन

30) संकेत

31) हिन्दी के वर्तमान कवि और उनका काव्य

32) हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ प्रेमगीत

गद्य – हमारी संसद

बोध प्रश्न –1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें –

1. बालकृष्ण शर्मा का जन्म कहाँ और किस वर्ष हुआ था?

....

....

....

2. नवीन जी में व्याख्यान देने के गुण का विकास किस कारण हुआ?

....

....

....

3. नवीन जी ने कहानी लेखन का प्रारंभ किससे प्रभावित होकर किया?

....

....

....

4. सन् 1916 को नवीन जी के जीवन में कौन सी महत्वपूर्ण घटना घटी ?

11.4 'नवीन' साहित्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

नवीन जी की जीवनी को पढ़ते हुए आपने पाया कि उनका परिवार गरीब जरूर था लेकिन घर के लोगों को अध्ययन में रुचि थी। नवीन जी को बचपन से ही भक्ति संगीत सुनने को मिला था। उनकी कविताओं में गीतों की प्रधानता है। इसका मुख्य कारण था मालवा व ब्रजभाषा के लोकगीत। भक्त कवियों की भांति उनकी कविताओं में अनुप्रास और तुकबंदी मिलती है। नवीन जी अध्ययनशील व्यक्ति थे। स्वतंत्रता संग्राम में जेल में रहने की अवधि में उनका अधिकांश समय अध्ययन में बीतता था। भक्त कवियों से लेकर आधुनिक गद्य की रचनाओं का, इन्होंने गहराई से अध्ययन किया था। कबीर ग्रंथावली, गालिब, पदमाकर, जैसे रचनाकारों का अध्ययन मनन किया था।

पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से गोखले, तिलक, गांधी, विनोबा, लाला लाजपतराय के लेखों को वे नियमित रूप से पढ़ते। बांगला में रवींद्रनाथ के साहित्य का अध्ययन किया था तो अंग्रेजी के शैली क्रीट्स, बर्डवस्थ, आस्क से लेकर बर्नार्डशा की रचनाओं का भी अध्ययन किया। मराठी भाषा के खाडेंकर और साने गुरू जी के उपन्यास तथा बांगला के बंकिम चंद्र के उपन्यासों का अध्ययन किया।

इस प्रकार अध्ययन के द्वारा उन्होंने ज्ञान ही नहीं अर्जन किया बल्कि अपनी काव्य प्रतिभा में उसका इस्तेमाल किया। अब हम उनकी आरंभिक काव्य रचनाओं के बारे में पढ़ेंगे। जैसा कि आपने पढ़ा कि उन्होंने भक्त कवियों की रचनाओं का गहराई से अध्ययन किया था। अतः उनकी प्रारंभिक रचनाओं पर भक्त कवियों का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। कबीर के फक्कड़पन का प्रभाव नवीन के निम्न पद में स्पष्ट दिखता है–

डोला लिए चलो तुम झटपट, छोड़ें अटपट चालें
सजन भवन पहुँचा दो हमको, मन का हाल–बिहाल रे

विद्यापति की तरह नवीन जी लिखते हैं
आज सुना है, सखी, हमारे साजन लेंगे जोग री।
हमें दान में दे जायेंगे वे विकराल वियोग री।

गुरूनानक के पद की छाप नवीन जी की निम्न कविता में देखिए–

अगणिता तव दीपमाला में
क्या जगाई है तुम्हीं ने
सजन झिलमिल दीपमाला
इस महत् ब्रह्मांड भर में
खूब फैला है उजाला।

'नवीन' दोहावली में हम देख सकते हैं कि उनके दोहों पर रीतिकालीन कवियों का भी प्रभाव है। एक दोहा देखिए–

अमिय, हलाहल मद भरे श्वेत श्याम रतनार
जियत मरत झुकि–झुकि परत जेहिं चितवन इक बार।

मानवीय पीड़ा को नवीन जी ने जाना था समझा था। इसलिए उनकी कविता में एक संदेश रहता है जो भूले भटके को राह दिखाना चाहता है –

मानव के हिय में रहेगा द्वेष जब तक
जब तक रक्त के पिपासा रही आएगी,
जब तक अन्तर में दुबका रहेगा पशु
जब तक शोषित की धार बही जायगी,
जब तक मानव न होगा निज शुद्ध रूप,
जब तक भावना निर्वेद नहीं पायेगी।
तब तक गणेश शंकर की अतीत गाथा।
जनगण हिताय सत्ता कही जाएगी।

आत्मापर्ण के चतुर्थ आहुति से उदृत इस कवितांश में आपने देखा कि कवि एक ऐसे समाज की कल्पना करता है जिसमें आपसी भाई चारा हो।

11.4.1 राष्ट्रीय चेतना

पृष्ठभूमि का अध्ययन करते समय आपने यह तो जान ही लिया है कि 'नवीन' जी का राष्ट्रीय आंदोलन से किस प्रकार जुड़ाव हुआ। तत्कालीन समय देश में उथल–पुथल का था। यह उथल–पुथल जहाँ विदेशी सत्ता को उखाड़ फेंकने के लिए था वहीं सामाजिक परिवर्तन के लिए भी था। नवीन जी उत्तर प्रदेश के राजनीतिक जीवन से जुड़े हुए थे। उस समय के प्रमुख नेताओं में उनकी गिनती होती थी। जहाँ अन्य लोग केवल राजनीतिक नेता थे वहाँ नवीन जी एक सहृदय रचनाकार भी थे। उनकी लेखनी राष्ट्रीय आंदोलन के लिए चल रही थी। भारतीय जनगणना में देश भक्ति के लिए उन्होंने 'विप्लव गायन' किया। 'प्रलयकर' काव्य संग्रह तो इसी जोश को बढ़ाने के लिए समर्पित है। सन् 1920 में असहयोग आंदोलन चल रहा था कि अचानक चोरी–चौरा काण्ड हो गया। गांधी जी इस काण्ड से दुखी हो गए और उन्होंने आंदोलन को स्थगित कर दिया। इस घटना का नवीन जी पर गहरा असर हुआ। उन्होंने 'पराजय–गीत' की रचना कर डाली। दो पंक्तियां देखिए –

आज खड्ग की धार कुंठित है खाली तुणीर हुआ।
विजय पताका झुकी हुई है, हृदय भ्रष्ट यह तीर हुआ।

किंतु कवि अपनी इस निराशा से निकल आता है। वह पुनः नवजागरण का गान गाने लगता है।

कवि कुछ ऐसी तान सुना दे जिससे उथल–पुथल मच जाए।
एक हिलोर इधर से आए एक हिलोर उधर से आए
प्राणों के लाले पड़ जाएँ, त्राहि–त्राहि स्तर नभ में छाए
नाश और सत्यानाशों का धुआँधर जग में छा जाए।

कवि के अंदर कई प्रकार की भावनाएँ उठ रही हैं किंतु वह राष्ट्रीय मुक्ति की कल्पना से जुड़ी हुई हैं।

मत कहो कि है निपट पराजयवादी मय विश्वास
मत कहो नैराश्यवादमय है मेरे विश्वास
तुम आलोचक गण, कला जानो विजय पराजयवाद
मैं यथार्थवादी कर्मठ हूँ फिर भो आज उदास

विदेशी शासन से कवि इतना खफ़ा है कि वह इसे समाप्त करने के लिए कठोर से कठोर कदम उठाने के लिए लोगों का आह्वान करता है। भारतीयों को उसके अंदर की शक्ति को ललकारते हुए कवि कहता है –

अन्दर आज छिपी है इसे भड़क उठने दो एक बार अब
दहल जाए दिल, पैर खड़खड़ाये, कांप जाए कलेजा उनका,
नाश स्वयं कह उठे कड़ककर उस गंभीर कर्कश के स्वर से
बरसों के साथिन हूँ तोड़ोगे क्या तुम अपने इस कर से?
ज्वालामुखी षान्त हैं इसे कड़क उठने दो एक बार अब
सिर चक्कर खाने लग जाए टूटे बंधन शासन गुण का
रूद्र गीत की कूद तान निकली है तेरे अन्तर तर से

वास्तव में नवीन जी सच्चे देश भक्त थे। अध्ययनशील होने के कारण उन्हें अधिक ज्ञान प्राप्त होता गया। परिवार, समाज, राष्ट्र से ऊपर उठकर विश्व बन्धुत्व की भावना का निरंतर विकास होता गया। वे राष्ट्र को एकता के सूत्र में पिरोना चाहते थे। उनका सपना था –

एक धाम तुम, एक नाम तुम
एक बान तुम, एक प्राण हो तुम
एक राजमय, इक यदि–गतिमय
सर्व–उदय के गेय गान हे तुम
खेदोदक का अर्घ्य चढ़ाकर
करो प्रात का संध्या–वदन
भरत–खंड के तुम हे जन–गण!

नवीन जी की राष्ट्रीयता केवल यहीं तक नहीं थी कि अंग्रेज देश छोड़कर जाएँ और सुविधा संपन्न भारतीय राज सत्ता हथिया ले। उनकी राष्ट्रीयता जन–जन के उत्थान के लिए थी। वे वास्तव में उन सभी के विरोधी थे जो गरीब–मजदूर एवं जन सामान्य का शोषण करते हैं।

सन् 1945 में वे बरेली के कारागार में थे। यहीं उन्होंने 'ओ मजदूर किसान, उठो' नामक कविता लिखी। आइए इस कविता की कुछ पंक्तियों को देखें –

> उठो–उठो ओ नंगों भूखों
> ओ मजदूर किसान उठो,
> हम गतिमय मानव समूह के
> ओ प्रचण्ड अभिमान उठो।
> आज मुक्ति के अरमानों ने
> मिलकर यों ललकारा है ओ सब सोने वाले जागो,
> गूंज रहा नक्कारा है।
> कैसी रात ? कहाँ के सपने
> यह न प्रात पधारा है। ऐसे हँसते से प्रभात का
> तुम करने सम्मान उठो,
> उठो, उठो ओ नगो भूखों,
> ओ मजदूर किसान उठो, किसका साहस है कि रख सके
> तुमको यों चिर बंधन में स्वयं मुक्ति ही नाच रही है
> सदा तुम्हारे स्पंदन में तुममें विप्लव अंतहित है
> जैसे ज्वाला चंदन में तर रहा है तुम्हें विश्व यह
> ओ जग के बलवान, उठो उठो उठो ओ नंगों भूखों,
> अरे मजदूर किसान, उठो।

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' अनोखे व्यक्तित्त्व वाले तथा कर्मठ पुरुष थे। अपनी लेखनी से उन्होंने जहाँ विदेशी शासन के खिलाफ आवाज उठाने का साहस दिलाया वहीं संघर्ष के लिए शक्ति भी प्रदान की। तत्कालीन साप्ताहिक 'प्रताप' में 17 जनवरी 1921 को 'रायबरेली का हत्याकाण्ड' नामक लंबा लेख लिखा। इस लेख के माध्यम से उन्होंने अंग्रेजों द्वारा ढाए जा रहे जुल्मों का पर्दाफाश किया। अंग्रेज अपनी सत्ता को बनाए रखने के लिए किस प्रकार लोगों को गोली से भून डालते थे उसका वर्णन इस लेख में है। लेख का कुछ अंश प्रस्तुत है।

'मनुष्यता की कौन–सी भावना निर्दोशों और निहत्थों पर गोलियाँ चलाने की आज्ञा देती है? मनुष्यता की रक्षा करने में यदि इन हत्यारों को कोर्ट मार्शल की सजा भी भोगनी पड़ती तो उस समय छातियों पर लगने वाली गोलियाँ उनके माथे पर इस समय लगी हुई पशुता और हत्या के कलंक की कलिमा की अपेक्षा कहीं अधिक शोभाशालिनि होती। अपने देश के आदमियों की इस नपुंसकता से हमें उतना ही भयंकर संग्राम करना है, जितना कि सत्ताधिकारियों की सत्ता की रक्षा करने और जनता को भयभीत रखने वाली शक्तियों से। प्रत्येक देश भक्त का काम है कि वह जिस समय सत्ताधिकारियों की अट्टालिकाओं को हिलाने की कोशिश करे और जनता में निर्भयता और साहस, अधिकारों और कर्तव्यों की भावनाओं को जगाने, उसी समय अपने ही ऊपर प्रहार करने वाले कुल्हाड़ी के बेट बने हुए, इस प्रकार के अपने ही भाईयों की भ्रष्ट कर्तबुद्धि को भी जगावे। रायबरेली का हत्याकाण्ड, सदृश घटनाएँ क्रूरता और स्वार्थ का एक अत्यंत भयंकर दृश्य आंखों के सामने उपस्थित करती है। परन्तु इन हत्याकाण्डों में गिरने वाले निर्दोशों के रक्त पर आशा का एक संदेश

भी अंकित है और वह यह है कि उन निर्दोशों की रक्तांजलि अन्यायी और अत्याचारी की अंतिम कला की अंतिम झलक मात्र होती है। राष्ट्रीय आंदोलन का दौर चल रहा था। सन् 1919 तक आते–आते यह आंदोलन भंयकर रूप धारण कर चुका था। गांधी जी ने 'स्वराज्य या मृत्यु' का नारा दिया। इसी नाम से नवीन जी ने एक लेख लिखा उसका कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत है। किस प्रकार सत्ताधारी अंग्रेजो का ह्रदय कांपने लगा था तथा वे अपने डर को छुपाने के लिए अत्याचार का सहारा लेना चाहते थे। इसका यर्थाथ रूप इस लेख में देखने को मिलता है।

स्वराज्य या मृत्यु

हमारे राष्ट्रीय महाभारत के युद्ध–पर्व का प्रधान भाग शुरू हो गया। लगभग एक वर्ष से हमने भारतीय नौकरशाही से अहिंसात्मक धर्मयुद्ध की घोषणा कर दी थी। परन्तु अब तक हमारे रण–निमंत्रण को स्वीकार करने में नौकरशाही हिचकिचाती रही। अभी तक वह इधर–उधर बगलें झाँकती रही। कुछ दिन तो उसने हमारे रण–निमंत्रण का मजाक उड़ाया, परन्तु हमारी सत्यता से दंग होकर उसका पापी ह्रदय अब डर से काँपने लगा और उसने हमें अपने निश्चय से विचलित करने के लिए दमनास्त्र का प्रहार किया। हमारे ऊपर जाब्ता फौजदारी कानून और भारतीय दंड विधान के तरकशों से चुने हुए तीरों की वर्षा की गयी। कुछ समय के लिए दफा 144 व 108 का तूफान–सा आ गया और 124–ए तथा 153–ए का आश्रय लेकर राष्ट्रीय कार्यकर्ता जेल में ठूंसे जाने लगे। चौदह वर्ष की लड़कियों पर भी 144 धारा का प्रयोग किया गया और क्षय रोग से पीड़ित मरणासन्न बुड्ढे भी 108 के शिकार बने। सत्य बात कहना राजविद्रोह करार दिया गया। परन्तु जब ये पुराने और कन्द तीर साहस और दृढ़ता, त्याग और निर्भयता के कवचों से सुरक्षित अटल राष्ट्रीय सेना पर कुछ भी असर न कर सके तब अंत में हार मानकर नौकरशाही ने हमारा रण–निमंत्रण स्वीकार कर लिया।

नवीन जी भारतीयों की नब्ज को पहचानते थे। वे जानते थे कि यहाँ के लोग संघर्ष तो करना जानते हैं लेकिन शीघ्र ही कुछ पा लेने की लालसा उनमें हमेशा रहती है। और इसी कारण वे इस ताक में भी रहते थे कि कब अंग्रेजी सरकार से समझौता हो और उन्हें कुछ मिल जाए। इस मनोवृत्ति को दूर करने के उद्‌देश्य से नवीन जी ने 'आखिर यह पंतगबाजी क्यों'? नाम से एक लेख लिखा। यह लेख दैनिक प्रताप में 19 मई सन् 1945 को छपा था। यहाँ कुछ आरंभिक अंश प्रस्तुत है।

आखिर यह पतंगबाजी क्यों ?

हम लोगों की एक विचित्र मनोवृत्ति बन गयी है। 'हम लोगों' का अर्थ है, वे हम भारतवासी, जो अपने को राजनैतिक चेतना से युक्त मानते हैं। विचित्र मनोवृत्ति हमारी यह है कि हम हर समय यह सोचते हैं कि वृक्ष से अब जामुन टपकने वाला है। अब वह हमारे मुँह में आने वाला है। जब कभी भी हम अपनी स्वाधीनता के लिए युद्ध प्रारंभ करते हैं तो उसके आरंभ होते न होते हम सोचने लगते हैं कि बस अब समझौता हुआ, तब समझौता हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए युद्ध करने वालों की जब ऐसी मनोवृत्ति हो जाए तो हम उसे विचित्र क्यों न कहें? और विचित्र ही क्यों, यह मनोवृत्ति तो एक दूशित, अवास्तविक, रोमांचवादी एवं कायरतापूर्ण मनोवृत्ति है। बात यह है कि एक बार जो हमने गांधी–इरविन समझौते की बहार देखी तो हमको हर बार समझौता ही समझौता दिखायी देने लगा। और वास्तविक बात तो यह है कि हममें स्वतंत्रता प्राप्ति की वह लगन, वह तपन, वह आग नहीं है जो हमें दृढ़तापूर्वक आजीवन जूझते रहने के लिए उत्क्रमणित करती रहे। हाँ, देश में कुछ लोग, यही

लाख दो लाख आदमी, ऐसे हैं जो बिचारे कांग्रेस के झण्डे के नीचे कुछ न कुछ प्रयत्न किया करते हैं। परन्तु उनमें भी यह मनोभावना पैठ गयी है, बस समझौता होगा। संतोष और दृढ़ता के साथ वास्तविक परिस्थिति को देखने और समझने की शक्ति जैसे हम खो बैठे हैं।

नवीन जी भारतीय जनता को समझाना चाहते थे कि संघर्ष से कभी घबराना नहीं चाहिए और न ही शीघ्र किसी फल की आशा रखनी चाहिए। अगर निश्चित उददे्श्य के लिए संग्राम है तो उसे आगे बढ़ाते जाओ। क्योंकि अंत में विजय तुम्हारी ही होगी।

एक ओर राष्ट्रीय आंदोलन का अंतिम दौर चल रहा था तो दूसरी ओर एक भयंकर तूफान धर्म के नाम पर देश के बँटवारे का आने वाला था। अंग्रेजों ने अखिरकर यहाँ के निवासियों को दो टुकड़ो में बाँट ही दिया। धर्म के नाम पर देश के बँटवारे से तमाम बुद्धिजीवी हतप्रभ थे। अपने–अपने ह्रदय की पीड़ा को विभिन्न–विभिन्न माध्यमों से व्यक्त किया। बालकृष्ण जी तो इस बँटवारे से केवल दुःखी ही नहीं थे बल्कि उनकी आँखों में इस बँटवारे का भविष्य भी दिखाई दे रहा था। वर्ष बाद जब बंगलादेश बना तो आज ऐसा लगता है कि नवीन जी वास्तव में युग दृष्ट्रा थे। इस भविष्यदृष्टा ने 28 जून सन् 1947 को दैनिक 'प्रताप' में एक लेख लिखा जिसका शीर्षक था– के बोले माँ! तुमि अबले?

इस लेख का यह अंश यहाँ प्रस्तुत है जिसमें आप स्वयं उनकी दूर दृष्टि का अंदाज लगा सकते हैं।

के बोले माँ ! तुमि अबले?

बंग–भंग हो गया। अब की बार बंग–भंग कर्जन ने नहीं किया। उसके अपराधी इस बार हम हैं। निस्संदेह, इस बंग–विभाजन के मूल में साम्राज्य–शाही की वह भेदकरी कर्जनीय नीति ही है जिसने हमें आज ये दिन दिखलाये। पर विभाजन का यह अपराध हमारे माथे है। ऐतिहासिक कारणों का कहाँ तक विवेचन किया जाय? जिनके सिर पर इस देश में मुसलमानों का इतना बलशाली बहुमत उत्पन्न करने का भार है, जिनकी सामाजिक रूढ़ियाँ और परंपराएँ इस गुत्थी को सुलझाने की उत्तरदायिनी हैं, वे इतिहास के पन्ने उल्टें भी तो उन्हें क्या संतोष प्राप्त हो सकता है? आज तो यथार्थता यह है कि बंकिम, रवि ठाकुर, खुदीरा, कन्हाईलाल, चित्तरंजन, सुभाष और नजरुल इस्लाम की बंग माता विक्षतअंगा हो गयी। वह कटी पड़ी। बाहु से तुमि, माँ, शक्ति ह्रदये तुमि, माँ भक्ति, तोमार प्रतिमा गड़ि मंदिरे–मदिरे!! आज ह्रदय हा–हाकार करके पूछ उठता है : बंकिम का वह स्वप्न क्या हुआ? के बोले माँ, तुमि अबले? गर्व एवं विश्वास का द्योतक यह प्रश्न–वाचक सिद्धांत वाक्य, आज जैसे इतिहास के पृष्ठों के भीतर से चीत्कार करता हुआ, हमारी विवशता पर आँसू बहाने को हमसे कह रहा है। बंगाल ही क्यों, आज समूचा भारतवर्ष छिन्न–विच्छिन्न हो रहा है, हो गया है। रवींद्र ठाकुर की वह सील–सिन्धु जल घोल चरण तल, अनिल विकपित श्यामल अंचल, अम्बर चुंबित भाल हिमाचल, शुभ तुषार किरीटिनी भुवन।

वास्तव में नवीन जी सच्चे मायने में राष्ट्रभक्त थे। उनकी राष्ट्रीयता केवल अंग्रेजों से मुक्ति की नहीं थी। बल्कि ऐसे राष्ट्र की स्थापना की थी जिसमें जनता में किसी प्रकार का भेदभाव न हो। देश का प्रत्येक निवासी आपसी भाइचारे से रहे। किंतु ऐसा नहीं होने वाला था। 15 अगस्त 1947 को भारत स्वतंत्र राष्ट्र बनने वाला था किंतु साथ ही धर्म के नाम पर देश का विभाजन भी हो चुका था ऐसी स्थिति में क्या राष्ट्र के निवासी शांतिपूर्वक प्रगति कर सकते थे। इसी आशंका को व्यक्त करते हुए नवीन जी ने यह लेख लिखा

तसमो मा ज्योतिर्गमय!

एक स्थान पर बैठे हुए हम कुछ मित्रों से वार्तालाप कर रहे थे। एक मित्र कह उठे, शर्मा जी, 15 अगस्त 1947 का दिन आप अपने प्रांत में कैसे मनायेंगे? क्या कुछ दीवाली होगी? मध्य प्रांत तो उस दिन दीपमालाओं से अपने नगरों और ग्रामों को सजाने का निश्चय कर चुका है। आप भी कुछ क्यों नहीं करते? हमें भी अपनी प्रसन्नता का प्रदर्शन तो करना ही चाहिए। इन मित्र की बात सुनकर कुछ क्षण तो हम चुप हो गये और फिर उदासीन भाव से बोले कि ऐसी कौन–सी बड़ी बात हो गयी है जो उस दिन प्रसन्नता मनायें? हमें तो ऐसा लगता है कि उस दिन हमको कोई प्रदर्शन नहीं करना चाहिए। शांत भाव से हमें अपनी स्वतंत्रता के आविर्भाव का स्वागत करना चाहिए। न जाने क्यों आज हृदय मर चुका है और शोणित रास की गति धीमी पड़ गयी है। इसका कारण है हमारी वह परिस्थिति, जिसमें से होकर हम अपना मार्ग क्रमण कर. रहे हैं। देश विभाजित हो गया है और इस विभाजन में भयंकर कटुता एवं पारस्परिक शत्रुता समाविष्ट हो गयी है। भविष्य अंधकारमय दिखायी पड़ रहा है। हिन्दू महासभा के अध्यक्ष श्रीयुत् भोपटकर महाशय के सदृश्य अनुत्तरदायी महानुभावों की विचार अभिव्यक्ति एक ओर है तो दूसरी ओर लीगी नेताओं की नितांत जड़तापूर्ण धर्माधंता की अनर्गल वार्ता है। आज हिन्दू समाज की राष्ट्रवादिता एवं समदर्शिता का संतुलन डावाँडोल हो गया है। आज मुसलमान समाज की बुद्धिशून्य निष्ठुरता फूट फैली है। भविष्य के आवरण से नाना प्रकार की आशंकाएँ अपना मुँह निकाल रही हैं। ऐसे समय हम क्या प्रसन्नता मनायें? जब देशवासियों की सद्भावना का दिवाला निकल गया हो तब क्या दिवाली, क्या उत्सव, क्या आनन्द?

निस्संदेह, भविष्य की आशंकाएँ आज सामने हैं। पाकिस्तान की स्थापना ने भी एशिया एवं यूरोप के मानचित्र में एक अभूतपूर्व परिवर्तन कर दिया है। आज बंगाल की खाड़ी से लेकर अटलांटक समुद्र तक मुसलमान राज्यों की एक श्रृंखला बन गयी है। पश्चिमी पंजाब, बलूचिस्तान, सिंध सीमाप्रांत, अफगानिस्तान, मध्य एशिया के सोवियत मुस्लिम प्रांत ईरान, तुर्की ट्रांसजोर्डान, ईराक, फिलस्तीन, मिस्र, ट्रिपोली, मोरक्को आदि राष्ट्रों की यह एक साम्प्रदायिक संस्था मुस्लिम लीग शिमला सम्मेलन को अकृतकार्य बनाना चाहती है। दूसरी साम्प्रदायिक संस्था हिन्दू महासभा भी अपने कार्यक्रम के द्वारा उस शिमला सम्मेलन को नष्ट–भ्रष्ट करना चाहती है। दोनों साम्प्रदायिक संस्थाओं के लक्ष्य की एक एकता में क्या कोई रहस्य छिपा हुआ है? कोई रहस्य हो चाहे न हो, परन्तु दोनों साम्प्रदायिक संस्थाओं, मुस्लिम लीग और हिन्दु महासभा, की इस समय जो आदर्श–एकता स्थापित हो गयी है, वह है बहुत ही विचित्र, अत्यंत आश्चर्यजनक, अथच चिन्तनीय। साम्प्रदायिक संस्थाओं में–फिर चाहे वे एक–दूसरे के कट्टर शत्रु ही क्यों न हों–इस प्रकार की उद्देश्य–एकता बहुधा स्थापित हो जाती है। इसका कारण मनोवैज्ञानिक है। सम्प्रदायिकतावादी तो साम्प्रदायिकता के क्षेत्र के भीतर ही विचरण करने का अभ्यासी होता है। अतः एक–दूसरे से प्रतिकूल दिशा में सोचते रहने वाले दो सम्प्रदायवादियों की विचारधारा एक ही प्रकार की प्रणालिका से बहती है। इस कारण, इस प्रकार की ध्येय–एकता दो परस्पर विरुद्ध साम्प्रदायिक संस्थाओं में स्थापित हो जाती है।

11.4.2 नवजागरण

आपने देखा नवीन जी बहु प्रतिभावान व्यक्ति थे। उनके अंदर जहाँ राष्ट्र प्रेम भरा था वहीं उससे भी बढ़कर उनके मन में मानवता का स्थान था। इसी मानवता की भावना के कारण वे जन–जन का कहलाना चाहते थे। जाति धर्म आदि भेद भावों से ऊपर उठकर मनुष्य को

प्रजाति का अवसर मिले इसके लिए उन्होंने प्रयत्न किया। 1915 में छपी इस कविता का अवलोकन कीजिए –

हे तारक राज तुम्हें शतवार प्रणाम हमारा
करते हो तुम दूर रात का अंधियारा
भर देते हो सुप्रकाश से जग सारा
है कितना विश्व पर उपकार तुम्हारा
तुम देते हो उपदेश शीघ्र उठने का
कर्त्तव्य भाव से आलस्य दूर करने का
सत्कार्य तेज से जीवन को भरने।

1935–36 की एक घटना से आप अनुमान लगा सकते है कि नवीन जी किस प्रकार मजदूरों के उत्थान के लिए कार्य करते रहे। कानपुर के सूती मिल में मजदूरों की 52 दिन की हड़ताल चली। इस समय नवीन जी ने जनता से मांग कर प्रतिदिन 25–26 हजार व्यक्तियों को खाना खिलाने का जिम्मा अपने ऊपर लिया था। इस समय उन्होंने सत्ता पक्ष पर प्रहार करते हुए यह कविता लिख डाली थी–

सुन लो गर तुममें हिम्मत है
नंगे भूखों का यह गाना,
अब तक के रोने वालों का
यह विकट तराना मस्ताना।
जिनको तुम क्रिड़ा समझते थे।
वे तो यारों निकले मानव
जो रेंगा करते थे अब तक
वे आज कर उठे हैं तांडव

मजदूरों की समस्या को नवीन जी ने विश्व समस्या के रूप में देखा। उनका मानना था कि पूंजीपति व्यवस्था के कारण मजदूरों की हालत दिन पे दिन खराब होती जा रही है। इधर कुछ चालाक लोग मजदूरों के नेता बन कर उन्हें भड़काते हैं। जरूरत इस बात की है कि मिल बैठ कर ठण्डे दिमाग से ऐसा कार्य करें कि उत्पादन न रुके और मजदूरों को भी उचित पारिश्रमिक मिले। मजदूर समस्या पर स्वयं नवीन जी के लेख का अंश पढ़ कर आप स्वयं जाँचे कि वे किस प्रकार का समाधान प्रस्तुत करते हैं।

हमारी मजदूर समस्या और उसकी उलझनें

हमारे देश की नहीं, समस्त संसार की मजदूर समस्या आज उलझ–सी गयी है। अमेरिका, इंग्लैण्ड, फ्रांस, आस्ट्रेलिया, कनाडा, सभी जगह मजदूर वर्ग में एक विशेष असंतुष्टि, एक हृदय–मंथनकारी बेचैनी है। इस असंतोश का कारण बिल्कुल स्वाभाविक, अतः धैर्यपूर्वक विचार करने योग्य है। प्रत्येक महायुद्ध के उपरांत समाज में एक अद्भूत अभूतपूर्व आर्थिक असंतुलन उत्पन्न हो जाता है। युद्ध के लिए समूचे राष्ट्र की शक्तियाँ लगती है। राष्ट्र का अमाप धन युद्ध में व्यय होता है। राष्ट्र के निवासियों से युद्ध के लिए उपयोगी सामग्रियों को बनाने का काम लिया जाता है। इस कार्य के लिए समाज एवं राष्ट्र द्वारा स्वीकृत आर्थिक विनिमय अर्थात् सिक्के का ही प्रयोग होता है। चूंकि व्यय बहुत अधिक होता है, अतः सिक्के

में निस्सीम वृद्धि होती है। परिणाम यह होता है कि एक ओर सिक्के का चलन बढ़ता है और दूसरी ओर जब जीवनोपयोगी वस्तुओं की वृद्धि उस मात्रा में नहीं होती जितनी मात्रा में सिक्कों की वृद्धि होती है, तब उन वस्तुओं का भाव बढ़ने लगता है और इस प्रकार समाज में खलबली उत्पन्न होती है। इस आर्थिक असंतुलन, अर्थात् आर्थिक–तराजू के पलड़ों के ऊँचे–नीचे हो जाने के कारण समाज में बेचैनी, असंतोष एवं उलझनों का जन्म होता है। विगत 1914–18 के महायुद्ध की समाप्ति के बाद भी इन्हीं आर्थिक कारणों से हम भारतीय तथा अंतर्राष्ट्रीय आकाश में श्रमिक वर्ग के असंतोष का उल्कापात देख चुके हैं। तब 1939–45 के विश्वव्यापी महायुद्ध के उपरांत यदि हम संसार की श्रमिक–वर्गीय असंतुष्टि को देखें तो इसमें आश्चर्य ही क्या है?

जहाँ तक हमारे मजदूर भाइयों का सम्बन्ध है, उनके बीच कुछ ऐसे लोगों का प्रवेश हो गया है जिनका एकमात्र उद्देश्य उन मजदूरों के रक्त को हमेशा बुखार की हालत में रखना है। उन्हें सदा उभारते रहना, उन्हें व्यर्थ के संघर्ष के लिए प्रेरित करना और इस प्रकार की बेचैनी पैदा करते रहना, इन तथाकथित मजदूर हितैषियों का राजनीतिक कार्यक्रम है। ये लोग इसी प्रकार शायद मजदूर–राज स्थापित करने का स्वप्न देख रहे है। किन्तु वास्तविकता यह है कि इस प्रकार किसान–मजदूर राज की जड़ें खोखली की जा रही है। मजदूरों को उल्लू बनाकर समाज में गड़बड़ी फैलाकर ही यदि स्वराज्य की स्थापना संभव होती तो लोगों ने जर्मनी में स्वराज्य बना दिया होता। पर उसके बजाय तथाकथित विश्व क्रांतिकारी हिटलर राज्य को स्थापित किया। इसी प्रकार स्पेन में इन्हीं लोगों ने, फ्रेंको के आक्रमण काल में आपस में फूट डाल कर तमाम वामपंथियों की शक्तियों को छिन्न–भिन्न करके, स्पेन की फाशिस्ट विरोधशीला शक्ति को क्षीण किया। हम अपने मजदूर भाइयों को सचेत और सावधान कर देना चाहते हैं, यदि वे विश्वक्रांति की हत्या करने वाले इन लोगों की बातों में आयेंगे तो न केवल मजदूरों का वरन् समूचे देश का सर्वनाश हो जाएगा और भारतीय विप्लववाद, यानी क्रांतिवाद, जिसे भारतीय राष्ट्रीय महासभा कांग्रेस ने अपने हृदय के रक्त से पाल–पोस कर इतना बड़ा किया है, असमय में ही काल के गाल में चला जायेगा। हम स्वयं श्रमिक वर्ग को, मजदूर समाज को, सुसंगठित कर रहे हैं। कांग्रेस संस्था ने यह काम अपने हाथ में लिया है। ऐसे समय मजदूरों का यह कर्तव्य है कि वे उनको बहकाकर, उन्हें गोलियों से भुनवाने वाले लोगों के कहने में न आवे।

मजदूर भाइयों से हम कहते हैं कि आप सब कांग्रेस के झण्डे के नीचे संगठित होकर अपना आगे का कार्यक्रम निश्चित कीजिए। आप किसी के बहकावे में आकर व्यर्थ में कानून तोड़ने और हो–हल्ला मचाने के चक्कर में न फँसिये। याद रखिये, जो लोग आपको भड़काते हैं वे आपके जानी दुश्मन हैं। आपको इस प्रकार की नेतागिरी के इच्छुक लोगों से सावधान रहना चाहिए। हम आपकी कठिनाइयों, आपके दुःख–दर्दों, आपकी आवश्यकताओं, आपकी तकलीफों और आपकी भावनाओं को खूब अच्छी तरह समझते हैं। हम आपके साथ मरने–जीने को तैयार हैं। देश में किसान–मजदूर राज्य स्थापित करना ही कांग्रेस का एकमात्र लक्ष्य है। ऐसी अवस्था में आप मजदूर भाइयों को समझ लेना चाहिए कि जो लोग हमेशा आपके खून को खौलाने और आपका खून बहाने की बात करते हैं वे आपके दुश्मन हैं।

(दैनिक प्रताप : 16 जनवरी, 1947)

नवीन जी मानवता के पुजारी। आपने देखा कि उनका जीवन किस प्रकार आरंभ हुआ। अभाव ग्रस्त परिवार में जन्म लेने पर भी मानवता को उन्होंने नहीं छोड़ा। देश को परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त कराने के लिए जहाँ उन्होंने ओजस्वीपूर्ण कविताएँ लिखी वहीं मानवता

की स्थापना के लिए लेख लिखे। साप्ताहिक 'प्रताप' के माध्यम से लगातार लेखन कर उन्होंने देश की सामाजिक राजनैतिक समस्याओं को सुलझाने का प्रयत्न किया 'मानव का भेड़िया बन जाना ही क्या कल्याणकर है?' लेख के द्वारा वे देश ही नहीं संसार के सामने यह प्रश्न रखते हैं –

आइए इस लेख का अंश पढ़े–

मानव का भेड़िया बन जाना क्या कल्याणकर है?

वैदिक ऋषियों के अंतस्तल से प्रार्थना उमड़ी–असतो मा सद्‌गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय–मृत्योर्मा अमृतगमय–मुझे असत् से सत् की ओर चरण निक्षेप करने, अंधकार से ज्योति की ओर जाने एवं मृत्यु से अमृत्तव की ओर चलने की प्रेरणा प्रदान करो, हे सर्वेष! किन्तु ऋषियों ने यह भी देखा कि सत् एवं असत को, प्रकाश एवं अंधकार को तथा अमृत्तव एवं मृत्यु के भेद को हृदयंगम करने के लिए निर्मल बुद्धि की आवश्यकता है। यदि बुद्धि निर्मल न हो, यदि बुद्धि के ऊपर तमोगुण का आवरण चढ़ा हुआ हो तो वह असत् को सत् तप को ज्योति एवं मृत्यु को अमृत समझ लेगी। गीतकार ने तमोगुणयुक्त बुद्धि के लक्षणों का वर्णन करते हुए ठीक ही कहा है कि अधर्म कर्ममीति या मन्यते तमावृता, सर्वार्थान् विपरीताष्च बुद्धिः सा, पार्थ, तापसी। तमोगुणावृत्त जो बुद्धि अधर्म को धर्म मानती और जो सम्पूर्णतः अर्थों को विपरीत रूप में ही ग्रहण करती है, वह बुद्धि, हे अर्जुन, तामसी है। हमारे वैदिक ऋषियों ने बुद्धि के सत् प्रेरित होने की आवश्यकता को अनुभव कर लिया था, इसीलिए उन्होंने तेजपुंज, कल्मपहर, सविता स्वरूप विश्वाधार से प्रार्थना की–त्त् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात्–हम उस सविता देव के श्रेष्ठ तेज की उपासना करते है, वह हमारी बुद्धि को सत् प्राणोदित करे। इस प्रकार जब हमारी बुद्धि तेज–बल युक्त, सात्विक प्रेरणा युक्त, होगी तब वह यथार्थता का दर्शन करा सकेगी और तभी हम सत् की ओर, ज्योति की ओर एवं अमृत्तव की ओर चरणनिक्षेप कर सकेंगे। हमें यह न भूलना चाहिए कि यह वैदिक प्रार्थना, यह वैदिक विचार–परिपाटी, यह उदात्त भावना हमारी पैतृक सम्पत्ति, हमारी थाती है। यदि घनघोर कलुशित वातावरण में भी हम इस मार्ग से च्युत होते है तो हम न केवल आने मानवत्व को वरन् अपने पितरों को भी लजाते है।

आज के इस भयानक, दूषित, दुर्गन्धपूर्ण, बर्बर वातावरण में हमारे लिए यह असंभव–सा हो रहा है कि हम अपनी बुद्धि को, अपने विचारों को, अपनी भावनाओं को निर्मल बनाये रखें। परन्तु यदि हमें गौरव के साथ जीवित रहना है, यदि अपने मानवत्व को हमें अक्षुण्ण बनाये रखना अभीष्ट है, यदि हमें अपने इतिहास पर, अपनी संस्कृति पर हरताल नहीं फेरनी है तो अपने संतुलन को पयथात बनाये रख सकने की असंभव–सी बात को भी संभावना की परिधि में खींच कर ले आना होगा। इस असंभावना को संभव बनाये बिना हम जीवित नहीं रह सकते। निस्संदेह पश्चिमी पंजाब से जो समाचार आ चुके और आ रहे है, वे हमारे मनों को, हमारे हृदयों को, हमारी धारणाओं को एवं हमारे प्राणों को विचलित, उद्विग्न एवं क्रोधोन्मत्त कर देते हैं। किन्तु देखना तो यह है कि इस तात्कालिक, क्षणिक आवेश के वशीभूत होकर, अपनी सहस्राब्दियों की संचित सांस्कृतिक परंपरा को तिलांजलि देने से क्या हमारा कल्याण हो सकेगा? तात्विक प्रश्न तो यह है कि मानय का भेड़िया बन जाना ही क्या श्रेयस्कर है?

बोध प्रश्न–2

1) हाँ या नहीं में उत्तर लिखिए :

क) नवीन जी ने मराठी साहित्य का अध्ययन नहीं किया था

ख) बांगला भाषा साहित्य से उनका परिचय था

ग) रूसी तथा अंग्रेजी साहित्य का उन्हें ज्ञान नहीं था

घ) वे पत्र–पत्रिकाओं द्वारा गोखले, विनोबा आदि के लेख पढ़ा करते थे

ड) उनकी आरंभिक रचनाओं पर भक्त कवियों का प्रभाव है

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें –

2. 'आत्मापर्ण कविता का मूल संदेश क्या है?

....

....

....

3. 1920 में चोरी–चौरा कांड के बाद नवीन जी ने कौन सी कविता लिखी?

....

....

....

4. 1943 में कारावास के समय नवीन जी ने किसके लिए कविता लिखी?

....

....

....

5. 17 जनवरी, 1921 को अंग्रेजों ने क्या किया और उसी की प्रतिकृपा में बालकृष्ण जी ने क्या किया?

....

....

....

अभ्यास

1) 'आखिर यह पंतगबाजी क्यों' शीर्षक लेख से लेखक ने भारतीयों की किस कमजोरी की ओर ध्यान दिलाने की कोशिश की?

....

....

....

....

....

....

....

....

2) 'के बोले माँ! तुमि अबले' लेख में नवीन जी ने वर्षों बाद घटने वाली घटना को पहचान लिया था।' दस पंक्तियों में इसे स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

....

....

....

3) नवीन जी ने जाति प्रथा के ठेकेदारों को राष्ट्र का दुश्मन बताया। दस–बारह पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

....

....

....

11.5 सारांश

बालकृष्ण शर्मा नवीन का जन्म ऐसे समय हुआ जब प्रबुद्ध भारतीयों का दल एक राष्ट्रीय संगठन बना कर देश की आजादी की योजना बना रहा था। युवावस्था में ही उन्हें देश के बड़े–बड़े नेताओं से मिलने का मौका मिला। बचपन की भक्ति भावना राष्ट्रीय भावना में बदल गई। आप नवीन जी के समय की राजनीतिक सामाजिक स्थितियों को बताते हुए यह भी स्पष्ट कर सकते हैं की समसामयिक परिस्थितियों का लेखक पर क्या प्रभाव पड़ा।

नवीन जी अध्ययनशील व्यक्ति थे। देश की कई भाषाओं के साहित्य के साथ उन्होंने विदेशी साहित्य का भी गहन अध्ययन किया था। उनके साहित्य पर हम इनका प्रभाव देख सकते हैं।

नवीन जी की विचारधारा का निरंतर विकास होता रहा। उनकी रचनाओं में भक्ति, राष्ट्रीयता और अंत में मानवतावादी विचारधारा के विकास को हम स्पष्ट रूप से देख सकते हैं।

11.6 उपयोगी पुस्तकें

संपादन डॉ. लक्ष्मीनारायण दूबे, नवीन ग्रंथ रचनावली, चतुर्थ खंड साहित्यवाणी 28, पुराना अल्लापुर, इलाहाबाद

11.7 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न – 1

1 2, 3, 4, देखें भाग 11.3

बोध प्रश्न –2

1, 2, 3, 4, 5 देखें भाग 11.4

अभ्यास – 1, 2, 4 देखें उपभाग, 11.4.1

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 12 रामधारी सिंह 'दिनकर' और उनकी कविता

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 पृष्ठभूमि

12.3 राष्ट्रकवि दिनकर

- 12.3.1 कवि परिचय
- 12.3.2 रचनाएँ

12.4 दिनकर साहित्य : प्रमुख प्रवृत्तियाँ

- 12.4.1 राष्ट्रीय चेतना
- 12.4.2 सामाजिक चेतना
- 12.4.3 सांस्कृतिक चेतना

12.5 सारांश

12.6 उपयोगी पुस्तकें

12.7 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

12.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप कविवर दिनकर का अध्ययन करेंगे। इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- दिनकर के समय की पृष्ठभूमि का विश्लेषण कर सकेंगी/सकेंगे,
- दिनकर के व्यक्तित्व और कृतित्व के बारे में बता सकेंगी/सकेंगे,
- दिनकर ने अपनी रचनाओं के माध्यम से देश को राष्ट्रीय एवं सामाजिक स्तर पर किस प्रकार नई राह दिखाई उसका विश्लेषण कर सकेंगी/सकेंगे, और

12.1 प्रस्तावना

इस खंड में आप उन हिंदी कवियों का अध्ययन कर रहे हैं जिन्होंने राष्ट्रीय और सामाजिक क्षेत्र में देश को एक नए युग की ओर ले जाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह इकाई ऐसे ही एक राष्ट्रकवि पर है जिन्होंने अपनी लेखनी द्वारा राष्ट्र के नवनिर्माण में अथक प्रयास किया। समाज की सड़ी गली मान्यताओं से किस प्रकार राष्ट्र कमजोर होता है, किस प्रकार अलोकप्रिय मान्यताएँ व्यक्ति एवं राष्ट्र के विकास में बाधक होती हैं उसका यथार्थ रूप उनकी रचनाओं में देखने को मिलता है। रचनाकार अपने समय की परिस्थितियों से प्रभावित होता है। युग में घट रही घटनाएँ साहित्यकार को प्रेरित करती हैं। दिनकर भी अपने समय में घट रही घटनाओं से प्रभावित हुए। ऐसा उन्होंने कई जगह स्वयं भी लिखा है। पाठ में हम ये देखेंगे कि किस प्रकार परिस्थितियों ने कवि को प्रभावित किया। दिनकर राष्ट्रकवि थे उनकी रचनाएँ जहाँ भारत की गौरव गाथा से भरी हुई हैं वहीं तत्कालीन जनता को प्रेरित

भी करती थी, कवि देश की परिस्थितियों के अनुकूल रचना कर रहे थे। राष्ट्र की उन्नति के लिए जहाँ जरूरी था देश को परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त करना, वहीं दूसरी ओर अंधविश्वास एवं रूढ़ी से ग्रस्त भारतीय समाज को मुक्ति दिलाना भी था। हम पाठ में देखेंगे कि किस प्रकार दिनकर ने इन दो उद्देश्यों के लिए रचनाएँ की। उनका साहित्य विषय वस्तु एवं शिल्प विधान की दृष्टि से उत्कृष्ट है। शिल्प का प्रयोग भी उन्होंने अपने उद्देश्य के लिए किया है। भाषा, विषयवस्तु आदि पर चर्चा करके हम पायेंगे कि किस प्रकार कवि अपने उद्देश्यों में सफल रहा है। आइए पहले उन परिस्थितियों का अवलोकन करें जिनमें दिनकर ने रचनाएँ की।

12.2 पृष्ठभूमि

राजनीतिक पृष्ठ भूमि में दिनकर का समय विश्व में उथल–पुथल का समय था। इस काल खण्ड में विश्व युद्ध भी हुए और कई परतंत्र देशों में क्रांतियाँ भी हुई। भारत में यह समय स्वतंत्रता आंदोलन का था। कांग्रेस के द्वारा जन आंदोलन तो चलाया जा रहा था लेकिन इसमें भी दो दल थे एक परंपरावादियों का और दूसरा प्रगतिशील लोगों का। सुभाष चंद्र बोस जैसे नेताओं के नेतृत्व में उत्तर भारत के युवक देश के लिए मर मिटने को तैयार हो गए थे। युवकों के क्रांतिकारी कार्यों से जहाँ जनता में जोश बढ़ता जा रहा था वहीं ब्रिटिश सरकार आंदोलन को कुचलने के लिए सख्ती से कार्य कर रही थी। गाँधी जी के आगमन से आंदोलन ग्राम–ग्राम तक फैलने लगा।

रौलट एक्ट–जलियाँवाला कांड से जहाँ देश में तूफान मच गया वहीं राष्ट्र एक सूत्र में बंध गया। भारतीय जनता विदेशी सत्ता के खिलाफ एकजुट होकर आंदोलन करने लगी। जलियाँवाला बाग कांड की जाँच के लिए जो हंटर–कमेटी नियुक्त हुई उसने निष्पक्ष निर्णय नहीं दिया फलतः देश में असंतोष फैल गया। कई जगह इस फैसले के विरोध में आंदोलन हुए, गाँधी जी राष्ट्रीय आंदोलन को समय–समय पर नया मोड़ देते रहे। असहयोग आंदोलन द्वारा विदेशी सत्ता का पाँव डगमगाने लगा। यह वह समय था जब देशबन्धु चितरंजन दास और मोतीलाल नेहरू ने स्वराज्य पार्टी की नींव डाली यह पार्टी काँग्रेस के नजदीक पड़ती थी कांग्रेस द्वारा सुनियोजित ढंग से आंदोलन चलाया जा रहा था। किन्तु अंग्रेजों के अत्याचार के खिलाफ कुछ लोगों का रवैया अति उग्र था वे ईंट का जवाब पत्थर से देना चाहते थे, इसी का परिणाम था क्रांतिकारियों ने गुप्त दल का निर्माण किया। ये पूरे देश में फैल गए थे। भगत सिंह द्वारा असम्बेली में बम फेंकना आदि कई घटनाएँ हुई जिससे पता चलता है कि उस समय के भारतीय नवयुवक देश को परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त कराने के लिए जोखिम भरे कार्य करने से नहीं डरते थे।

साईमन कमीशन में एक भी भारतीय को नहीं शामिल करने से आंदोलन की आंच और तेज हो गई। 1930 में कांग्रेस ने स्वतंत्रता की घोषणा की और उसी वर्ष नमक सत्याग्रह भी किया गया। सरकार इन आंदोलनों को सख्ती से कुचलने के लिए कार्य करने लगी। भगत सिंह को फाँसी देकर सरकार ने सोचा कि भारतीय जनता डर जायेगी किंतु ऐसा हुआ नहीं। आंदोलन और तेज गति से चलने लगा। संस्थाओं पर प्रतिबंध, नेताओं को दूर काले पानी की सजा देकर अंग्रेजी सरकार ने अपने दमन की नीति को व्यापक रखा दूसरी ओर स्वतंत्रता के मतवाले और भी उत्साह से जुट गए। भारतीयों का संघर्ष 15 अगस्त 1947 को जा कर सफल रहा और देश स्वतंत्र हुआ। उसके बाद स्वतंत्र भारत का नव निर्माण करना

था। अनेक कठिनाइयों के साथ चीन का भारत पर आक्रमण और अन्य राजनीतिक समस्याएँ थी। इस प्रकार दिनकर के रचना साहित्य की पृष्ठभूमि में भारत के राजनीतिक क्षेत्र में राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष, फिर राष्ट्र के नव–निर्माण की समस्याएँ थीं। ऐसी ही परिस्थिति में कवि ने रचनाएँ की। हम आगे देखेंगे कि उनके साहित्य में किस प्रकार तत्कालीन परिस्थिति का प्रभाव पड़ा और किस प्रकार कवि से संघर्ष करता रहा। यह तो थी उनके समय की राजनीतिक परिस्थिति अब दिनकर के समय में भारतीय समाज पर विचार करें।

सामाजिक परिस्थिति

भारतीय समाज का विभाजन अवैज्ञानिक ढंग से किया गया। जिसका परिणाम था असमानता का दिनोदिन विकास। जाति–वर्ण पर आधारित समाज में स्तर भेद को स्थान मिला। इस व्यवस्था को धर्म की मुहर लगा दी गई। धर्म का भय पैदा किया गया। फलतः जनता का अंधविश्वास बढ़ता गया। इसी जाति व्यवस्था के द्वारा विभाजित भारतीय समाज को जोड़ने का प्रथम प्रयास गौतम बुद्ध द्वारा किया गया। किंतु वर्ण व्यवस्था एवं वर्ग विशेष में प्रभुत्व के कारण उनका कार्य विफल रहा। विदेशी जातियाँ देश में आती गईं और अपना–अपना साम्राज्य बनाती गईं। अंग्रेजों का आगमन भी इसी क्रम में हुआ था। भारतीय समाज की कमजोरी का लाभ विदेशियों को मिलता रहा। दिनकर के समय का समाज भी कमोवेश उसी पुरानी व्यवस्था के अनुरूप था। दलित एवं पीड़ित वर्ग के प्रति सहानूभूति दबे शब्दों में व्यक्त हो रही थी। किंतु समाज में दलित पीड़ित वर्ग उपेक्षित होता रहा। जन्म ही व्यक्ति की महानता की कसौटी बन गई।

जन्म के कारण उत्तम गुणों वाले को भी अपनी क्षमता के विकास से वंचित होना पड़ा दूसरी ओर जनम की महानता का ढोंग रच कर अवगुणी व्यक्ति ऊँचे पद पर आसीन होते रहे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश के संविधान के मुख्य निर्माता के रूप में डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने यह साबित कर दिया कि व्यक्ति का विकास तभी होगा जब उसके जन्म की जगह कर्म को महत्व दिया जायेगा एवं समान अवसर मिलेगा। दिनकर ने अपने समाज को गहराई से मापा था। और इसी संदर्भ में उन्होंने 'रश्मिरथी' की रचना की। इस काव्य ग्रंथ की भूमिका में दिनकर लिखते हैं 'मुझे इस बात का संतोष है कि अपने अध्ययन मनन से मैं व्यक्ति के चरित्र को जैसा समझ सका हूँ। वह इस काव्य के बहाने मैं अपने समय में जो कुछ कहना चाहता था उसके अवसर भी मुझे यहां मिल गये हैं' अपने समय की सामाजिक परिस्थितियों के संदर्भ में कवि का कहना है वर्ण चरित्र के उद्धार की चिंता इस बात का प्रमाण है कि हमारे समाज में मानवीय गुणों की पहचान बढ़ने वाली है, कुल जाति का अहंकार विदा हो रहा है। पाठ में जब हम प्रमुख प्रवृत्तियों की चर्चा करेंगे तो विस्तार से सामाजिक चेतना के विभिन्न क्षेत्रों को लेंगे।

आर्थिक पृष्ठभूमि

दिनकर का काल स्वतंत्रता संग्राम से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति से कुछ बाद तक का है। इन दिनों देश की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं थी। अंग्रजी शासन के शोषण की नीति से देश की आर्थिक दशा में गिरावट आती गई और यहाँ का उद्योग नष्ट प्राय हो गया था। राजनीतिक आंदोलन के समय भी दशा वैसी ही रही। सन् 1947 में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जब देश की बागडोर हमने अपने हाथों में ली तब देश की गिरी हुई आर्थिक दशा को सुधारने का प्रयास किया गया। किंतु सत्ता के नषे में चूर लोगों के कारण इसमें फर्क नहीं आया।

देश के नव–निर्माण की रूपरेखा बनाई गई लेकिन देश की जनता निर्धन से निर्धनतर होती गई। संपन्न वर्ग संपन्न होता गया। कवि दिनकर ने इस कार्य की निंदा ही नहीं बल्कि कड़ा विरोध किया। हम आगे उनकी रचनाओं के माध्यम से जानेंगे कि किस प्रकार वे अपने ही लोगों द्वारा शोषण की नीति का विरोध करते हैं। सामंतवादी समाज की स्थापना के लिए उन्होंने हर जगह आक्रोश प्रकट किया। इस प्रकार हमने देखा कि कवि का समय सभी दृष्टियों से ऊथल–पुथल का काल था। भारत के इस कठिन काल में दिनकर ने अपनी लेखनी द्वारा नए एवं पीड़ा से मुक्त तथा सभी दृष्टि से आर्दश राष्ट्र के लिए प्रयत्न किया। आइए अब इस कवि की जीवनी के बारे में संक्षिप्त जानकारी प्राप्त करें–

12.3 राष्ट्रकवि दिनकर

भारतीय पुर्नजागरण के क्षेत्र में जिन कवियों ने योगदान दिया उनमें राष्ट्रकवि 'दिनकर' का विशिष्ट स्थान है। यूँ तो उन्होंने पारंपरिक विषयों को आधार बनाकर काव्य रचनाएँ की किंतु उनमें स्पष्ट रूप से आज के युग की समस्याओं को ही लिया गया है। राष्ट्र परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था ऐसे में एक प्रबुद्ध कवि भला युग से कैसे मुँह मोड़ सकता था। दिनकर ने राष्ट्रीय एवं सामाजिक चेतना के लिए ही लेखन किया। नवजागरण के लिए उनके द्वारा लिखा गया साहित्य अत्यंत मूल्यवान है। आइए इस कवि के जीवन एवं साहित्यिक रचनाओं को जाने।

12.3.1 कवि परिचय

रामधारी सिंह दिनकर का जन्म 30 सितंबर सन् 1908 को बिहार के मुंगेर जिले के सिमरिया नामक ग्राम में हुआ था। उनका परिवार साधारण कृषक परिवार था। दिनकर जी जब दो वर्ष के थे तब उनके पिता का देहांत हो गया। माँ ने तीन बालकों को बहुत कठिनाई से पाला। सिमरिया ग्राम गंगा के किनारे स्थित है अतः बाढ़ आदि से उस ग्राम को हमेशा क्षति होती थी। ऐसे माहौल में दिनकर जी की प्रारंभिक शिक्षा शुरू हुई। ग्राम के कुछ दूरी पर ही पाठशाला थी। बाद में उनका दाखिला मोकामा घाट के एक विद्यालय में करा दिया गया जो लगभग छह मील दूर था। बालक दिनकर प्रतिदिन छह मील पैदल चलने के बाद स्टीमर लेते फिर विद्यालय पहुंचते थे। सन 1928 में मैट्रिक की परीक्षा पास करने के बाद उच्च शिक्षा के लिए वे पटना आए। यहीं से उन्होंने इतिहास विषय में बी. ए. ऑनर्स किया सन् 1934 में वे बिहार सरकार के सब रजिस्ट्रार पद पर नियुक्त हुए। नौ वर्ष तक इस पद पर कार्य करते समय उन्होंने अपने राज्य की गरीबी का नजदीकी से अध्ययन किया। सन् 1950 में मुजफ्फरपुर के लंगट सिंह कॉलेज में हिंदी विभाग के अध्यक्ष पद को सम्भाला। सन् 1952 में वे राज्य सभा के सदस्य बनाए गए। 1964 में भागलपुर विश्वविद्यालय के उपकुलपति पद पर नियुक्त होने से पहले तक वे राज्य सभा के सदस्य रहे। सन् 1965 में भारत सरकार के हिन्दी सलाहाकार पद पर नियुक्त हुए। सन् 1959 में दिनकर को पद्मभूषण से सम्मानित किया गया। 1960 में साहित्य अकादमी सन् 1962 में डी.लिट्. तथा सन् 1973 में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 24 अप्रैल सन् 1974 को मद्रास में उनका निधन हो गया।

12.3.2 रचनाएँ

दिनकर के अंदर साहित्य रचना की जन्मजात प्रतिभा थी। सन् 1924 में अपने विद्यार्थी जीवन से ही उन्होंने काव्य रचना शुरू कर दी थी। 'छात्र सदोदर' में उनकी पहली काव्य रचना

छपी थी। सन् 1935 से 'रेणुका–काव्य संग्रह' के प्रकाशन से उनकी पुस्तकें छपने लगी थी। उन्होंने कुल 40 पुस्तकें लिखी जो इस प्रकार से है।

काव्य

रेणुका, सामधेनी, कुरूक्षेत्र, चक्रवात, रश्मिरथी, उर्वषी, कोयल और कवित्व, परशुराम की प्रतीक्षा, हारे को हरिनाम, हुंकार,

वैचारिक गद्य

संस्कृति के चार अध्याय, शुद्ध कविता की खोज साहित्यमुखी, भारतीय एकता, राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय एकता, पंत, प्रसाद और मैथिलीशरण गुप्त।

विविध

संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ (संस्मरण), दिन की डायरी, मेरी यात्राएँ

बोध प्रश्न– 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. दिनकर का जन्म किस राज्य में और किस वर्ष हुआ?

....

....

2. उनके छात्र जीवन के समय अंग्रेजों ने किसे फांसी की सजा दी थी?

....

....

....

3. दिनकर को किन–किन पुरस्कारों से सम्मानित किया गया?

....

....

....

4. किस वर्ष दिनकर को राज्य सभा का सदस्य बनाया गया और वे कब तक इस पद पर रहे?

....

....

....

5. हिंदी से संबंधित किस पद पर भारत सरकार ने उन्हें नियुक्त किया?

....

....

....

6. उनकी प्रथम काव्य रचना कब और किस पत्रिका में छपी?

....

....

....

7. उन्होंने कुल कितनी रचनाएं की?

....

....

....

8. उनकी संस्कृति और इतिहास विषयक प्रसिद्ध रचना का क्या नाम है?

....

....

....

12.4 दिनकर साहित्य : प्रमुख प्रवृत्तियाँ

दिनकर का जन्म जिस युग में हुआ वह विश्वभर में एक परिवर्तन का युग था। सभी जगह उथल–पुथल मची हुई थी। नए युग का आगमन हो रहा था। सामन्ती व्यवस्था को तोड़कर समानता से भरे समाज के लिए संघर्ष हो रहा था। भारत में इसकी शुरूआत विदेशी सत्ता से मुक्ति के आंदोलन से होती है। भारतीय राजनीति में साम्यवाद का उदय होता है। समानता से पूर्ण समाज की स्थापना के लिए दिनकर जैसे कवि का भी उदय होता है। दिनकर के समस्त काव्य में हमें समसामयिक सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक चेतना के दर्शन होते हैं। स्वयं दिनकर एक निर्भीक कवि थे। देश में अंग्रजों का राज्य था। दासता की बेड़ी से देश को मुक्त कराना था तो दूसरी ओर सड़ी–गली पुरानी व्यवस्था के नीचे दबे मानव को निकालना भी था। अपनी डायरी में स्वयं लिखते हैं कवि निर्भीक नहीं होंगे 'हुंकार' रचना में कवि ने युग चेतना को ही व्यक्त किया है। एक उदाहरण देखिए –

'समय–दुह की ओर सिसकते मेरे गीत विकल हो,
आज खोजने उन्हें बुलाने वर्तमान के पल आये ?
शैल–श्रृंग चढ़ समय–सिंधु के आर–पार तुम हेर रहे,
किन्तु तात क्या उन्हें, भूमि का कौन दनुज पथ घेरे रहे
दो वज्रों का घोष, विकट संघात धरा पर जारी है
बहिन–रेणु चुन स्वान सजा लो, छिटक रही चिनगारी है।
रण की घड़ी, जलन की बेला, रुधिर पंक में जान करो,
अपना साकल धरो कुण्ड में, कुछ तुम भी बलिदान करो।

दिनकर अपनी कविताओं के माध्यम से जनता में चेतना लाना चाहते थे। देश को गुलामी की जंज़ीर से मुक्त कराने के लिए लोगों में जोश लाना जरूरी था और दिनकर की कविताओं में ऐसे गुण भरे पड़ें है। आइए उनकी रचनाओं से उदाहरण लेकर हम उनमें व्यक्त राष्ट्रीय, सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना की जानकारी प्राप्त करें।

12.4.1 राष्ट्रीय चेतना

दिनकर की राष्ट्रीय चेतना का प्रारंभ 'रेणुका' द्वारा होता है और 'परशुराम की प्रतीक्षा' में उसका पूर्ण विकास होता है। युगीन अत्याचार अहंकार और आडंबर के नाश के लिए कवि कह उठता है–

'गिरे विभव का दर्प चूर्ण हो
लगे आग इस आडम्बर में,
अहंकार के उच्च शिखर से
स्वामहन अघड़ आग बुझा दो
जले पाप जग का क्षण भर में।

अंग्रेजों के अत्याचार से भारतीय जनता कराह रही थी इसलिए कवि का मानना था कि अहिंसक आंदोलन से कुछ नहीं होने वाला और इसीलिए उन्होंने अपनी 'हिमालय' शीर्षक कविता में शौर्य तथा शक्ति के लिए आह्वान किया–

'रे रोक युधिष्ठर को न यहाँ
जाने दे उनको स्वर्ग धीर
पर फिरा हमें गांडीव गदा
लौटा दे अर्जुन भीम वीर।
तू मौन त्याग, कर सिंहनाद
रे तपी आज तप का न काल
नव–युग शंख–ध्वनि जगा रही
तू जाग, जाग मेरे विशाल

दिनकर में राष्ट्रीयता कूट–कूट कर भरी हुई थी। लेकिन वे शांति अंहिसा को पूर्ण रूप से मानकर चलने के पक्ष में नहीं थे। उनका मानना था कि शांति और अहिंसा तभी सार्थक है जब उनका अनुयायी मजबूत हो अगर कोई शक्तिहीन राष्ट्र अहिंसा को अपनाता है तो इसका तात्पर्य यही हुआ कि वह कायर है। वे ईंट का जवाब पत्थर से देने के पक्षधर थे। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद भारत के इतिहास की सबसे बड़ी घटना थी चीन का आक्रमण। इस समय कवि दिनकर ने तमाम भारत के बुद्धिजीवियों तथा कलाकारों को इस युद्ध का मुंहतोड़ जवाब देने के लिए आह्वान किया। वे मांग करते हैं कि अपनी मेघा शक्ति परशुराम के माध्यम से उन्होंने लोगों में राष्ट्रीय चेतना को उभारा–

चिन्तकों! चिन्तना की तलवार गढ़ो रे।
ऋषियों! कृषान, उद्दीपन मन्त्र पढ़ो रे!
योगियों! जागो, जीवन की ओर बढ़ो रे!
बन्दूकों पर अपना आलोक पढ़ो रे!
है जहाँ कहीं भी तेन हमें पाना है,
रण में समग्र भारत को ले जाना है।

कवि परशुराम की मूर्ति का प्रतीत रखता है और एक नए भारत के उदय को दर्शाता है–

है एक हाथ में परशु, एक में कुश है,
आ रहा नये भारत का भाग्य पुरुष है।

गांधी की अहिंसक नीति से दिनकर का विचार अलग था और इसीलिए वे 'महामानव की खोज' शीर्षक कविता में गांधी नीति पर निर्भीकता पूर्वक प्रहार करते हैं।

'उब गया हूँ देख चतुदिर्क अपने
अजा धर्म का ग्लानि वहीन प्रवृतन
युग सतम सुबद्ध पुनः कहता है
ताप कलुष है। आशा बुझा दो मन की।

'हुंकार'

चरण के आक्रमण से राष्ट्रीयता की आहट हुई थी। जीवन मूल्य भंग हुये थे अतः युग की मांग में अनुकूल अपने में दबे हुए आज को भड़क जाने दिया। कवि इतना तिलमिला उठा कि अहिंसा के बचाव के लिए हिंसा को प्रभार ओढ़ाता है –

'गिराओ बम गोली दागो
गांधी की रक्षा करने को गांधी से भागो।

'परशुराम की प्रतीक्षा' में कवि देशवासियों में राष्ट्र की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं –

दासत्व जहाँ है, वहीं स्तब्ध जीवन है,
स्वातन्त्र्य निरन्तर समर, सनातन रण है,

स्वातन्त्रय समस्या नहीं आज या कल की जागृति तीव्र वह घड़ी–घड़ी पल–पल की कवि आगे यह कहता है–

तिलक चढ़ा मत और हृदय में हूक दो,
दे सकते हो तो गोली बन्दूक दो।

युद्ध में पराजय से बड़ा कोई पाप नहीं इसलिए वे कहते हैं –

एक वस्तु है ग्राह्य युद्ध में, और सभी कुछ देय है,
पुण्य हो कि पाप, जीत केवल दोनों का धेय है।

x x x

समर हारने से बढ़कर घातक न दूसरा पाप है।

इसी 'परशुराम की प्रतीक्षा' में कवि ने उन लोगों को फटकारा है जो तटस्थ रहना चाहते हैं। कवि उन्हें चालाक तथा कायर कहता है –

अब समझा, चुप्पी, कदर्यता की वाणी है,
बहुत अधिक चातुर्य आपदाओं का घर है,
दोषी केवल वही नहीं, जो नयनहीन था,
उसका भी है पाप, आँख थी जिसे किंतु जो,
बड़ी, बड़ी घड़ियों में मौन, तटस्थ रहा है।

दिनकर ने काव्य रचना का प्रारंभ अपने विद्यार्थी जीवन से ही कर दिया था। उस समय भारत ब्रिटिश – साम्राज्यवाद के अधीन था। जनता को जगाना तथा जुल्मकारी शासन के

खिलाफ उन्हें आंदोलन के लिए तैयार करना उस समय के कवियों का पहला उद्देश्य था। दिनकर इसमें सबसे आगे थे। वे क्रांति को पुकारते हुए लिखते हैं –

युगों से अनय का भार ढ़ोते आ रहे हैं,
न बोली तू मगर हम रोज मिटते जा रहे हैं,
पिलाने को कहाँ से रक्त लायें दानवों को ?
नहीं क्या स्वत्व है प्रतिशोध का मन मानवों को।

'हुंकार–पृ.10

कवि जनताप को अमरीकी और फ्रांसीसी क्रांति का उदाहरण देकर लोगों को क्रांति के लिए प्रेरित करता है तथा अंग्रेजी सरकार को भी सावधान करता है कि जनता की ताकत को अनदेखा मत करो–

'मत खेलो यों बेखबरी में
जन–समुद्र यह नहीं, सिंधु है, यह अमोघ ज्वाला का
जिसमें पड़कर बड़े–बड़े कंगुरे पिघल चुके हैं।
लील चुका है यह समुद्र जाने कितने देशों में
राजाओं के मुकुट और सपने नेताओं के भी,
सावधान जन्मभूमि किसी की चारागाह नहीं है,
घास यहाँ की पहुँच पेट में काँटा बन जाती है।'

दिनकर मानव–मानव में असमानता को नहीं स्वीकारते चाहे शासक हो या शासित सभी को प्रगति का समान अवसर मिलना चाहिए। चाहे शासक देशी हो या विदेशी समानता का भाव रखना चाहिए और इसी नीति के अनुकूल शासन करना चाहिए।

कुरूक्षेत्र रचना में वे भीष्म से कहलवाते हैं –

'धर्मराज! यह भूमि किसी की नहीं क्रीट है दासी,
है जन्मता समान परस्पर इसके सभी निवासी।
'राजतंत्र धोतक है नर की मलिन, विहीन प्रकृति का,
मानवता की ग्लानि और कुत्सित कलंक संस्कृति का।

कुरुक्षेत्र, पृ–51, 144

अन्यायी शासक के खिलाफ जब जनता एकजुट होकर उठ खड़ी होती है तो उसकी ताकत के आगे कोई नहीं टिक सकता–

'हुंकारों से महलों की नींव उखड़ जाती है
सांसों के बल से ताज हवा में उड़ता है,
जनता की रोके राह, समय में ताव कहाँ,
वह जिधर चाहते, काल उधर ही मुड़ता है।

जनता की शक्ति एकत्रित होकर काल का रूप धारण कर लेती है। इस प्रकार कवि ने विभिन्न उदाहरणों के माध्यम से लोगों में राष्ट्रीय चेतना फैलाने का सफल कार्य किया। आइए अब देखें कि तत्कालीन भारतीय समाज में व्याप्त असमानताओं को दूर करने के लिए उन्होंने क्या किया।

12.4.2 सामाजिक चेतना

भारतीय समाज का जिस दिन जन्म को आधार बना कर विभाजन हुआ उस दिन ये इसमें दुर्बलता आती गई उससे पहले का भारतीय समाज प्रगति की ओर अग्रसर था। बड़े–बड़े साम्राज्य की स्थापना किसी वर्ग विहीन समाज की ही देन हो सकती है न विखंडित समाज की वैज्ञानिक प्रगति ने विश्व को छोटा बना दिया है। अर्थात आज अनगिनत ऐसे आविष्कार हो चुके हैं जिसमें भेद–भाव का कोई स्थान नहीं रहना चाहिए। पुराने रीति–रिवाजों का कोई स्थान नहीं ऐसे रीति रिवाज या अंधविश्वास जिनसे समाज विकसित न हो रहा हो, जिनमें मानवता कराह रही हो उसका नाश करना ही बुद्धिजीवियों का पहला कर्तव्य होना चाहिए और इस कार्य को करने के लिए दिनकर जैसे महान् कवि पीछे नहीं हटते।

यही व्यवस्था भारतीय समाज के दुःख का सबसे बड़ा कारण है। उस पर प्रहार करते हुए कवि कह उठता है–

'आह, सभ्यता के प्रांगण में आज गरल वर्षन कैसा
दीन दुखी असहाय जनो पर अत्याचार प्रबल कैसा ?

ब्राह्मण वर्ग में अनीति के विरूद्ध क्रांति का विगुल बजाने वाले महात्मा बुद्ध थे। रेणुका में 'बोधिसत्व' रचना के माध्यम से कवि ने भारतीय समाज के कोढ़ अर्थात् जाति व्यवस्था पर कड़ा प्रहार किया है। अछूतोद्धार आदि समस्या को इसमें लिया गया है। व्यक्ति का उज्जवल चरित्र ही सब कुछ है जाति का उसमें कोई स्थान नहीं–

'नर का गुण उज्जवल चरित्र है, नहीं वंश, धन धाम'

रश्मिरथी–पृ–6

कर्ण चरित्र के माध्यम से कवि ने अपनी रचना रश्मिरथी में प्रमाणित किया है कि जाति का व्यक्ति के चरित्र से कोई संबंध नहीं।

भाग्य आदि अंधविश्वासों से मानव का कल्याण नहीं होने वाला उसे तो कर्म पर विश्वास रखना चाहिए –

उद्यम से विधि का अंक उलट जाता है,
किस्मत का पासा पौरुष से हार पलट जाता है।

'समर शेष है' इसकी रचना कवि ने 1954 में की। इसमें उन्होंने समतामूलक समाज बनाने का आह्वान किया है–

सकल देश में हालाहल है
दिल्ली में हाला है।
दिल्ली में रोशनी, शेष,
भारत में अधिपाला है।

समर शेष है–पृ–76

'सबार ऊपरे मानुष' यह विश्वकवि रवींद्रनाथ ठाकुर का मूल मंत्र था। इस वैज्ञानिक युग में भेद उपभेद, ऊंच–नीच, विवेक रहित मान्यताओं का कोई स्थान नहीं। विशेष रूप से भारत जैसे देश में जहाँ जाति–व्यवस्था लोगों के नस–नस में समाई हुई है उसे दूर करना

आवश्यक है। इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए दिनकर ने 'रश्मिरथी' की रचना की है। यह वास्तव में युग की कुरूप व्यथा गाथा है। कर्ण के चरित्र पर आधारित इस काव्य रचना के माध्यम से कवि ने आज जाति व्यवस्था जैसे भयंकर ज्वलंत समस्या पर प्रहार किया है। कर्ण उन तमाम गुण संपन्न व्यक्तियों का प्रतीक है जो अमानवीय जाति व्यवस्था का शिकार हैं। वह तमाम उपेक्षित वर्ग का प्रतिनिधित्व कर रहा है।

मैं उनका आदर्श, जिन्हें कुल का गौरव ताड़ेगा,
नीच वंश जन्मा कह कर जिनको जग धिक्कारेगा।
जो समाज की विषम वह्नि में चारों ओर जलेंगे,
पत्र–पत्र पर झेलते हुए बाधा निःसीम चलेंगे।

रश्मिरथी, पृ.60

कर्ण ललकारता है और चुनौती देता है–

पूछो मेरी जाति, शक्ति हो तो मेरे भुजबल से,
रवि समान रोपित ललाट से, और कवच कुंडल से।

वर्ण व्यवस्था के संचालक कृपाचार्य बड़ी धूर्तता से कर्ण को अर्जुन से युद्ध की आज्ञा नहीं देते। कर्ण अपमानित होता है, किंतु दुर्योधन उसे अंग देश का राजा बना कर सम्मानित करता है। अर्जुन को रण में पराजित करने की मन ही मन प्रतिज्ञा करके कर्ण अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए आगे की योजना बनाता है। उसे पता है कि द्रोणाचार्य उसे शिक्षा नहीं देगा। वह जानता है कि उस युग के सबसे बड़े धनुर्धर 'एकलव्य' का द्रोणाचार्य ने क्या हाल किया। अंगूठा कटवा कर उसे हमेशा के लिए पंगु बना दिया। अतः छल से वह परशुराम का शिष्य बनता है। अपने को ब्राह्मण पुत्र बता कर ही वह ऐसा कर पाता है किंतु उसकी आत्म ग्लानि द्वारा कवि ने उस तमाम उपेक्षित वर्ग की व्यथा ही व्यक्त की है जिसके पास सामर्थ्य तो है किंतु जाति व्यवस्था के कारण वे अपना सामर्थ्य दिखाने में विवश हैं –

हाय कर्ण तू क्यों जनमा था ? जनमा तो क्यों वीर हुआ
कवच और कुंडल भूशित भी तेरा अघम शरीर हुआ।

आगे कवि ऐसे विषमता मूलक समाज पर व्यंग्य करता है और कहता है।

धँस जाए वह देश अतल में, गुण की जहाँ नहीं पहचान
जाति गोत्र के बल से ही आदर पाते है जहाँ सुजान।

कुरुक्षेत्र पृ–15

आगे की पंक्तियों में पूरे भारतीय समाज के सामने एक प्रश्नचिन्ह रखा जाता है –

कौन जन्म लेता किस कुल में आकस्मिक ही है यह बात,
छोटे कुल पर, किंतु, यहाँ होते तब भी कितने आघात!
हाय, जाति छोटी है, तो फिर सभी हमारे गुण छोटे,
जाति बड़ी–तो बड़ें बने वे, रहे लाख चाहे छोटे।

कुरुक्षेत्र–पृ–15

कुरुक्षेत्र में ही दिनकर ने यह स्पष्ट रूप से लिखा है कि जाति, धर्म, वंश से किसी व्यक्ति के गुण को मापा नहीं जा सकता। व्यक्ति का व्यक्तित्व स्वयं ही निखरता है। चाहे झोपड़ी

हो या महल कहीं भी गुण सम्पन्न व्यक्ति हो सकता है, इसी तरह किसी भी जाति का व्यक्ति हो उसमें अच्छे गुण भी हो सकते हैं और बुरे भी। इसलिए जाति वर्ग की कोई सार्थकता नहीं –

नहीं फूलते कुसुम मात्र राजाओं के उपवन में,
अमित बार खिलते वे पुर से दूर कुंज कानन में
समझे कौन रहस्य? प्रकृति का, बड़ा अनोखा हाल,
गुदड़ी में रखती चुन–चुनकर बड़े कीमती लाल।

कुरुक्षेत्र, पृ–2

12.4.3 सांस्कृतिक चेतना

दिनकर अपने जीवन के तैंतालीस वर्षों तक लगातार साहित्य रचना करते रहे। पद्य और गद्य के माध्यम से उन्होंने राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना को फैलाने का सफल कार्य किया। उनका मानना था कि साहित्य मानव के लिए उपयोगी होना चाहिए। मात्र मनोरंजन या मन को आनंद प्रदान करने वाला साहित्य साहित्य नहीं, साहित्य वही है जो मनुष्य के दिलो–दिमाग को प्रभावित करे और व्यक्ति कुछ अच्छा करने के लिए प्रयत्नशील हो जाए। हमने देखा कि किस प्रकार राष्ट्रीय आंदोलन के समय से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति और चीनी आक्रमण के समय समयानुकूल साहित्य रच कर कवि ने भारतीय को राह दिखाई। वहीं भारतीय समाज में व्याप्त बुराइयों को दूर करने का प्रयास किया। तब हम विचार करेंगे कि उन्होंने भारत में किस प्रकार सांस्कृतिक चेतना जगाई। दिनकर को अपनी भारतीय संस्कृति पर गर्व था। लेकिन केवल अतीत की घटनाओं का स्मरण कर ही वे नहीं रुकने वाले थे। अतीत की घटनाओं का उदाहरण देकर वर्तमान समय में समाजोयोगी कार्य के लिए उन्होंने काव्य के माध्यम से भारतीय जनता के सामने कई प्रश्न रखे। उन्होंने यह प्रश्न रखा कि क्या केवल जाति वंश के आधार पर ही व्यक्ति को प्रगति का अवसर दिया जायेगा। क्या परंपरा को अपना कर ही राष्ट्र की उन्नति संभव है। क्या भारतीय जनता को प्रगति का समान अवसर नहीं दिया जायेगा। उन्होंने यह भी प्रश्न रखा कि इस वैज्ञानिक युग को हमें परिचय से नहीं सीखना होगा? सन् 1976 में बरेली कॉलेज के तेरहवें दीक्षान्त समारोह में दिये गए भाषण का कुछ अंश यहाँ दिया जा रहा है जिससे आप स्वयं अनुमान लगा सकते हैं कि वे किस प्रकार की सांस्कृतिक चेतना चाहते थे –

''पश्चिम के समस्त देशों में आधुनिकता अपने संघर्ष में जीती है और प्राचीनता पराजित हुई है। भारत में यह संघर्ष चल रहा है। भारत भी नवीनता को प्राप्त कर बदलता रहा है, पर इसकी विचित्रता यह है कि यह जितना ही बदलता है अपने आत्म स्वरूप के अधिक निकट पहुँचता है। यही विलक्षणता भारत का अपना गुण है और इसी गुण के कारण भारत के लोग यह आशा लगाये बैठे हैं कि आधुनिकता को अपना लेने के बाद भी भारत, भारत रहेगा और संसार के सामने एक नया नमूना पेश करेगा।''

दिनकर अपने देश के उस पुराने मूल्यों को भी नहीं छोड़ना चाहते जिनसे मानवता का विकास होता है। किंतु उन घिसेपिटे अंधविश्वास को अवश्य ही त्यागने की बात कहते हैं, जो मानवता के विकास में बाधक है। भारत के सांस्कृतिक रूप का सुंदर उदाहरण हमें उनकी रचना नीलकुसुम, 'किसको नमन करूँ' में देखने को मिलता है –

'भारत नहीं स्थान का वाचक, गुण विशेष कर रहा है,
एक देश का नहीं, शील यह भूमण्डल' भर का है।
जहाँ कहीं एकता अखंडित, जहाँ प्रेम का स्वर है,
देश–देश में वहाँ खड़ा भारत जीवित भास्कर है।

दिनकर 'सबार उपरे मानुष' में विश्वास रखते थे। वे बुद्ध के मूल मंत्र को सर्वश्रेष्ठ मानते थे। संसार को बुद्ध का दिया गया संदेश था मानवता के कल्याण में जुट जाओ। इसी को कवि ने निम्नलिखित पंक्तियों में पिरोया है –

'श्रेय वह विज्ञान का वरदान,
हो सुलभ सबको सहज जिसका रुचिर अवदान।
श्रेय वह नर–बुद्धि का शिव–रूप अविष्कार,
ढो सके जिसके प्रकृति सबके सुखों का भार।
मनुज के श्रम के अपव्यय की प्रथा रुक जाए,
सुख समृद्धि विधान में नर के प्रवृति झुक जाय।

बोध प्रश्न–2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. दिनकर की किस रचना में राष्ट्रीयता का प्रारंभ होता है?

   ....

   ....

2. 'परशुराम की प्रतीक्षा' की रचना किस उद्देश्य से की गई?

   ....

   ....

3. 'हिमालय' शीर्षक कविता में कवि दिनकर का क्या संदेश है?

   ....

   ....

4. गांधी के अहिंसक विचार से क्या दिनकर सहमत थे?

   ....

   ....

5. गांधी की रक्षा के लिए गांधी से भागने की सलाह कवि ने क्यों दी ?

   ....

   ....

6. तटस्थ लोगों के प्रति दिनकर का क्या विचार था?

   ....

   ....

7. अमरीकी तथा फ्रांसीसी क्रांति का उदाहरण देकर कवि क्या संदेश देना चाहता है ?

....

....

अभ्यास

1. दिनकर की सामाजिक चेतना को दस बारह पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

12.5 सारांश

- दिनकर का समय स्वतंत्रता संग्राम से लेकर प्राप्ति का है। कवि ने स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में अपनी रचनाओं के माध्यम से चेतना फैलाने का कार्य किया। चीनी आक्रमण के समय भी उन्होंने लोगों में उत्साह शक्ति संचरित करने का कार्य किया आप दिनकर के समय राजनीतिक सामाजिक आदि स्थितियों के बारे में बता सकते हैं।
- एक गरीब किसान परिवार में जन्म लेने के बावजूद वे अपनी मेहनत एवं मेधा शक्ति के बल पर देश की संसद तक पहुँचे। आप उनकी जीवनी के बारे में बता सकते हैं।
- कुरूक्षेत्र, सामधेनी, रश्मिरथी, संस्कृति के चार अध्याय आदि महत्वपूर्ण ग्रंथ के रचनाकार उन्होंने भारतीय संस्कृति को समयानुकूल ढालने का प्रयास किया।

12.6 उपयोगी पुस्तकें

डॉ. पन्ना, दिनकर के काव्य में युग चेतना, उषा पब्लिसिंग हाउस जयपुर–जोधपुर

डॉ. पुष्पा ठक्कर, दिनकर–काव्य में युग चेतना, अरविन्द प्रकाशन बम्बई

सम्पादक डॉ. गोपालराय–डॉ सकलदेव शर्मा, राष्ट्रकवि दिनकर, ग्रन्थ निकेतन पटना

डॉ. सावित्री सिन्हा, दिनकर, सेतु प्रकाशन, नोएडा, उ.प्र.

12.7 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1, देखे भाग 12.3,

बोध प्रश्न 2 देंखे भाग 12.4

अभ्यास 1 देखे भाग 12.4

इकाई 13 श्यामनारायण पाण्डेय और उनकी कविता

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 श्यामनारायण पाण्डे : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

13.3 प्रमुख कृतियाँ : हल्दीघाटी, जौहर

13.4 श्यामनारायण पाण्डेय की राष्ट्रीय–सांस्कृतिक चेतना

13.5 श्यामनारायण पाण्डेय की भाषा शैली

13.6 सारांश

13.7 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप हिंदी की राष्ट्रीय काव्यधारा के प्रतिष्ठित कवि श्यामनारायण पाण्डेय के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- श्यामनारायण पाण्डेय के जीवन से परिचित हो सकेंगी/सकेंगे;
- श्यामनारायण पाण्डेय के लेखन कार्य से संबंधित जानकारी प्राप्त करेंगे/करेंगी;
- श्यामनारायण पाण्डेय की महत्वपूर्ण कविताओं हल्दीघाटी और जौहर को गहनता के साथ समझ सकेंगी/सकेंगे;
- श्यामनारायण पाण्डेय की राष्ट्रीय चेतना से अवगत हो पाएंगे और साहित्य में उनके योगदान को जान सकेंगी/सकेंगे; और
- श्यामनारायण पाण्डेय की काव्य–भाषा को पहचान सकेंगी/सकेंगे।

13.1 प्रस्तावना

हिंदी की राष्ट्रीय–सांस्कृतिक काव्यधारा के यशस्वी कवि श्यामनारायण पाण्डेय ने अपने देश के प्रति प्रेम एवं निष्ठा का परिचय दिया है। यह राष्ट्रीय–सांस्कृतिक काव्यधारा, नवजागरण काल में भारतेंदु द्वारा प्रवर्तित तथा मैथिलीशरण गुप्त, गया प्रसाद शुक्ल 'स्नेही', माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सुभद्राकुमारी चौहारी, रामधारी सिंह 'दिनकर', सोहनलाल द्विवेदी की कविताओं से पुष्टि हुई है। इन सभी के काव्य में अतीत का गौरवगान, राष्ट्रीय स्वाभिमान, देशोद्धार का संकल्प, मातृभूमि रक्षा हेतु त्याग, बलिदान की भावना साफ झलकती है। इन सब से श्यामनारायण पाण्डेय थोड़े भिन्न इसलिए नजर हैं क्योंकि वे 'आर्य–धर्म, आर्य–संस्कृति', हिंदू–धर्म और 'हिंदू जाति' में एकान्त निष्ठा रखते हैं। हिंदी की राष्ट्रीय–सांस्कृतिक काव्यधारा के यशस्वी कवि श्यामनारायण पाण्डेय ने अपने देश के प्रति प्रेम एवं निष्ठा का परिचय दिया है। यह राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्यधारा नवजागरण काल में

भारतेंदु द्वारा प्रवर्तित तथा मैथिलीशरण गुप्त, गया प्रसाद शुक्ल 'स्नेही', माखनलाल चतुर्वेदी, बाल कृष्ण शर्मा 'नवीन', सुभद्राकुमारी चौहान, रामधारी सिंह 'दिनकर', सोहन लाल द्विवेदी की कविताओं से परिपुष्ट हुई है। इन सभी के काव्य में अतीत का गौरवगान, राष्ट्रीय स्वाभिमान, देशोद्धार का संकल्प, मातृभूमि रक्षा हेतु त्याग, बलिदान की भावना साफ झलकती है। इन सब से श्यामनारायण पाण्डेय थोड़े भिन्न इसलिए लगते हैं क्योंकि वे 'आर्य–धर्म', आर्य–संस्कृति, हिंदू–धर्म और 'हिंदू जाति' में एकान्त निष्ठा रखते हैं। श्यामनारायण पाण्डेय के जीवन में व्यक्तिगत जीवन में अनेक दुख के पहाड़ आए पत्नी और संतान दोनों से संबंधित कई वेदना सहनी पड़ी, अपने ही परिवार के सदस्यों व अपनी ही संतानों की मृत्यु को देखना पड़ा जिसके कारण वे कई बार अवसाद में तो गए किंतु उनकी लेखनी लगातार विषम परिस्थितियों में मंजती रही। उन्होंने जीवन के आरम्भिक दौर से ही आर्थिक कठिनाइयों का सामना किया है किंतु राष्ट्र के प्रति मर–मिटने की भावना में कहीं भी कमी नजर नहीं आती है। उनकी कृतियाँ ऐसी हैं जो भारतीयों में अपने देश के प्रति राष्ट्रीय चेतना और प्रेम को जागृत करती हैं। यह सब आप उनकी कृतियों के माध्यम से जान पाएंगे। इस इकाई में आप प्रख्यात कवि श्यामनारायण पाण्डेय की प्रभावशील भाषा के बारे में भी जान पाएंगे।

13.2 श्यामनारायण पाण्डेय : व्यक्तित्व और कृतित्व

आधुनिक काल में राष्ट्रीय काव्यधारा के प्रतिष्ठित कवि श्यामनारायण पाण्डेय का जन्म सन् 1907 में आज़मगढ़ जिले के डुमगाँव (उ.प्र) में हुआ। इनकी माता परम आस्तिक और धर्मनिष्ठ महिला थी। जिसका गहरा प्रभाव श्यामनारायण पाण्डेय के व्यक्तित्व पर पड़ा। आगे चलकर यही भावनाएं धर्म–निष्ठा, संस्कृति–प्रेम और राष्ट्रभक्ति के रूप में अभिव्यक्त होती हैं। इन्होंने 1924 ई. में हिंदी मिडिल, 1925 ई. में उर्दू मिडिल और 1927 में वाराणसी से प्रथमा की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके पश्चात् वे काशी गए और साहित्याचार्य की उपाधि यहीं से प्राप्त की।

सन् 1940 में इनका विवाह गायत्री देवी से हुआ। इनको एक पुत्री की प्राप्ति भी हुई किंतु इनका सुखपूर्वक जीवन अधिक समय तक नहीं चल सका और 1944 में गायत्री का निधन हो गया। उसी समय जौहर महाकाव्य पूर्ण हुआ था। इस ग्रंथ के आरम्भ में 'शुभे' शीर्षक के अन्तर्गत उन्होंने अपनी दिवंगत पत्नी को बड़े करुणा–विह्ल शब्दों में याद किया है। पुत्री की परवरिश के लिए उन्होंने गायत्री की बहन सरस्वती से विवाह किया। इनसे भूदेव नाम के पुत्र की प्राप्ति हुई। कुछ ही वर्षों बाद पुत्र और फिर दूसरी पत्नी का भी देहान्त हो गया। उनके जीवन में शोक थमने का नाम तक नहीं ले पा रहा था। इसके पश्चात् जीवन को दोबारा पटरी पर लाने के लिए उन्होंने तीसरी बार विवाह किया, एक पत्नी का नाम रमावती देवी था जिनसे उन्हें पाँच कन्याओं की प्राप्ति हुई जिनमें से आरम्भिक तीन कन्याओं की अल्पजीवन में ही मृत्यु हो गई। श्यामनारायण पाण्डेय के जीवन में दुखों का पहाड़ छोटा ही नहीं हो पा रहा था। किंतु हर विपरीत परिस्थिति में वे सोने की तरह तप–तपकर निखरते चले गए। उनका लेखन कार्य और अधिक सुदृढ़ होता चला गया। अपने जीवन में अधिकतर समय अध्ययन–अध्यापन के लिए वे काशी रहे और काफी समय व्यतीत करने के पश्चात वे अपने जन्म स्थान डुमराँव आकर स्थायी रूप से रहने लगे। अपनी वृद्धावस्था में वे आत्मनिर्भर बने रहे। श्यामनारायण पाण्डेय हिंदी के एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने बच्चों से लेकर बड़े–बूढ़ों में एक समान वीरभावना का संचार किया। इन्होंने जनता को त्याग, बलिदान और

कर्तव्यपरायणता का पाठ पढ़ाने के साथ–साथ देश, जाति, धर्म, संस्कृति के प्रति प्रेम पैदा करने का कर्म किया।

आरंभिक दौर से ही आर्थिक कठिनाई होते आते हुए भी श्यामनारायण छात्र जीवन में ही रचनात्मक प्रतिभा से गुणवान थे। वे स्कूल में ही छन्दों के उदाहरण देने के लिए स्वनिर्मित छन्दों को सुनाते थे। प्रतिभाशाली श्यामनारायण पाण्डेय ने पच्चीस–तीस वर्ष की आयु में हल्दीघाटी जैसे महाकाव्य की रचना की थी। सन् 1939 में यह महाकाव्य छपा तो लोगों के कण्ठ–कण्ठ में गूंजने लगा। इस रचना के लिए उन्हें कई पुरस्कारों से सम्मानित भी किया गया। इनकी आरंम्भिक कविताएं सामान्य तुकबन्दियों से आरंभ हुई थी। जिनमें आध्यात्मिकता, देशभक्ति और जीवन के सुख–दुख की भावपूर्ण अभिव्यक्तियां थी। किंतु धीरे–धीरे परिष्कृत होकर ये कविताएं राष्ट्रीय–सांस्कृतिक चेतना से प्रबल दिखाई देने लगी। ये आरम्भिक कविताएं थोड़ा विलम्भ से, हल्दीघाटी (1939 ई.), और जौहर (1944 ई.) के पश्चात् आरती नामक संग्रह में 1946 ई. में प्रकाशित होती हैं। सन् 1932 ई. में 'आँसू के कण' और सन् 1934 में 'रिमझिम' दो छोटी–छोटी काव्य पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं जो बाद में 'आरती' संग्रह में ही सम्मलित कर दी गई थीं।

आइए, श्यामनारायण पाण्डेय की रचनाएँ प्रकाशन– काल के अनुसार देखते हैं–

1. तुमुल (1928 ई.)
2. हल्दीघाटी (1939 ई.) (इस रचना के लिए 'देव सम्मान' से अंलकृत)
3. जौहर (1944 ई.) (द्विवेदी पुरस्कार)
4. आरती (1946 ई.)
5. रूपान्तर (1948 ई.)
6. जय हनुमान (1956 ई.) (उ.प्र. सरकार का पुरस्कार)
7. गोरा वध (1956 ई.)
8. शिवाजी (1970 ई.) (उ.प्र. सरकार का पुरस्कार)
9. बालिवध (1975 ई.)
10. वशिष्ठ (1975 ई.)
11. परशुराम (1985 ई.)

13.3 प्रमुख कृतियाँ : हल्दीघाटी और जौहर

श्यामनारायण पाण्डेय की ये दो रचनाएं इतिहास में राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना के महान कवि के रूप में प्रख्यात हुए। इन्होंने 'हल्दीघाटी' की रचना भारतीयों को वीर पाठ पढ़ाने के लिए की है तथा 'जौहर' की रचना भारतीय नारियों को सतीत्व का उदाप्त पाठ पढ़ाने के लिए की गई है। इन दो रचनाओं को गढ़ने का उनका यह उद्देश्य है कि भारतीय पुरूष 'राणाप्रताप' को भी समझें और भारतीय नारियाँ 'पद्मिनी' को भी पहचानें। वह इतिहास के इन दो महान चरित्रों–महाराणा प्रताप और पद्मिनी के माध्यम से वे इनके बलिदान को दिखाकर देश के पुरुषों वे स्त्रियों में स्वातंत्र्य भावना, देश, धर्म, जाति, संस्कृति के प्रति प्रेम की भावना को जागृत करना इनका मुख्य उद्देश्य था।

हल्दीघाटी

हल्दीघाटी एक वीररस प्रधान प्रथम महाकाव्य है। इसमें सत्रह सर्ग हैं। 'हल्दीघाटी' के मूल में वह पृष्ठभूमि है जिसने बाद में अंग्रेजों के साम्राज्यवाद के खिलाफ भारतीय जनता द्वारा मुक्ति –संघर्ष का रूप लिया। हल्दीघाटी युद्ध राणाप्राताप ने अकबर के खिलाफ लड़ा था। इसके प्रारम्भ में कवि ने राणाप्रताप, चित्तौड़ वीर सिपाही, हल्दीघाटी और भाला (महाराणा प्रताप का भाला) आदि शब्दों का ओजपूर्ण तरीके से परिचय दिया है और वे महाराणा प्रताप के बारे में आगे लिखते हैं कि जो आग बरसने पर, शस्त्रहीन होने पर भी वह युद्ध लड़ता रहा, काँटों के सिंहासन पर भी जिसका मुख सैकड़ों सूर्य की प्रभा से चमकता है। जिसके भाई ने उसे छोड़ दिया, जो देश के स्वाभिमान व स्वतंत्रता के लिए लड़ता रहा जिसके लिए अपना बलिदान भी दे दिया, आज हम उसी वीर की कहानी पढेंगे –

भाई ने भी छोड़ दिया
पर रखा देश का पानी है
पाठक! पढ़ लो उसी वीर की
हमने लिखी कहानी है।

कवि ने कविता के आरम्भिक पाँच सर्गों में हल्दीघाटी युद्ध के कारणों पर प्रकाश डाला है। ये कारण थे – महाराणा प्रताप से अपमानित शक्ति सिंह का प्रतिशोध लेने के लिए अकबर के साथ मिलना, अकबर द्वारा मीनाबाज़ार लगवाना और मेवाड़ की स्त्रियों की अस्मत को लूटना था, राणाप्रताप द्वारा मानसिंह का अपमान करना और मानसिंह के भीतर अपने अपमान का बदला लेने की भावना और पूरे हिंदुस्तान को अपने अधीन बनाने की अकबर की लालसा आदि हल्दीघाटी के युद्ध का कारण बनी।

हल्दीघाटी काव्य की पहली घटना है जिसमें महाराणा प्रताप और शेरसिंह दोनों शिकार खेलते समय अपनी राजपूती शान के कारण वैमनस्य पैदा होने की है। जिसके कारण क्रोध में राणाप्रताप ने अपना रिश्ता समाप्त करते हुए उसे मेवाड़ छोड़ने के लिए कहा जिसके कारण शेरसिंह को बहुत अपमान महसूस हुआ और वह फल चखाने की युक्ति के लिए अकबर के दरबार में जा पहुंचा। तो यहाँ बन्धु–विरोध इस युद्ध का एक कारण कह सकते हैं–

गया बन्धु, पर गया न गौरव
अपनी कुल परिपाटी का।
यह विरोध भी कारण है
भीषण–रण हल्दीघाटी का।।

दूसरा बड़ा युद्ध का कारण था अकबर का मीनाबाज़ार लगवाना और वहां मेवाड़ की स्त्रियों के साथ बदसलूकी करना था जिसकी खबर सुनते ही राणाप्रताप के म्यान से तलवार बाहर निकल जाती थी।

जब प्रताप सुनता था ऐसी
सदाचार की करूण पुकार।
रण करने के लिए म्यान से
सदा निकल पड़ती थी तलवार।।

अकबर की सम्पूर्ण हिन्दुस्तान को अपने अधीन करने की लालसा बढ़ती ही जा रही थी। वह अपने से श्रेष्ठ किसी राजा को स्वीकार नहीं कर पा रहा था। वह दीन–इलाही धर्म की आड़ में अपनी साम्राज्यवादी मनोवृत्ति को अंजाम दे रहा था। जिसे महाराणा प्रताप भलीभांति समझते थे। हल्दीघाटी युद्ध का कारण एक घटना और बनती है। जब अकबर ने अपने सेनापति मानसिंह को शोलापुर पर विजय हासिल करने के लिए भेजा था तो विजय प्राप्त करने के पश्चात् लौटते हुए मानसिंह राणा प्रताप के पास इसलिए गया कि यदि उसने ठीक से मेरी खातिरदारी की तो ठीक वरना उसे भी रण क्षेत्र में जीत लूंगा। इस समय मानसिंह अपनी विजय की खुमारी में डूबा हुआ था। राणा प्रताप ने अपने बेटे को भेजकर उसका स्वागत करवाया किंतु स्वयं बीमारी का बहाना लेकर भोजन करने नहीं आए। इसे मानसिंह ने अपना घोर अपमान माना और राणा प्रताप को क्रोध में आकर चेतावनी दे डाली –

कुशल नहीं राणा प्रताप का
मस्तक की पीड़ा से।
भहर उठेगा अब भूतल,
रणचण्डी की क्रीड़ा से।।

यह सुनकर राणा प्रताप ने बाहर आकर उच्चे स्तर से मानसिंह को धिक्कारा और बोले –

जो रण को ललकार रहे हो
तो आ कर लड़ लेना।
चढ़ आना यदि चाह रहे
चित्तौड़ वीरगढ़ लेना।।
कहाँ रहे जब स्वतंत्रता का
मेरा बिगुल बाजा था
जाति–धर्म के मुझ रक्षक को
तुमने क्या समझा था।।

मानसिंह का यह अपमान हल्दीघाटी की लड़ाई का मुख्य कारण था –

राणा द्वारा मानसिंह का
यह जो मान–हरण था
हल्दीघाटी के होने का
यही मुख्य कारण था।।

इसके अलावा हिंदू राजा एक के बाद एक मजबूरी में अकबर के अधीन होते जा रहे थे। उसके साथ रोटी–बेटी का संबंध स्थापित करते जा रहे थे। कवि ने यह लिखा है कि सम्पूर्ण हिंदुस्तान का बादशाह होने पर भी तमाम राजा–महाराजाओं के चरणों में गिरे रहने के पश्चात भी अकबर का यह अरमान था कि कब वह राणाप्रताप को अपने अधीन कर पाएगा –

तो भी कहता था सुल्तान
पूरा कब होगा अरमान।
कब मेवाड़ मिलेगा आन
राणा का होगा अपमान।।

राणा प्रताप के शौर्य से अकबर वाकिफ था जिस वजह से उसके भीतर ईर्ष्या भरी हुई थी। वह चाहता था कि मानसिंह की ही तरह राणा प्रताप भी अपना मुकुट को झुकाकर उसको सम्मान प्रदान करे। राणा प्रताप ने उसकी इच्छा पूरी नहीं होने दी और स्वाधीनता संघर्ष छेड़ दिया। युद्ध–स्थल में राणा प्रताप के घोड़े, भाले और तलवार की अहम भूमिका का वर्णन भी इस महाकाव्य में किया गया है कि किस प्रकार ये राणाप्रताप के सहयोगी रहे हैं और इनकी भूमिका किसी बहादुर सैनिक से कम नहीं रही है। उनके चेतक नाम के घोड़े ने अपनी अद्‌भुत और रोमांचकारी प्रतिभा का परिचय दिया था –

रणबीच चौकड़ी भर–भरकर
चेतक बन गया निराला था।
राणा प्रताप के घोड़े से
पड़ गया हवा का पाला था।।

इसी प्रकार उनकी तलवार की बहादुरी का वर्णन भी किया गया है –

लहराती थी सिर काट–काट
बन खाती थी भू पाट–पाट।
बिखरती अवयव बाट–बाट
तनती थी लोहू चाट–चाट

तलवार की तरह ही भाला भी अपने जोश का परिचय देते हुए इतिहास में अपनी उपस्थिति दर्ज करता है –

तनकर भाला भी बोला उठा
राणा मुझको विश्राम न दे।
वैरी का मुझसे ह्रदय गोथ
तू मुझे तनिक आराम न दे।।

इस काव्य के कुल सत्रह सर्गों में से आरम्भ के पाँच सर्गों में युद्ध के कारण तथा बाकी शेष सर्गों में मानसिंह का अकबर के दरबार में जाकर अपने अपमान का बयान, अकबर का राणा प्रताप पर चढ़ाई करने के लिए शेरसिंह और मानसिंह को आदेश देना, राणा प्रताप का युद्ध के लिए सेना तैयार करना, मानसिंह का आक्रमण, भीलों द्वारा पकड़ा जाना, राणा प्रताप द्वारा उन्हें मुक्त करना, हल्दीघाटी में राणा और मानसिंह का भीषण युद्ध, चेतक का रण कौशल, चेतक का निधन, राणा का परिवार के साथ जंगल में भाग जाना, जंगल में निवास करते समय भी चुनौतियों, राणा का अकबर को संधि पत्र लिखना और रानी का विरोध करना, राणा प्रताप को प्रभूत सम्पत्ति देकर भामाशाह द्वारा मदद करना और इसके पश्चात् एक वर्ष बाद ही अपने सभी गढ़ों को पुनः जीत लेना आदि घटनाओं का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है।

इस काव्य को पढ़कर ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे सब हमारे समक्ष घटित हो रहा है। हमारी भावनाएं अपने आप राणा प्रताप के प्रति जुड़ जाती हैं। 'हल्दीघाटी' एक ऐसी कविता है जो युगों–युगों तक भारतीय वीरों की शौर्य गाथा को गाती रहेगी और संकट आने पर भारत के पौरुष को जगाएगी।

जौहर

राष्ट्रवादी कवि श्यामनारायण पाण्डेय ने जौहर की रचना भारतीय स्त्रियों में सतीत्व का भाव भरने के लिए की थी और साथ उन्हें सन्मार्ग पर चलने का संदेश देने के लिए भी। जौहर महारानी पद्मावती की हजारों स्त्रियों के साथ सती होने की कथा बयान करती है। महारानी पद्मावती ने इस घटना को अंजाम तत्कालीन सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी के नापाक इरादे को विफल करने के लिए दिया था। जौहर की संपूर्ण कथा पुजारी और पथिक के संवाद के रूप में लिखी गई है। पथिक अपनी राह भूलकर पुजारी से रानी पद्मावती की जौहर की कथा विस्तार से सुनाने का अनुरोध करना है। पुजारी बताता है कि पद्मावती चित्तौड़ के राजा रतन सिंह की पत्नी थी। दोनों बेहद सुंदर व दोनों में असीम प्रेम था। दोनों एक दूसरे के बिना एक पल दूर नहीं रह सके थे। अलाउद्दीन खिल्जी पद्मावती की सुंदरता का बखान सुनकर उसे पाने के लिए बेचैन हो गया। इसी बीच अलाउद्दीन और रतनसिंह के बीच युद्ध भी हुआ और अलाउद्दीन को हार का सामना करना पड़ा। अलाउद्दीन दिन–रात पद्मावती के ही सपने देखने लगा था जिससे विकल होकर उसके भीतर रतनसिंह को बंदी बनाने की कामना बढ़ती जा रही थी और यह कार्य उसके गुप्तचरों ने कर दिया। जिससे खुश होकर उन गुप्तचरों पर उसने हीरे जवाहारात की वर्षा कर दी। इसके पश्चात लक्ष्मणसिंह को पत्र भेजा गया कि रतन सिंह को तभी कैद से मुक्त किया जाएगा जब पदमिनी स्वयं यहाँ पर आएगी। इस समाचार से लक्ष्मण सिंह क्रोध से भर गया और बोला –

काम इतना बढ़ गया उस श्वान का
सिंहनी से ब्याह करना चाहता।
राजपूतों के लिए यह मौत है
वंश का मुँह स्याह करना चाहता।।

यह समाचार जब पद्मिनी को ज्ञात हुआ तो रानी ने अपने सैनिकों को युद्ध के लिए तैयार किया। रानी ने अलाउद्दीन को संदेश पहुँचवाया कि वह आने के लिए तैयार है किंतु वह अपनी सात सौ सहेलियों के साथ आएगी। अलाउद्दीन ने यह सहर्ष स्वीकार किया। वह पद्मिनी को शीघ्र पाने के लिए इतना विकल था किसी चाल को समझ न पाया। पद्मिनी 700 डोलियों में 700 सहेलियाँ नहीं बल्कि 700 वीर सैनिकों को हथियारों के साथ लेकर आई थी। अलाउद्दीन अपने वचन के अनुसार पद्मिनी के आने पर रतन सिंह को कैद मुक्त कर चुका था। पद्मिनी आखिरी बार रतन सिंह से मिलने के नाम पर उससे मिलीं और दोनों घोड़े पे सवार वहाँ से निकल भागे। 700 सैनिकों ने अलाउद्दीन को घेर लिया किंतु वह भी वहां से किसी तरह बच निकला। रतन सिंह के वीर सेनानी गोरा–बादल के नेतृत्व में यह युद्ध लड़ा गया। जिसमें गोरा शहीद हो गया। कुछ समय पश्चात् अलाउद्दीन ने पुनः चित्तौड़ पर आक्रमण कर विध्वंस कर डाला –

ध्वंस हो गया वीर नगर
गढ़ निर्जीव मसान हुआ।
भीषण गोलाबारी से
दुर्ग शिखर सुनसान हुआ।।

ऐसी स्थिति में पद्मिनी ने निश्चय किया कि वह अपने सतीत्व की रक्षा के लिए चित्तौड़ की नारियों के साथ जौहर ज्वाला में भस्म हो जाएगी और रतन सिंह ने भी युद्ध क्षेत्र में मर

मिटने का निश्चय किया। दोनों को किसी भी प्रकार से अलाउद्दीन के अधीन रहना स्वीकार नहीं था–

इसलिए मैंने निश्चय किया
जल मरूँगी वंश के अभिमान पर।
साथ ही पतिदेव ने भी तय किया
मर मिटेंगे गुहिल– कुल की आन पर।।

जब पद्मिनी सजधज कर जौहर के लिए चलती हैं तब रतन सिंह पद्मिनी से आखिरी बार मिलता है। दोनों भारी मन लेकर सदैव बिछुड़ने के दुख से मिलते हैं किंतु तमाम दुख और पीड़ा के बाद भी अपने कर्त्तव्य का पालन करते हैं और अपनी राजपूतानी शान को न झुकने देने के लिए दृढ़ संकल्प रहते हैं। रतन सिंह ने पद्मिनी से कहा –

बोला, न प्रिये देरी कर
व्रत भंग न होने पाए।
जो हो पर जौहर व्रत का
आदर्श न खोने पाए।।
मैं चला, साथ सखियों के
तू भी धीरे–धीरे चल।
मैं मिटूँ और तू भी तब
जौहर की ज्वाला में जल।।

जौहर जाती रानी को देख शुक–सारिका भी रानी से पिंजरे से बाहर निकालने का आग्रह करते हैं। रानी उन्हें मुक्त कर देती है और दोनों बाहर निकलकर अपने प्राण त्याग देते हैं क्योंकि वे भी चित्तौड़ के मान–स्वाभिमानी प्राणी थे। पद्मिनी इसके पश्चात् शिव–पार्वती पूजा अर्चना करते हुए ज्वाला के सामने खड़े होकर यह मांगती है–

मैं जलूँ तो राख को तू
दे उड़ा क्षिति से गगन पर।
पातकी रज हू न पाए।
नभ हिले मेरे निधन पर।।

दूसरी तरफ रतन सिंह लड़ते–लड़ते युद्ध क्षेत्र में शहीद हो जाता है और अलाउद्दीन लाशों के बीच से निकलते हुए पद्मिनी को ढूढ़ते हुए आगे बढ़ता है रास्ते में उसे एक वृद्धा मिलती है तो उससे वह पूछता है –

बोल उठा माँ से अभिमानी
कहाँ पद्मिनी रानी है।
मुझे महल का पता बता दो
मेरी विकल जवानी है।।

वृद्धा जवाब में जलती हुई चिता की ओर इशारा करती है। उस दृश्य को देखकर अलाउद्दीन घबरा जाता है उसे कुछ समझ नहीं आता है और वह बेहोश हो जाता है –

धूम–राशि से ज्योति–ज्योति से
निकली सती कटार लिये।
बड़ी अधम की ओर मौत–सी
आँखों में अंगार लिये।

इसके पश्चात् अलाउद्दीन के इस कुकर्म पर हिन्दू और मुसलमान दोनों ने ही उसके मुख पर थू–थू किया। यह कालिक उसकी आज तक धुल नहीं पाई है। –

हिन्दु–मुसलमान ही क्या, सब
थूक–थूक उस पर बोले।
पर नारी को गया छेड़ने,
धिक, पापी सेना को ले।।
तब से उसने कहीं न अपने
मुख की कालिख दिखलायी।
आए गये मेघ, पर कालिख
धुली न अब तक धुल पायी।।

श्यामनारायण पाण्डेय ने पद्मिनी के जौहर की यह कथा बहुत ही मार्मिकता के साथ व्यक्त की है। इस कथा में वीर रस और करूण रस की बहुलता है। यह कथा हमें रुलाती भी है और अपने देश–धर्म पर मर मिटने की प्रेरणा भी देती है। कथा में महारानी पद्मिनी के सतीत्व का संबंध सती–प्रथा से बिल्कुल नहीं है। महारानी ने यहाँ जिस जौहर व्रत का पालन किया है वह उदात्त जीवन–मूल्य पर आधारित है। महारानी पद्मिनी का जौहर राष्ट्र, कुल, जाति और पतिव्रत के लिए उत्साह के साथ किया गया उत्सर्ग है, जो कि भारतीय राजपूतों के गौरवशाली इतिहास में एक स्वर्णिम छाप छोड़ता है। यह एक ऐसा अध्याय है जिसके बिना राजपूतों का इतिहास अधुरा है। जौहर की पद्मिनी वीरता की प्रतिमूर्ति है। वह सोये हुए लोगों को जगाने, कर्त्तव्य मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है। जिस प्रकार चित्तौड़ के सैनिकों ने किले की रक्षा के लिए आत्मबलिदान का रास्ता चुना उसी प्रकार उनकी स्त्रियों ने अपने सतीत्व की रक्षा के लिए जौहर–ज्वाला में आत्माहुति का रास्ता चुना।

यह पूरी कथा सुनकर पथिक पुजारी से कहता है –

राख को शिर से लगाकर
पाप–ताप शमन करो तुम।
देवियाँ इसमें छिपी हैं
बार–बार नमन करो तुम।।

बोध प्रश्न –1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

1. 'हल्दीघाटी' काव्य इतिहास के किस पृष्ठ को खोलता है और भारतीयों को वीरता का पाठ किस प्रकार पढ़ाता है।

....

....

....

2. 'जौहर' काव्य में नारीत्व किस रूप में आया है?

....

....

....

13.4 श्यामनारायण पाण्डेय की राष्ट्रीय–सांस्कृतिक चेतना

श्यामनारायण पाण्डेय का रचनाकाल छायावाद से बीसवीं शताब्दी के नवें दशक (1989 ई) तक विस्तृत है। इसी समय देश की सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक परिस्थितियों में काफी उथल–पुथल हुई थी। इस बीच वे केवल राष्ट्रीयता को ध्यान में रखकर काव्य सृजन करते रहे। इस समय की रचनाओं में अधिकतर अतीत का गौरवगान, राष्ट्रीय प्रेम, मातृभूमि की रक्षा आदि के भाव प्रदर्शित होते रहे हैं किंतु अन्य कवियों से श्यामनारायण पाण्डेय का भिन्न दिखने का कारण 'आर्य धर्म', आर्य–संस्कृति, 'हिन्दू–धर्म और 'हिंदू–जाति' में निष्ठा है –

मैं आर्य धर्म का वीरपुजारी, अलग अकेला हूँ।
चाहे कुछ कहा, मगर सबके मुँह मेला हूँ।।

इस आर्य धर्म के वीरपुजारी को भारतीय जनता ने खूब स्नेह और मान–सम्मान दिया है।

उस समय पूरे देश में आजादी की लहर चल रही थी। यह लहर में व्याप्त था वीररस। छायावादी कविताओं का इस समय जोर था और उसी समय देश एक अपनी लड़ाई भी लड़ रहा था। उस समय कोयल की कूक, सरिताओं का निनाद और प्रेयसी की विरह–व्यथा पर तलवारों की छप–छप और घोड़ों की टाप ने ज्यादा श्यामनारायण पाण्डेय को प्रभावित किया। कवि ने सत्य और राष्ट्रीयता को जिस रूप में श्रद्धानुसार ग्रहण किया है उसे उसी रूप में जनता के सामने उन्होंने प्रस्तुत किया है। वे कहीं भी भयभीत होते नजर नहीं आते हैं। उन्होंने भारतीयों को गुलामी से मुक्त कराने के लिए जनता में आजादी की भावना व राष्ट्रीय चेतना जगाने और अपने धर्म व संस्कृति की रक्षा के लिए बलिदान देने का उत्साह भरने का पूर्ण प्रयास किया है। उस समय देश की स्थिति काफी द्वंद्वपूर्ण हो गई थी क्योंकि एक ओर सत्य और अहिंसा वाले गांधी जी थे और दूसरी ओर क्रांतिकारी सुभाषचन्द्र बोस थे। श्यामनारायण पाण्डेय महात्मा गांधी के नेतृत्व से संतुष्ट नहीं थे। वे पं. मदन मोहन मालवीय और सुभाषचंद्र बोस से प्रभावित थे। उन्हें सुभाषचन्द्र बोस का क्रांतिकारी मार्ग उचित लगता था इसी वजह से उन्हें महाराणा प्रताप का स्मरण होना स्वाभाविक है। वे लिखते हैं कि – 'उस संघर्षकाल में मुझे महाराणा प्रताप के वर्चस्वी व्यक्तित्व की याद आने लगी, हिनहिनाते हुए परम प्रतापी घोड़े की टाप सुनायी पड़ने लगी और ताण्डव करते हुए उनके भंयकर भाले के तेज की भभक से आँखें चौंधियाने लगीं। समाधि से महाराणा को जगाने की लालसा तीव्र हो उठी।' (आधुनिक कवि – 17, पृ. 7)। उनकी रचना हल्दीघाटी के मूल में स्वाधीनता–संघर्ष की पृष्ठभूमि है। कवि ने हल्दीघाटी में बताया है कि अकबर 'दीन–इलाही' धर्म के प्रचार से हिन्दू धर्म एवं जाति को समाप्त कर देने का प्रयास कर रहा था। इस मनोदशा को महाराणा प्रताप ने तुरंत भाप लिया था–

कूटनीति सुनकर अकबर की
राणा जो गिनगिना उठा।
रण करने के लिए शत्रु से
चेतक भी हिनहिना उठा।।

दूसरी तरफ देखें तो अकबर के पास धन–वैभव की कोई कमी नहीं थी। उसके साम्राज्य का विस्तार लगातार हो रहा था। लगातार हिन्दू राजा अकबर की अधीनता स्वीकार करते जा रहे थे। फिर भी अकबर राणा प्रताप को अपने अधीन बनाने के लिए व्याकुल था, उसके मन में बार–बार यह अरमान जाग उठता था –

तो भी कहता था सुल्तान
पूरा कब होगा अरमान।
कब मेवाड़ मिलेगा आन
राणा का होगा अपमान।।

'हल्दीघाटी' रचना ने देश की जनता में अपनी मातृ–भूमि के प्रति असीम प्रेम को जगाया और देश के प्रति बलिदान देने की भावना को दृढ़ किया। महाराणा प्रताप के साथ उनके स्वाधीनता सेनानियों ने स्वर मिलाया –

जब तक स्वतन्त्र यह देश नहीं
है कट सकता नख केश नहीं।
मरने कटने का क्लेश नहीं
कम हो सकता आवेश नहीं।।

इसी प्रकार राष्ट्रीय भावना हमें जौहर कविता में देखने को मिलती है। यह आभास होता है कि चित्तौड़ के सेनानियों को दिया गया राष्ट्र रक्षा के लिए उद्‌बोध–सन्देश मानों अंग्रेजी शासन के खिलाफ भारतीय जनता को दिया जागृति–संदेश ही है–

जगो तुम्हारी जन्मभूमि को
रौंद लुटेरे लूट रहे।
उठो तुम्हारी मातृभूमि के
जीवन के स्वर टूट रहे।।

अतीत की कथा को इस प्रकार चित्रित करना की वह प्रासंगिक लगे और वर्तमान में जनता के भीतर राष्ट्रीय चेतना को भरे ऐसी कला में श्यामनारायण पाण्डेय दक्ष हैं। उनकी रचनाएं इस दक्षता का उदाहरण हैं। वे भारतीय जनता में खोये हुए गौरव को पुनः प्राप्त करने का मार्ग दिखाते हैं। उन्होंने राम, परशुराम, हनुमान, वशिष्ठ, महाराणा प्रताप और शिवाजी जैसे धर्म निष्ठ, धीरोदाप्त, आचारवान और पराक्रमी अवतारी पुरुषों आदि ऐतिहासिक चरित्रों को अपने काव्यों में चित्रित कर अपनी श्रेष्ठ संस्कृति और गौरवशाली इतिहास को भारतीय जनता के समक्ष अनुकरणीय आदर्श के रूप में प्रस्तुत किया।

श्यामनारायण पाण्डेय के काव्य 'शिवाजी' में भी शिवाजी भी अपने सैनिकों के सामने राष्ट्र के प्रति ईमानदारी की बात करते हैं। वह कहते हैं कि बन्दी स्वदेश को मुक्त कराने के लिए जो धर्म–युद्ध छेड़ा है इसमें किसी भी प्रकार के स्वार्थ का स्थान नहीं है –

रज–राज–ताज के लिए न युद्ध ठाना गया
युद्ध है
स्वधर्म हित
जति हित

देश हित
देश हित
आर्य वर्ण–वेश हित
बन्दी है स्वदेश उसे मुक्त करने के लिए।
चलो साथ दो
साहस दो
हाथ दो।

श्यामनारायण पाण्डेय की केवल कुछ रचनाएं नहीं अपितु उनका सम्पूर्ण साहित्य ही राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत है। इनके साहित्य को गंभीरता से पढ़ लेने के पश्चात् कोई भी पाठ देश के प्रति अपना तन–मन न्यौछावर करने में बिल्कुल संकोच नहीं करेगा। कवि ने इतिहास और पुराण के अनुकरणीय चरित्रों का वर्णन करके स्त्री और पुरुष दोनों को त्याग, सदाचार, बलिदान आदि का पाठ पढ़ाने को प्रयास किया है। डॉ. शिवकुमार मिश्र श्यामनारायण पाण्डेय की राष्ट्रीय भावना के परिपेक्ष में लिखते हैं कि–'आपकी वाणी में आज, ललकार अथवा पौरुष अवश्य है, पर भावनाएँ बहुधा ही साम्प्रदायिक परिधि में घिर जाने के कारण समस्त राष्ट्र को अभिव्यक्त नहीं कर सकी हैं, वे उस मार्ग का सम्यक् अनुसरण करने से पिछड़ गयी हैं, व्यापक आधारों को लिए हुए हमारा राष्ट्रीय आन्दोलन जिस पर गतिशील हो रहा था। यदि यह कहें कि आपने हिन्दू राष्ट्रीयता को स्वर दिया है तो अव्युक्ति न होगी। (नया हिंदी का काव्य, शिवकुमार मिश्र, पृ. 64–65)

श्यामनारायण पाण्डेय ने जिन ऐतिहासिक–पौराणिक चरित्रों को केन्द्र में रखकर राष्ट्रीय–सांस्कृतिक चेतना का प्रसार किया था उसमें हिंदू–मुस्लिम एकता को रेखांकित करने की गुंजाइश नहीं थी। यह एकता स्वाधीनता संघर्ष के समय नजर आती है। किंतु फिर भी भीतर–भीतर गहरी फाँक थी जिसके परिणामस्वरूप आजादी के बाद पाकिस्तान बना। अधिकतर कवियों की ही तरह श्यामनारायण पाण्डेय ने हिंदू राष्ट्रीयता और हिंदू संस्कृति का ही बखान किया। इन्होंने मुस्लिम जनता की नहीं बल्कि मुस्लिम शासन की आलोचना की। यह हम हल्दीघाटी में देखते हैं। राणा प्रताप का विरोध केवल अकबर की साम्राज्यवादी मनोवृति से था। राणा–प्रताप ने अकबर के खिलाफ जाकर हिंदूओं के मान–सम्मान की रक्षा की। इसी प्रकार शिवाजी काव्य में हम देखते हैं कि शिवाजी ने आदिलशाह के शासन में हिन्दुओं पर होने वाले अत्याचारों और गोहत्याओं का तार्किक ढंग से विरोध किया। इसके साथ यह भी शिवाजी के संबंधित उल्लेखनीय है कि वे मंदिर और पुजारी के पक्षधर होते हुए भी अपने विजय अभियान के दौरान कभी भी उन्होंने किसी मस्जिद को क्षति पहुँचाने प्रयास नहीं किया –

जैसी आज्ञा थी मस्जिद की
एक ईंट भी छुई नहीं
स्त्री–कुरान की यवन धर्म की
कहीं अवज्ञा हुई नहीं।

शिवाजी की यही निष्ठा और सदाचार जन–जन को प्रभावित करता था। जिसके कारण उनके व्यक्तित्व की हिंदू–मुसलमान दोनों ही प्रशंसा करते थे।

अतः कह सकते हैं कि श्यामनारायण पाण्डेय ऐतिहासिक पात्रों के जरिए वर्तमान समाज को

अच्छे कर्म करने और सदमार्ग पर चलने की प्रेरणा देते हैं और अपने राष्ट्र पर मर–मिटने के लिए उनके भीतर उत्साह का संचार करते हैं।

बोध प्रश्न –2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

1. श्यामनारायण पाण्डेय की राष्ट्रीय चेतना पर प्रकाश डालिए।

....

....

....

2. किन रचनाओं के माध्यम से श्यामनारायण पाण्डेय ने भारतीयों की चेतना जागृत करने का प्रयास किया है और किस प्रकार?

....

....

....

13.5 श्यामनारायण पाण्डेय की भाषा शैली

सुप्रख्यात राष्ट्रवादी कवि श्यामनारायण पाण्डेय की काव्य भाव को प्रथक रूप से संचालित करने में मुख्य भूमिका उनकी भाषा की है। उनकी रचनाओं में एक तरफ तो गौरवशाली अतीत को हम देखते हैं और दूसरी ओर उनका काव्य आम जनता में राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष हेतु जोश पैदा करता है। श्यामनारायण पाण्डेय का रचनाकाल छायावादी युग से लेकर बीसवीं शताब्दी के नवें दशक (1989 ई.) तक का है। छायावाद की रूमानी प्रवृत्ति के बावजूद इनकी कविताओं में वीर रस की प्रधानता है। इनका काव्य सृजन लगभग साठ वर्षों का रहा है। वे अपनी रचनाओं का आधार उनकी राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना में किसी भी प्रकार का बदलाव, भटकाव या मिश्रण नजर नहीं आता है। उन्होंने देश की जनता में अपने देश के उद्धार के लिए त्याग, बलिदान और साहस के अटूट भाव पैदा करने के लिए अपने काव्य में पुराण के वीरों, योद्धाओं और बलिदानियों के शौर्यपूर्ण योगदान को चित्रित किया है। ये रचनाएं देश की जनता को प्रेरणा देती हैं –

'स्वतन्त्रता के लिए मरो' राणा ने पाठ पढ़ाया था।
उसी वेदिका पर वीरों ने अपना शीश चढ़ाया था।।
तुम भी तो उनके वंशज हो, काम करो, कुछ नाम करो।
स्वतन्त्रता की बलिवेदी है, झुककर इस प्रणाम करो।

हल्दीघाटी, पृ. 19

हिंदी साहित्य में श्यामनारायण पाण्डेय ने अपने आप को वीर कवि के रूप में प्रतिष्ठित किया है। जहाँ उन्होंने एक ओर हल्दीघाटी, जौहर और शिवाजी जैसे ऐतिहासिक प्रबन्ध–काव्य लिखे हैं वहीं दूसरी ओर जय हनुमान, परशुराम और वरिष्ठ जैसे पौराणिक खण्डकाव्यों की रचना करके वीर रस के प्रति अपने अनुराग को व्यक्त किया है। कवि का लेखन उद्देश्य

केवल राष्ट्र का उद्धार और निर्माण मात्र है। श्यामनारायण पाण्डेय ने राष्ट्रीय–सांस्कृतिक चेतना को आधार बनाकर वीररसात्मक काव्य लेखन से हिंदी साहित्य में अपनी एक अलग पहचान बनाई है।

इनकी रचना हल्दीघाटी में वीर रस को अद्‌भुत तरह से देखने को मिलता है –

निर्बल बकरों से बाघ लड़े
भिड़ गये सिंह मृगछौनों से।
घोड़े गिर पड़े गिरे हाथी
पैदल बिछ गये बिछौनों से।

कवि की भाषा की खूबसूरती यह है कि रस, छंद, अलंकार आदि का प्रयोग करने के पश्चात् भी उनकी भाषा में सहजता नजर आती है, और कहीं–कहीं तो भाषा अत्यंत सहज हो आई है, जैसे 'जय हनुमान' से एक उद्धरण देखते हैं जब अशोकवाटिका में हनुमान उत्पात मचाते हैं तो अक्षयकुमार की प्रवाहपूर्ण भाषा का प्रयोग इस प्रकार देखने को मिलता है –

उस उत्पाती बानर को,
बरजोरी आज झटक दूँगा।
पूँछ पकड़कर अभी आपके
सम्मुख यही पटक दूँगा।

कवि ने अलंकारों का प्रयोग करके भाषा को अत्यंत खूबसूरत बनाने का प्रयास किया है। श्यामनारायण पाण्डेय ने अधिकतर उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, प्रतीप, व्यतिरेक आदि जैसे अलंकार का भरपूर प्रयोग किया है।

श्यामनारायण पाण्डेय छन्द विधान की दृष्टि से भी उच्च कोटि के काव्य की रचना करते हैं। इन्होंने बड़ी ही कुशलता से छंदों का प्रयोग किया है। इन्होंने विभिन्न–विभिन्न भावों के अनुसार छंदों का प्रयोग किया है। जैसे 'मधुमालती', 'ताटंक' 'सरसी। 'हरिपद', 'हरिगीतिका', 'विधाता', 'सार', 'मनोरमा', 'चौपाई', 'चौबोला' आदि छंदों का प्रयोग करके उन्होंने अपनी प्रतिभा का उत्तम परिचय दिया है।

इनके काव्य में मुक्त छंद के भी कई उदाहरण आपको नजर आएंगे। प्रसंगानुकूल इनका प्रयोग किया गया है –

साथियों, प्रसन्न रहो साहसिक जीवन हो
रुचि हो स्वधर्म में
स्वजाति में स्वराष्ट्र
रज–राज–ताज के लिए न युद्ध ठाना गया
युद्ध है
स्वधर्म हित
जाति हित
देश हित
आर्य वर्ण–वेश हित।

हम इनकी भाषा–शैली को गहनता से देखें तो यह द्विवेदी युगीन विशेशताओं से युक्त दिखाई देती है। इनकी भाषा प्रसंगानुसार बदलती नजर आती है। इस प्रसंग से संबंधित ये पृष्ठभूमि बनाते हैं उसी के अनुसार इनकी भाषा समासयुक्त, तत्समबहुला और अलंकृत होती नजर आती है। 'जय हनुमान' पर दृष्टि डालें तो सामासिक और अलंकृत पदावली भिन्न–भिन्न स्थान पर नजर आती है–

चन्दन–भाला–समलंकृत
कोई रमणी–छवि–रत था
कोई हँसता गाता तो
कोई संगीत निरत था।

'परशुराम' काव्य में हमें इनकी भाषा का तत्सम रूप भी नजर आता है 7

पावन त्रिपुण्ड से दीप्त काल
संक्षरित गात से किरण जाल
तप प्रखर तेज से दीप्तिमान
भू अन्तरिक्ष का अन्तकाल।

श्यामनारायण पाण्डेय के सम्पूर्ण काव्य को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि वीरकाव्य लिखते–लिखते अंतिम चरण में उनके भीतर दार्शनिक चेतना प्रबल हो उठी थी। वह परमशक्ति को अपने देश के उद्धार के लिए पुकारता नजर आता है–

हे राम, हे अभिराम
तू कृतकृत्य कर अवतार सें
दबती निरन्तर जा रही है
मेदनी अध–भार से।।

एक तरह से कह सकते हैं कि अपने देश, जाति, धर्म, संस्कृति के अभिमान से युक्त कवि ने परमशक्ति के चरणों में अंतिम क्षणों में अपने इसी अभिमान को अर्पित कर दिया।

बोध प्रश्न–3

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

1. श्यामनारायण पाण्डेय की भाषा शैली पर विचार कीजिए।

....

....

....

अभ्यास–1

1. राणाप्रताप का चरित्र चित्रण कीजिए।

....

....

....

2. रतन सिंह के व्यक्तित्व की विशेशताएं बताएं।

....

....

....

3. महारानी पद्मिनी के सतीत्व से क्या अभिप्राय है?

....

....

....

13.6 सारांश

श्यामनारायण पाण्डेय राष्ट्रीय काव्यधारा के एक महत्वपूर्ण कवि हैं। इनके काव्य में अतीत का गौरवगान राष्ट्रीय चेतना, देशोद्धार का संकल्प, मातृभूमि की रक्षा के लिए बलिदान देने की भावना के साथ–साथ देश की संस्कृति के प्रति विशेष अनुराग व आर्य संस्कृति, आर्य–धर्म, हिन्दू–धर्म, हिन्दू–जाति के प्रति विशेष निष्ठा नजर आती हैं। उनकी हल्दीघाटी और जौहर दोनों की अमर रचनाएं हैं। 'हल्दीघाटी' रचना भारतीयों के अंदर जोश भरने और वीरत्व का पाठ पढ़ाती है और 'जौहर' रचना भारतीय नारियों को 'सतीत्व' का पाठ पढ़ाती है। यहाँ 'सतीत्व' का अर्थ 'सती प्रथा' से नहीं है। इनके अलावा कवि ने स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात चरित्र के उत्थान और राष्ट्रीय संस्कृति के निर्माण के लिए बालि वध, वशिष्ठ, जय हनुमान और परशुराम जैसे काव्यों की रचना की है। कवि अपनी सरल व प्रभावपूर्ण भाषा से भारतीय जनता तक आसानी से पहुंचता है और उनके भीतर जोश पैदा करता है। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी की देश में जब भी अत्याचार, अनीति व कुशासन हावी होगा तब तक श्यामनारायण पाण्डेय के काव्य–ग्रन्थ उसका विरोध करने के लिए राष्ट्रीयता, वीरता, ईमानदारी के शस्त्रों का इस्तेमाल करके लोगों के भीतर जोश उत्साह व बलिदान देने की क्षमता का संचार करेंगे। निःसन्देह ही श्यामनारायण पाण्डेय आधुनिक काल के कभी न भुलाए जाने वाले कवि हैं।

13.7 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न – 1

1. 13.3 को देखिए
2. 13.3 को देखिए

बोध प्रश्न – 2

1. 13.4 को देखिए
2. 13.4 को देखिए

बोध प्रश्न – 3

1. 13.5 को देखिए

अभ्यास – 1

1. 13.3 एंव 13.4 को देखिए

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY